हिमज्योति

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
भीमताल - 263136, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत

हिमज्योति

2019

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल - 263136, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत

भा.कृ.अनु.परि.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

सम्पादन
डा. नीतू शाही
श्री अमित कुमार जोशी

हिन्दी अनुवाद
श्री अमित कुमार जोशी

टंकण
वन्दना बिष्ट

आवरण पृष्ठ
दासारी भूमैय्या, भा.कृ.अनु.परि.–सी.आई.एफ.ई., मुम्बई

संकल्पना, मार्गदर्शन एवं प्रकाशक
डा. देबाजीत सर्मा
निदेशक
भा.कृ.अनु.परि.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल –263136, जिला–नैनीताल (उत्तराखण्ड)

रूपरेखा एवं मुद्रण
मैसर्स रॉयल ऑफसेट प्रिंटर्स, ए–89/1,
नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली–110028

अनुक्रमणिका

1. मत्स्य पालन 1

पहाडों में मत्स्य पालन एवं मात्स्यिकी 3
सुमन्त कुमार मल्लिक, रविन्द्र सिंह पतियाल, प्रेम कुमार एवं अभय गिरी

रेन्बो ट्राउट मछली का संवर्धन 6
नित्यानन्द पाण्डेय

मत्स्य पालन एक उभरता रोजगार 11
अनुराग सेमवाल, तरंग शाह, दीपक अग्रवाल एवं शुभम वासने

पर्वतीय मात्स्यिकी की महत्वपूर्ण ट्राउट प्रजातियाँ 13
कृपाल दत्त जोशी

पर्वतीय क्षेत्रों में एक्वापौनिक्स द्वारा किसानों की सम्पन्नता 18
विपिन कुमार विश्वकर्मा, नित्यानंद पाण्डे, 'हरीश चन्द्र सिंह बिष्ट एवं सन्तोष कुमार

एकीकृत मत्स्य पालन 20
लक्ष्मी प्रसाद, आशीष कुमार मौर्या एवं दिनेश कुमार

रंगीन मछली पालन हेतु एक्वेरियम निर्माण 24
शिव कुमार शर्मा

जलवायु परिवर्तन एवं मत्स्य उद्योग पर उसके प्रभाव 28
सहर नाजिम एवं अमित पाण्डे

सुनहरी महाशीर (टौर प्युटिटौरा): प्रजनन, बीज उत्पादन एवं हैचरी प्रबंधन 31
देबाजीत सर्मा, मोहम्मद शहबाज अख्तर एवं सीजी एलैक्जैंडर

प्रवासी हिमालयन महासीर का अस्तित्वः प्रवसन एक पहलू 42
प्रकाश नौटियाल

ब्राउन ट्राउट (साल्मोट्रूटा फेरियो, वर्ग 1908) 44
शुभम कश्यप, अभिषेक वर्मा, उपेन्द्र सुमन, एवं विकास कुमार

पूर्वोत्तर भारत की औरनामेंटल मछलियों के रूप में स्वदेशी मछलियों की संभावनायें 46
सोना यांगोपम एवं दीपेश देबनाथ

पूर्वोत्तर राज्यों की रंगीन मछलियों की जैव विविधता का संरक्षण तथा पालन एवं प्रजनन को बढावा देने हेतु प्रयास 49
सैय्यद गुलमस सईउद्दीन ज़ैदी एवं देबाजीत सर्मा

अनुक्रमणिका

	कार्प बीज के लिए नर्सरी तालाब प्रबंधन तरंग कुमार शाह, रितेश तंडेल, प्रज्ञा दास, राजा आदिल, परवेज अहमद गनी एवं शुभम वासने	52
	उत्तराखण्ड क्षेत्र में त्रिस्तरीय मत्स्य पालन : एक अनुभव रविन्द्र सिंह पतियाल एवं ममता जोशी	55
2.	**पोषण**	**59**
	मछली का पौषणिक महत्व देबाजीत शर्मा, पार्था दास, प्रकाश शर्मा, मोहम्मद शहबाज अख्तर एवं सीजी एलैकजेंडर	51
	रेन्बो ट्राउट का पोषण एवं आहार राजेश माची, सीजी अलैक्जेंडर, बीजू सैम कमलम, प्रकाश शर्मा एवं मौहम्मद शहबाज़ अख्तर	58
3.	**रोग**	**71**
	जलीय कृषि में क्रिस्पर कास की उपयोगिता आनन्द कुमार एवं अमित पांडे	73
	शीतजल मात्स्यिकी के परजीवी रोग मृदुला बिष्ट एवं अमित पाण्डे	76
	कार्प मछलियों में होने वाली बीमारियाँ, लक्षण एवं उपचार राजीव कुमार ब्रह्मचारी, अनिरूद्ध कुमार एवं शिवेन्द्र कुमार	80
	एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधक –विश्व में कीटाणुओं में उभरती हुई एक गंभीर समस्या नीतू शाही, सुमन्त कुमार मल्लिक, कुशाग्र पंत एवं मनीषा गुप्ता	83
	रेन्बों ट्राउट की आँख और मुँह की बीमारी लक्षण, कारण और उपचार सुरेश चन्द्रा	85
4.	**संरक्षण**	**89**
	देवभूमि में मछलियों का संरक्षण शिवम सिंह, नुपूर जोशी, मनीषा गुप्ता, कुशाग्र पन्त एवं कृष्णा काला	91
	भारत में पारिस्थितिकी–पर्यटन एवं मनोरंजनात्मक मात्स्यिकी दीपज्योति बरूआ, टमल भट्टाचार्या, मनीष दुबे, प्रकाश शर्मा, पार्था दास एवं देबाजीत शर्मा	94

अनुक्रमणिका

5. प्रसंस्करण **101**

मछलियों के मूल्य वर्धित उत्पाद 103
लक्ष्मी प्रसाद एवं जगपाल

भारत में मत्स्य पालन व मात्स्यिकी में महिलाओं की भूमिका 106
नीतु शाही एवं नुपुर जोशी

6. अन्य **109**

मछली अंकित सिक्के : एक विहंगम दृष्टि 111
रमेश सोमवंशी

राष्ट्र–भाषा विकास की संभावनायें 118
मुरारी लाल सारस्वत

मधु की गुणवत्ता प्रबन्धन प्रणाली 121
एच.सी. तिवारी

कसावा कटाई में मशीनीकरण की आवश्यकताऐं 124
दीपक थोरात, बिक्रमज्योती, ए.पी. पंदिरवार एंव हिमांशु पाण्डेय

हिन्दी भाषा में क्रिया और उसके मुख्य भेद 126
अमित कुमार जोशी

7. कविता **129**

नदियाँ है अमृत की धारा 131
कृष्णा काला

काँच के घर 132
प्रेरणा शर्मा

संरक्षण 133
ज्योति पाण्डे

8. कार्टून **135**
परवीन पुत्र 137

संपादकीय

ऐसे तो अंग्रेजी भाषा की विभिन्न पुस्तकों, शोध प्रत्रिकाओं आदि में अलग–अलग बिखरी सामग्रियां उपलब्ध होती हैं परन्तु हिन्दी में ऐसी कोई पुस्तक नही है जिसमें मत्स्य पालन के विभिन्न पहलुओं पर एक जगह वांछनीय सामग्री मिल सके और जिनसे शोधार्थियों को आवश्यक जानकारी प्राप्त हो सके। इस अभाव की पूर्ति की दृष्टि हेतु संस्थान के वैज्ञानिकों ने कुछ सराहनीय प्रयास किये है।

यह निदेशालय एक ऐसी संस्था है जहां शीतजल की विभिन्न मत्स्य प्रजातियों पर अनुसंधान कार्य किऐ जाते है साथ ही इस निदेशालय के वैज्ञानिको के निर्देशन में विभिन्न छात्र–छात्राओं को अनुसंधान कार्य कराये जाते है। हम सभी को ज्ञात है कि कृषि वैज्ञानिकों और किसानों के बीच की दूरी को कम करने में हिन्दी व अन्य भारतीय भाषाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस संस्थान ने अपने इस दायित्व का निर्वाह भी पूर्णरूप से किया है। इस संस्थान ने मत्स्य पालन की नई–नई तकनीकों के प्रचार–प्रसार के लिए हिन्दी के महत्व को आत्मसात करते हुए ज्ञान–विज्ञान के अनुसंधान एवं परिणामों के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग को विशेष महत्व दिया है। संस्थान की वेबसाइट द्विभाषी रूप में सुलभ है और बड़ी संख्या में किसान इसका लाभ उठा रहे हैं। किसी देश की अस्मिता उसकी भाषा व संस्कृति से जुड़ी होती है। सौभाग्य से हमारा देश भाषा एवं सांस्कृतिक दृष्टि से एक समृद्ध राष्ट्र है। देश के अधिकांश कृषक समुदाय, अनुसंधान कर्मियों एवं प्रसारकार्मिकों से सीधे जुड़ने का माध्यम उनकी ही भाषा में प्रकाशित पत्रिकांऐं है। राजभाषा पत्रिका ''हिमज्योति'' का प्रकाशन ऐसे ही प्रयासों की कड़ी है। इस पत्रिका में संस्थान के वैज्ञानिकों एवं मत्स्य विशेषज्ञों द्वारा सरल भाषा में लिखे उपयोगी वैज्ञानिक जानकारी से सराबोर लेखों को शामिल किया गया है जिससे पर्वतीय क्षेत्र के किसानों की आजीविका में वृद्धि करने में मदद मिलेगी।

सम्पादक मण्डल

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

ICAR-Directorate of Coldwater Fisheries Research

अनुसंधान भवन, औद्योगिक क्षेत्र, भीमताल–263 136, नैनीताल (उत्तराखण्ड)

Anusandhan Bhawan, Industrial Area, Bhimtal-263 136, Nainital (Uttarakhand)

An ISO 9001 : 2008 Certified

निदेशक की कलम से

मत्स्य पालन हमारे देश के आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन के अनुसंधान एवं विकास के उद्देश्य से शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल की स्थापना की गई है। इस निदेशालय द्वारा भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में सतत् मत्स्य उत्पादन में वृद्धि हेतु विभिन्न अनुसंधानात्मक एवं विकासात्मक कार्यों की पहल की गयी है। अपने अनुसंधान कार्य मात्र प्रयोगशालाओं तक ही सीमित न रहें, अतएव वह प्रयोगशालाओं से निकलकर कृषकों के तालाबों तक पहुंचे और अधिक से अधिक किसान उन अनुसंधानात्क प्रविधियों को अपने व्यवहार में ला सकें। यह देखना होगा कि ज्ञान का यह प्रवाह एक ही दिशा में सीमित न रहे। इसके लिए यह जरूरी हो जाता है कि अनुसंधान तकनीकियों की जानकारी किसानों तक उनकी ही भाषा में तत्परता से पहुंचे, ताकि हमारे पर्वतीय क्षेत्र के किसान भाई इन तकनीकियों का लाभ अपनी खेती के दौरान उठा सके। ऐसा करके निश्चित रूप से हम शीतजल मत्स्य उत्पादन को नई उंचाईयों तक पहुंचा सकेंगे। पर्वतीय क्षेत्रों के शीतजल स्त्रोतो में संस्थान ने लुप्तप्राय सुनहरी महासीर के पुर्नवासन एव संरक्षण के साथ–साथ शीतजल की अन्य मत्स्य प्रजातियों यथा स्नो ट्राउट, कार्प प्रजातियां एवं सजावटी मत्स्य प्रजातियां का भी सफलतापूर्वक रैंचिंग, पुर्नवासन, सरंक्षण कार्य एवं इन प्रजातियों के उत्पादन में सफलता प्राप्त की है। आजीविका निर्वहन हेतु अन्य कृषि व्यवसायों के साथ–साथ मत्स्य पालन की ओर लोगों का रूझान बढ़ रहा है। मछली पालन पर्वतीय क्षेत्रों में न केवल उत्पादकता विविधिकरण, खाद्य एवं आर्थिक सुरक्षा प्राप्त करने में सहायक है, बल्कि जल के विवेकपुर्ण संचय के साथ जलीय संसाधनों के संर्वधन में भी उपयोगी है। पर्वतीय राज्य विषम भौगोलिक संरचनाओं के साथ–साथ संवेदनशील पारस्थितिकी के चलते अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाते हैं। हिमालयी क्षेत्रों की जलवायु एवं क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय ने आर्थिक रूप से उपयोगी पालन योग्य मत्स्य प्रजातियों की पहचान कर इनके प्रजनन, पालन एवं बीज उत्पादन बिधियों का विकास किया है। कृषकों व देश की साधारण जनता से और अधिक निकट संपर्क में आने का एक माध्यम हमारे हिन्दी प्रकाशन हैं। इसी क्रम में गृह पत्रिका (हिमज्योति) का प्रकाशन विशेष महत्व रखता हैं क्योंकि इसमें मत्स्य पालन से सम्बन्धित सभी नवीनतम एवं आवश्यक जानकारियों का समावेश किया गया है।

मुझे प्रसन्नता है कि हमारे वैज्ञानिक हिन्दी में मौलिक लेखन कर रहे हैं और यही इस पत्रिका का उद्देश्य है। सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग हमारी राष्ट्रीय गौरव की भावना को दर्शाता है।

अभी हाल ही में संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा संस्थान में राजभाषा कार्यों का निरीक्षण करते हुए बहुमूल्य सुझावों के साथ–साथ संस्थान में किए जा रहे हिन्दी कार्यान्वयन की सराहना की गई है। इस हेतु मैं संस्थान के सभी सदस्यों को उनके योगदान के लिए धन्यवाद देता हूँ। राजभाषा कार्यान्वयन एवं हिमज्योति पत्रिका की सफलता के लिए मैं संस्थान के वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी हिन्दी एवं सदस्य सचिव राजभाषा कार्यान्वयन समिति श्री अमित कुमार जोशी एवं राजभाषा कार्य से जुड़े अन्य कार्मिकों को बधाई देता हूँ। हमें आशा है कि हिमज्योति पत्रिका का यह अंक पाठकों के ज्ञानवर्धन करने में सहायक सिद्ध होगा तथा भविष्य में इनसे भी अच्छे लेख आदि लिखने के लिए प्रेरणा करेगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि अपने पिछले अंकों की ही भांति पत्रिका का यह अंक भी न केवल अपने उद्देश्य को पूर्णता में साकार करेगा वरन् देश के अनुसंधानकर्मियों एवं कृषक समुदाय को सीधे लाभान्वित करने के साथ–साथ परिषद के अन्य संस्थानों के समक्ष राजभाषा प्रगति के नए मानक भी प्रस्तुत करेगा।

देबाजीत सर्मा
निदेशक

मत्स्य पालन

पहाडों में मत्स्य पालन एवं मात्स्यिकी

सुमन्त कुमार मल्लिक, रविन्द्र सिंह पतियाल, प्रेम कुमार* एवं अभय गिरी
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल
*भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

भारतीय हिमालयी क्षेत्र में पर्वतीय कृषकों के लिए कम लागत वाली मत्स्य पालन तकनीक

मिट्टी के तालाब पर आधारित खेती में मुख्यतः अर्न्तस्थलीय मात्स्यिकी का प्रचलन है जो कि भारतीय कार्पो को प्रमुख खेती योग्य प्रजाति के रूप में स्थापित करता है, लेकिन जब इसकी खेती मध्य व उच्च भारतीय हिमालयी क्षेत्रों में होती है तो अपर्याप्त जल, कृषि स्थल, पानी की कमी, जल का रिसाव, कम वृद्धि, मछलियों की परिपक्वता में देरी आदि के कारण स्थिति पूरी तरीके से भिन्न होती है। आद्र भूमि, झीलों, नदियों, मूसलाधार धाराओं के संदर्भ में विशाल मध्य एवं उच्च ऊचाई जलीय संसाधनों की उपस्थिति हमारे देश में भारतीय हिमालय की मत्स्य पालन और जलीय कृषि क्षमता दर्शाती है।

इसलिए ठंडी जलवायु वाली परिस्थितियों में मत्स्य उत्पादन हेतु चुनौतियों का सामना करने और पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन और जल कृषि क्षमता का उपयोग करने के लिए खेती के तरीकों, जल रिसाव पर नियत्रंण, नई प्रजातियों का परिचय एवं व्यवस्था में विविधीकरण के लिए बुनियादि ढाँचे के निर्माण के माध्यम से विभिन्न शोध कार्यक्रमो और तकनीकियों को लागू किया गया है। इस प्रयास में कई क्षेत्रों में कम घनत्व वाले पॉलीथीनों का उपयोग पर्वतीय क्षेत्र में मछली पालन की सफलता के लिए एक नवीन जलीय कृषि हस्तक्षेप माना जा रहा हैं।

पर्वतीय क्षेत्रों के तालाबों में कम घनत्व वाली पॉलीथीन के उपयोग के पीछे सिद्धांत

पॉलीथीन वाले तालाब में उच्च मत्स्य वृद्धि प्राप्त करने के लिए मूल सिद्धान्त यह है कि पॉलीथीन वाले तालाबों की ऊष्मा को संरक्षित करने की प्रकृति होती है जो कि पारंपरिक मिट्टी के तालाबों में नही होती है। मछली एक ठण्डे रक्त वाली प्रजाति होने के कारण अन्य स्थलीय जीवों कि तरह स्थिर शरीर के तापमान को बनाऐ रखने में सक्षम नही हो सकती बल्कि जल के तापमान के अनुसार अपने शरीर के तापमान को बनाऐ रखती है। गर्म वातारण में उसके शरीर के चयापचय की दर में तेजी आती है जिसके परिणाम स्वरुप वे चारा का सेवन अधिक करती है।

कम घनत्व वाले पॉलीथीन फिल्म वाले तालाब की तैयारी

1. तालाब आम तौर पर पर्वतीय क्षेत्र में बने होते हैं जहाँ कोई बड़ा पेड़ न हो।
2. जड़ो व लकड़ी के टुकड़े को हटाया जाता हैं ताकि पॉलीथीन को नुकसान न हो।
3. तालाब की निचली व अन्दर की दीवारों पर मिट्टी व पानी का लेप लगाया जाता है फिर एक या दो परत एक अच्छी गुणवत्ता वाली कम घनत्व पॉलीथीन को लगाया जाता है।
4. सर्वोतम उत्पादन के लिए पॉलीथीन का आकार 1.5 घन की औसत गहराई के साथ आकार 50–100 घन में भिन्न होता है और इनको पर्वतीय क्षेत्रां में मत्स्य पालन के लिए उपयोग किया जा सकता है।

पहाड़ी जलीय कृषि में कम घनत्व वाली पॉलीथीन फिल्म के उपयोग के लाभ

1. यह वर्षा के जल व कम निर्वहन वाले वंसत पानी को संरक्षण करता है, जो मछली को उत्पादन को जीवित रखता है।
2. कम घनत्व पॉलीथीन लाइन वाले तालाब टैंक पानी के बफर स्टॉक के रुप में कार्य करता है।
3. पानी व तालाब का तापमान सर्दियों में बढता है।
4. अत्याधिक पानी प्रवाह खेती व धर के कामों के लिए उपयोग किया जा सकता है।
5. कम घनत्व वाले पॉलीथीन टैंक या तालाब का निर्माण काफी सस्ता है व यह 10–15 साल तक ढंग से काम करता है।

फील्ड परीक्षण कृषक जो कि कम घनत्व वाली पॉलीथीन वाले तालाब में मत्स्य पालन करना चाहते है उनके लिए अनुसंसा कुछ इस प्रकार हैः

1. भंडारण घनत्व में 3 फिंगरलिंग होने चाहिये।
2. कृत्रिम चारा जो की चावल, गेहूँ व सरसों के तेल का केक का मिश्रण है मछली के वजन के अनुसार 2–3 प्रतिशत दिया जाता है।
3. खेती का समय नौ महिने तक का है।
4. तीन प्रजातियाँ जो की पॉलीकल्चर के लिए संस्तुत है वो है सिल्वर कार्प 30 प्रतिशत ग्रास कार्प 30 प्रतिशत व कॉमन कार्प 40 प्रतिशत
5. किसी भी प्रकार के जीवाणु नाशक दवा वाणिज्यिक दवा का उपयोग न करें।
6. मछली के स्टॉक को नमक पानी व लाल दवा से घोल में रख सकते है।

पॉलीथीन युक्त तालाब

कम घनत्व वाले पॉलीथीन के तालाबों का पर्वतीय क्षेत्र में उपयोग

हाल ही में आई.सी.ए.आर–डी.सी. एफ.आर. द्वारा कम घनत्व वाले पॉलीथीन के तालाबों का पर्वतीय क्षेत्र के धारचूला, उत्तराखण्ड के दूर दराज के गाँवों में उपयोग किया गया। जन जागरुकता कार्यक्रम विभिन्न गावों जैसे– पाँगू, हिमखोला, गलाती, बालूवाकोट वा गोथी में आयोजित करायें गये है, ताकि किसानों को कम घनत्व वाले पॉलीथीन के तालाबां के फायदे के बारे में बताया जा सके। शुरु में कुल 22 तालाबां का निमार्ण भूमि की उपलब्धता पर किया गया। धारचूला में पहले कभी मछली पालन नही किया गया था इसलिए खास बात का ध्यान रखा गया कि सीमेन्ट के टैंक की तुलना में मिट्टी के तालाबों की लागत कम हो। इस बात को भी ध्यान रखा गया कि यह पानी सिर्फ मत्स्य पालन ही नही बल्कि अन्य खेती के कार्यों में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

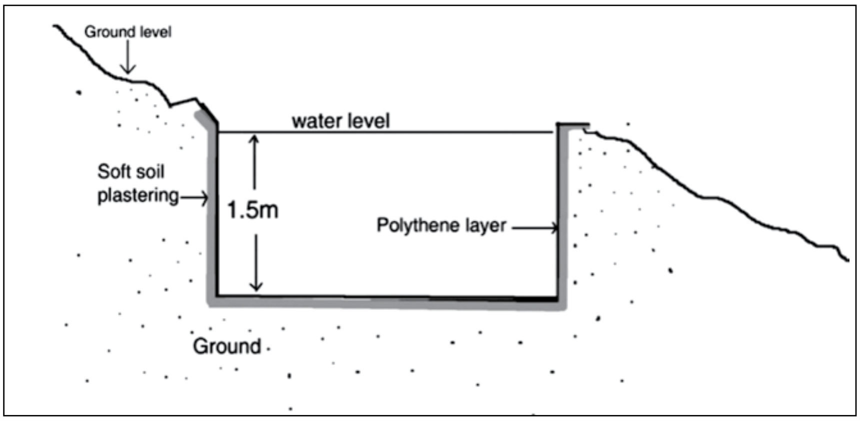

तालाबों में पॉलीथीन का इस्तेमाल करके जल रिसाव को रोका जा सकता है। मछली के बीज, मत्स्य चारा, जाल व अन्य सहायक उपकरण कृषकों को बाटें गये, साथ ही प्रबंधन अभ्यास जिसमें नियमित भोजन देना, पानी की गुणवत्ता की जांच व प्लैंक्टन के विकास एवं विश्लेषण के लिए नमूनों का एकत्रीकरण इत्यादि कृषको को वितरित किए गए। एक साल के अन्तराल में निचले पर्वतीय क्षेत्रों में समुद्र तल से 1514 मी. की ऊंचाई पर पाली गई मछलियों का वजन क्रमशः कॉमन कार्प 400 ग्राम ग्रास कार्प 500 ग्राम सिल्वर कार्प 700 ग्राम था। समुद्र तल की ऊँचाई

धारचूला में पॉलीथीन युक्त तालाबों में मत्स्य उत्पादन

से 2000 मी. में कम विकास (कॉमन कार्प 300 ग्राम ग्रास कार्प 350 ग्राम सिल्वर कार्प 600 ग्राम) दर्ज किया गया। पहली बार 2015–2016 में धारचूला उत्तराखण्ड में 3.05 मीट्रीक 2000 टन मछली का उत्पादन दर्ज किया गया।

वर्तमान में अधिकाश कृषक पॉलीथीन वाले तालाब में मत्स्य पालन में उत्सुकता दिखा रहे हैं क्योंकि यह कम लागत में अच्छा मुनाफा दे सकते है। पर्वतीय क्षेत्र में पानी के कम रिसाव व कठोर जलवायु ने जल की संभावनाओं को प्रभावित किया हैं। वैज्ञानिक हस्तक्षेप जैसेः पर्वतीय क्षेत्र में कम घनत्व वाले पॉलीथीन युक्त तालाबों से किसानों को पर्वतीय कृषि में और सभी सम्बंधित गतिविधियों के साथ जलीय कृषि को एकीकृत करने में मदद मिली है, इसलिए निश्चित रुप से कम लागत वाली जल कृषि प्रौधोगिकी को आय का एक अतिरिक्त स्त्रोत माना जा सकता है और यह पर्वतीय क्षेत्र में किसानों की आजीविका सुरक्षित करेगा।

मत्स्य कृषकों को मत्स्य बीज, आहार, जाल इत्यादि का वितरण

धारचूला में कृषकों के तालाब से उत्पादित मत्स्य

रेन्बो ट्राउट मछली का संवर्धन

नित्यानन्द पाण्डेय
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

रेन्बो ट्राउट मछली का महत्व

रेन्बो ट्राउट पर्वतीय क्षेत्रों में पाली जाने वाली विदेशी प्रजाति की मछली है। यह मत्स्य प्रजाति उत्तरी अमेरिका के प्रशान्त महासागर वाले तटीय क्षेत्रों की मूलवासी है, जिसको 20 वीं सदी के प्रारम्भ में अग्रेजों द्वारा भारत में लाकर मुख्यतः क्रीडा मात्स्यिकी तथा मनोरंजन के लिए उत्तर भारत के हिमालय क्षेत्र एवं दक्षिण भारत के कुछ पर्वतीय क्षेत्रों में स्थापित किया गया था। अच्छी बढवार, पोषक तत्वों की प्रचुरता, अनूठा स्वाद एवं लोगो की पसन्दीदा प्रजाति होने के कारण यह मछली विश्व के लगभग 100 से अधिक देशों मे पाली जाती है। इस मछली का पालन यूरोप के देशों में बहुतायत से किया जाता है। भारत में इस मछली के पालन की शुरूआत 20 वीं सदी के 60 वें दसक से हुई है। सर्वप्रथम रेन्बो ट्राउट मछली का पालन जम्मू–कश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश के ठण्डी जलवायु वाले क्षेत्रों में हुआ, तदोपरान्त् यह प्रजाति अधिक ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों के लिए अधिक आमदनी परक जल कृषि की मुख्य प्रजाति के रूप में प्रचलित हो चुकी है।

आधुनिक मत्स्य संवर्धन की विधाओं में रेन्बो ट्राउट पालन पर्वतीय क्षेत्र के किसानों के लिए आमदनी का एक अच्छा साधन होते हुए जीविजोपार्जन का एक मुख्य आधार बनता जा रहा है। लगभग 30 वर्ग मी0 के तालाब से 1.27 लाख रूपये की सालाना आमदनी के साथ पर्वतीय क्षेत्रों के मत्स्य पालको का यह एक मुख्य आकर्षण है। पर्वतीय क्षेत्र के मत्स्य पालकों की रूचि एवं ट्राउट पालन की उत्सुकता के फलस्वरूप पिछले एक दसक में हमारे देश का ट्राउट उत्पादन 147 टन से बढ़कर 842 टन तक पहुँच गया है, जिसमें मुख्य रूप से जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं सिक्किम राज्य की भागीदारी रही है। वर्तमान में इस मछली की माँग को देखते हुए हिमालय के इन तीन राज्यों के साथ–साथ उत्तराखण्ड एवं अरूणाचल प्रदेश में भी इस मछली के उत्पादन की कई–गुना संभावनाएं हैं।

रेन्बो ट्राउट मछली (आन्कोरिन्कस मायकिस) साल्मोनिड समूह की एक मांसाहारी प्रजाति है, जोकि इन्द्रधनुषीय रंगो के कारण देखने में अत्यन्त आकर्षक, उच्च कोटि की प्रोटीन एवं ओमेगा–3 तथा ओमेगा–6 जैसे अति उपयोगी वसीय अम्लों की प्रचुरता होते हुए बहुत ही पोषक तथा खनिज तत्वों की भरपूर मात्रा के साथ अत्यन्त स्वादिष्ट मछली है। मध्यम आकार के शल्को से ढके सप्तरंगी धारियों एवं धब्बों से युक्त आकर्षक शरीर इस प्रजाति की विशेष पहचान है जोकि इस समुह की साल्मन एवं चार जैसी प्रजातियों से पहचानने में सहायक हैं। लम्बाई युक्त दबी हुई शारीरिक बनावट के साथ इस मछली की रीढ़ में 60–66 कशेरूकाएं, 3–4 कॉटे तथा 10–12 धारीओं युक्त अधर पंख, 3–4 कांटे तथा 8–12 धारीओं युक्त गुदा पंख, 19 सयुक्त धारीओं युक्त पुच्छ पख, कुल्हे पर मांसल पख तथा इन्द्र धनुषीय रंगीन शरीर इस मछली की पहचान के अन्य लक्षण हैं।

लगभग 1600 मी0 से अधिक ऊँचाई के पर्वतीय क्षेत्रों में इस मछली का पालन संभव है। जिन क्षेत्रों में ठण्डा, अधिक घुलित आक्सीजन वाला, शुद्व एवं निर्मल बहता हुआ पानी भरपूर मात्रा में उपलब्ध है, ऐसे क्षेत्रों में ट्राउट मछली पालन के तालाब बनाये जा सकते हैं। हिमछादित क्षेत्रों से पिघले पाले की जल धाराएं तथा नदियाँ इस प्रकार के जल का मुख्य स्रोत है। इस प्रकार का जल प्रदूषण रहित, प्रचुर ऑक्सीजन युक्त (7 मि0 ग्रा0/ली0 से अधिक) तथा

रेन्बो ट्राउट

0–20 डिग्री से0 ग्रे0 तापक्रम वाला रहता है जोकि ट्राउट संवर्धन एवं प्रजनन के लिए उपयुक्त है। अच्छी बढ़वार के लिए जल का तापक्रम 13–18 डिग्री से0 ग्रे0 तथा प्रजनन एवं हैचरी उत्पादन के लिए 9–14 डिग्री से0 ग्रे0 तापक्रम अच्छा रहता है। उपयुक्त जल की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता के साथ–साथ ट्राउट पालन के स्थान चुनाव हेतु आवागमन की सुविधा, बीज एवं आहार की प्राप्ति तथा बाजार व्यवस्था भी महत्वपूर्ण है।

एक व्यस्क रेन्बो ट्राउट मछली का आकार लगभग 2–3 कि.ग्रा. होता है, जो कि लगभग 3 वर्ष की उम्र की होती है। इस प्रजाति की मछली का अधितम वजन 25.4 कि0ग्रा0 देखा गया है, जो कि लगभग 11 वर्ष की उम्र की थी। पाली जाने वाली रेन्बो ट्राउट की दो किस्में प्रचलित हैं, जिनका प्रजननकाल बसन्त तथा हेमन्त ऋतु में होता है। कुछ देशों में इसकी एल्विनो किस्म भी होती है जिसे गोल्डन ट्राउट कहा गया है।

रेन्बो ट्राउट मछली पालन की आवश्यकताएं

1. शीतजल– कम तापक्रम का शुद्ध, प्रदुषण रहित बहता हुआ पानी अत्यन्त आवश्यक है। लगभग 1 टन ट्राउट उत्पादन के लिए 300 ली0 प्रति मिनट बहते हुए पानी की आवश्यकता रहती है। पानी का तापक्रम 0 से 20 डिग्री से0ग्रे0 उपयुक्त रहता है। 20 डिग्री से0ग्रे0 से अधिक तापक्रम का पानी ट्राउट पालन के लिए उपयुक्त नही है। पानी का 13–18 डिग्री से0ग्रे0 तापक्रम ट्राउट की बढ़वार के लिए उत्तम होता है अतः इस तापक्रम का पानी जितने अधिक समय तक उपलब्ध रहता है उतना ही उत्पादन अधिक तथा मछली स्वस्थ्य रहती है। पानी में धुली हुई सल्ट मिट्टी या कार्बनिक पदार्थो का रहना अवांछनीय है।

ट्राउट मछली पालन की सफलता के लिए मूलभूत आवश्यकताओं की जानकारी आवश्यक है। एक या दो रेसवे में छोटे स्तर पर या फिर बड़े स्तर पर ट्राउट पालन करने के लिए इस आवश्यकताओं की व्यवस्था आवश्यक होती है।

पानी में पर्याप्त घुलित ऑक्सीजन (7 मि0ग्रा0/ली0 से अधिक) रहना आवश्यक है। अधिक अम्लीय या क्षारीय पानी भी उपयुक्त नही है। अतः पानी का पी0 एच0 6.8–8 के मध्य ठीक रहता है। पानी की उपलब्धता के अनुसार ही ट्राउट प्रक्षेत्र का आंकलन किया जा सकता है या उत्पादन लक्ष्य के अनुसार आवश्यक पानी की व्यवस्था अति आवश्यक है।

2. ट्राउट रेसवे– आमतौर पर ट्राउट मछली का पालन लम्बाई युक्त पक्के तालाबों में किया जाता है। इन तालाबों को रेसवे कहते हैं जिसमें लगातार पानी का बहाव बनाये रखना आवश्यक है। पानी के बहाव से मछली को आवश्यक धुलित ऑक्सीजन की पूर्ति होती है तथा बचा हुआ आहार एवं बिष्ठा जैसे अवांछनीय पदार्थो का लगातार बहाव के साथ निष्कासन होता रहता है। बहता हुआ पानी तालाब में वांछित कम तापक्रम को भी नियंत्रित रखता है। रेसवे का उचित आकार मछली की बढ़वार को प्रभावित करता है। आमतौर पर उत्पादन वाले तालाबों का आकार 30 वर्ग मी0 का होता है। जिसकी लम्बाई लगभग 15 मी0 तथा चौड़ाई 2 मी0 रखी जा सकती है। रेसवे में प्रवश द्वार (इन्लेट) तथा जल निष्कासन द्वार (आउट लेट) की व्यवस्था आवश्यक है। इनलेट के रुप में खुली नाली या 2 इंच व्यास की पाइप व्यवस्था हो सकती है तथा आउटलेट रेसवे के गहरे क्षेत्र में नीचे की तरफ 3 इंच व्यास के पाइप द्वारा या स्लुइस गेट के आकार में बनाया जाता है।

रेसवे की तली वाले फर्श में इन्लेट से आउटलेट की तरफ 3 प्रतिशत

ट्राउट रेसवे

का ढलान आवश्यक है, जो कि रेसवे की सफाई तथा पानी के बहाव में सुविधाजनक है। रेसवे में पानी का जलस्तर उथले भाग की तरफ कम से कम 80 से0मी0 आवश्यक है। इन्लेट की व्यवस्था जल स्तर से लगभग 30 से0मी0 ऊपर रखी जाती है। जलस्तर से रेसवे की दीवारों का लगभग 30 से0 मी0 ऊँचा रहना आवश्यक है जिससे कि मछलियॉ तालाब से बाहर न कूद सकें। कम जलस्तर रखने से अचानक ऑक्सीजन की कम, जल तापक्रम का बढ़ना या मछलियों को सन बर्निंग की सम्भावना बनी रहती है। एक उचित रेसवे का आकार तथा नमूना चित्र–2 में दिया गया है तथा आउटलेट का नमूना चित्र–3 तथा चित्र–4 में दिया गया है।

नर्सरी तालाबों की रेसवे का आकार 15 वर्ग मी0 (लम्बाई 10 मी0 तथा चौड़ाई 1.5 मी0) रखा जा सकता है, जिसमें फ्राई से फिगरलिंग अवस्था का पालन होता है तथा ट्राउट फार्म के लिए फिगरलिंग का स्टाक रखा जा सकता है। प्रजनकों के लिए बड़े आकार की रेसवे बनायी जा सकती है जिनका आकार 50 वर्ग मी0 (लम्बाई 10 मी0 तथा चौड़ाई 5 मी0) या 5 मी0 व्यास के गोल आकार में होता है। रेसवे निर्माण के लागत को कम करने या सुविधा के अनुसार 500 जी0 एस0 एम0 पॉलीथीन लगाकर पॉली रेसवे या फ्राइबर ग्लास से थ्त्व् रेसवे भी बनाई जा सकती है। कम जल रिसाव वाली मिट्टी में पर्याप्त पानी की उपलब्धता रहते हुए कच्चे तालाबों में भी ट्राउट पालन किया जा सकता है जिसमें उत्पादन स्तर काफी कम रहता है। ठण्डे जल की नदियों की छोटी धाराओं को दो तरफ से उपयुक्त जाली से बन्द करके लम्बी रेसवे के रुप में भी ट्राउट पालन के लिए एक सुविधा बनाई जा सकती है। ट्राउट पालन एक या दो रेसवे में या फिर बहुत सी रेसवे में ट्राउट फार्म के रुप में किया जा सकता है। ट्राउट फार्म में रेसवे का निर्माण लगातार 2–3 की कतार में या फिर एक दूसरे के समानान्तर श्रेणीबद्ध रुप से किया जा सकता है।

3. अंगुलिकाएं– रेसवे में संचय करने के लिए, 2–5 ग्रा0 आकार की स्वस्थ्य एवं रोगरहित अंगुलिकाओं का पर्याप्त मात्रा में होना आवश्यक है। अंगुलिकाओं का आकार लगभग समान होना चाहिए। छोटी एवं असमान आकार की अंगुलिकाओं का संचय उचित नही है। अंगुलिकाओं को फार्म पर ही तैयार किया जा सकता है या अन्य स्थान से उचित ढ़ंग से जीवित अवस्था मे लाया जा सकता है।

4. आहार– प्रतिदिनआवश्यकतानुसार मछलियों को खिलाने के लिए आहार की आवश्यकता होती है। मछली की अवस्था के अनुसार अंगुलिका आहार या ट्राउट आहार स्वयं तैयार करके या अन्य स्रोत से व्यवस्था करना आवश्यक है। एक बार में सिर्फ 3 महीने की आवश्यकता का आहार ही रखना उचित है तथा इसका भण्डारण उचित ढ़ंग से करना आवश्यक है। अधिक पुराना एवं फफूंदी लगा आहार प्रयोग नही करना चाहिए।

5. उपकरण– संवर्धन के दौरान कुछ छोटे प्रकार के उपकरणों तथा औजारों की आवश्यकता होती है, जैसे– टब, बाल्टी, मग, रेसवे सफाई का ब्रुश, छोटे आकार का मत्स्य जाल, फीड कन्टेनर, फिड़िग ट्रे, इत्यादि। बड़े ट्राउट फार्म के लिए छोटे आकार के फिल्टर, एरेटर फिड मिल, ग्रेडर, फिड ड्रायर, आइस बॉक्स तथा छोटी बड़ी तुलाएं आवश्यक होती है। जल तापक्रम मापने के लिए थर्मामीटर, ऑक्सीजन सिलैण्डर, ऑक्सीजन तथा अमोनिया मापने की किट तथा गम बूट की भी आवश्यकता होती है। लाल दवा (पोटैशियम परमैग्नेट) तथा साधारण नमक भी रखना चाहिए।

पालन विधि एवं प्रबन्धन

सुविधा एवं संसाधन के अनुसार ट्राउट पालन का कार्य तीन स्तर पर किया जा सकता है–

(क) एकल या युगल रेसवे पालन– छोटे स्तर पर एक या दो रेसवे में लगभग 1 या 2 टन ट्राउट का उत्पादन किया जा सकता है तथा सालाना 1 से 2 लाख रुपये की आमदनी की जा सकती है। इसके लिए अगुलिकाओं एवं आहार का प्रबन्ध मत्स्य विभाग या अन्य स्रोत से किया जा सकता है। इस प्रकार के व्यवहार को सहायक धन्धे के रुप में अतिरिक्त आमदनी हेतु किया जाता है।

(ख) जीविकोपार्जन परक ट्राउट पालन– एक कृषक परिवार की आवश्यकता पूर्ति के लक्ष्य के साथ 6–10 रेसवे में लगभग 8–12 लाख रुपये की सालाना आमदनी के लिए ट्राउट पालन किया जा सकता है। अपनी आवश्यकता के अनुसार छोटी ट्राउट हैचरी (1 लाख आइड ओवा) तथा छोटा फिड मिल (20–40 कि0 ग्रा0) भी लगाया जा सकता है अन्यथा अगुलिकाएं एवं आहार

की व्यवस्था अन्य स्रोत से की जा सकती है।

(ग) व्यवसायिक ट्राउट पालन– बड़े स्तर पर ट्राउट फार्म बना कर 80 से 160 टन उत्पादन लक्ष्य या एक से दो करोड़ रुपये आमदनी हेतु व्यवसायिक तौर पर ट्राउट पालन किया जा सकता है। इस प्रकार के व्यवस्थित ट्राउटफार्म में ट्राउट हैचरी, फीडमिल आधुनिक उपकरण, परिवहन व्यवस्था के साथ सुचारु प्रबन्धन की आवश्यकता होती है।

अभी तक पर्वतीय क्षेत्रों में एकल रेसवे पालन या जीविकोपार्जन परक ट्राउट पालन का व्यवहार ही किया जाता है, जब कि व्यवसायिक ट्राउट पालन की भी प्रबल संभावनाएं हैं।

संचय पूर्व रेसवे की तैयारी

रेसवे का पानी निकालकर 3–4 दिन सुखने देते हैं। इस अवधि में रेसवे में आवश्यक मरम्मत भी की जा सकती है। तदोपरान्त लाल दवा, पोटैशियम परमैग्नेट के 1 मिग्रा0/ली0 के घोल से रेसवे की दीवारो एवं फर्श को रगड़कर धो देते हैं तथा वांछित स्तर तक पानी भर देते हैं। संचय पूर्व पानी के तापक्रम तथा धुलित ऑक्सीजन को जानना आवश्यक है।

अंगुलिकाओ का संचय

2–5 ग्रा0 वजन की लगभग सामान आकार की अंगुलिकाओं को 60–100 अंगुलिकाएं प्रति घन लीटर पानी में संचय करते हैं। संचय के समय अगुलिकाओं को लाल दवा (पोटेशियम परमैग्नेट) के 1 मिग्रा0/ली0 के घोल में 5 मिनट तक उपचारित करते हैं तथा पानी के बहाव को तेज रखते हैं।

जल आपूर्ति एवं जलीय गुण धर्म

संवर्धन के दौरान लगातार आवश्यक जल की आपूर्ति आवश्यक है। एकल या युगल रेसवे के व्यवहार में 2x2x1.5 मी0 (लम्बाईxचौडाईxगहराई) आकार का सेटलिंग टैंक रेसवे के इन्लेट से पहले बनाते हैं। इससे पानी से बालू एवं अवांछनीय कचरे का निष्कासन हो जाता है। व्यवसायिक ट्राउट फार्म में बड़े आकार के सेटलिंग टैंक बनाये जाते हैं जो कि कचरा एवं बालू निष्कासन के साथ जल भण्डारण के रुप में भी उपयोगी रहते हैं। बर्फ का पिघला पानी (स्नो मैल्ट) या ठण्डे स्रोत का पानी ही उपयोग किया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों के ऊपरी ढलान से पानी लिया जाता है ताकि स्वयं ही पानी तेज बहाव के साथ रेसवे में आता रहता है। ट्राउट पालन के लिए जलीय गुणों का विवरण तालिका –2 में दिया गया है।

ट्राउट पालन हेतु उचित जलीय गुण

जलीय गुण	परिमाप
तापक्रम	<18° से0ग्रे0
घुलित ऑक्सीजन	<7 मिग्रा0/ली0
पारदर्शिता	1.5–1.8 मी0
कार्बन डाई ऑक्साइड	<1.5 मिग्रा0/ली0
पी0 एच0	6.5–8
घुलित ठोस पदार्थ	<10 मिग्रा0/ली0
क्षारीयता	50–150 मिग्रा0/ली0
अमोनिया	<0.05 मिग्रा0/ली0
नाइट्रेट	<0.05 मिग्रा0/ली0
फास्फेट	<0.03 मिग्रा0/ली0

ट्राउट पालन में पानी के तापक्रम की महत्वपूर्ण भूमिका है। सामान्यतः 0–20 डिग्री0 से0 ग्रे0 तापक्रम ट्राउट पालन के लिए अनुकूल रहता है। फिर भी अच्छी बढ़वार एवं अधिक उत्पादन के लिए 13–18 डिग्री0 से0 ग्रे0 तापक्रम रहना आवश्यक है। उचित तापक्रम रहने से मछली ठीक प्रकार से आहार ग्रहण करती है, तथा धुलित ऑक्सीजन की पर्याप्त मात्रा बनी रहती है। इसके विपरीत अधिक तापक्रम पर मछली तनाव ग्रस्त अवस्था में रहती है तथा सामान्य व्यवहार नही करती है। आमतौर पर 18 डिग्री0 से0 ग्रे0 से अधिक तापक्रम ट्राउट के लिए अनुकूल नही है तथा इस स्थिति में ज्यादा समय तक रहने से मछली मरने लगती है। ऐसी स्थिति में पानी के बहाव को बढ़ाकर कुछ नियंत्रण किया जा सकता है अन्यथा ठण्डे पानी की व्यवस्था आवश्यक हो जाती है। अतः मछलियों की संख्या एवं वजन के अनुसार संवर्धन के दौरान रेसवे में पानी की आवश्यकता मछली की अवस्था के अनुसार अलग–अलग रहती है। सुविधा के लिए आवश्यक जल की मात्रा को जल बहाव के रुप में समझा जा सकता है। जल बहाव को ली0 प्रति मिनट (एल पी एम) में गणना की जाती है। आमतौर पर एक टन मछली उत्पादन के लिए 300 ली0 प्रति मिनट पानी की आवश्यकता होती है। गणना के अनुसार प्रत्येक अवस्था के लिए वांछित जल बहाव का विवरण तालिका–3 में दिया गया है–

ट्राउट पालन में वांछनीय जल बहाव

अवस्था/उम्र माह	संचय दर प्रति मी0^3	जल बहाव प्रति रेसवे (30 वर्गमी0)	
		12 डिग्री सेग्रे0	18 डिग्री सेग्रे0
फ्राई (1–5 ग्रा0) 0.5–2 माह	1000–2500	110	118 ली/मि0
फिगरलिंग (5–25 ग्रा0) 2–4 माह	100–250	120	270 ली/मि0
तरुण मीन (25–250 ग्रा0) 4–10 माह	60–100	150	240 ली/मि0
टेबल मीन (250–350 ग्रा0) 10–14 माह	60–100	190	300 ली/मि0
व्यस्क मछली (>350 ग्रा0)	30–50	90	150 ली/मि0

आहार व्यवस्था

रेन्बो ट्राउट माँसाहारी मछली है अतः इस मछली की खुराक में उच्च कोटि की प्रोटीन का प्रचुर मात्रा में रहना आवश्यक है। ट्राउट मछली पूरी तरह दिये गये आहार पर पाली जाती है जिसमें 35–40% उत्तम कोटि की प्रोटीन तथा 10–14% वसा का होना आवश्यक है। ट्राउट मछली का आहार, फिशमील सोयाबीन मील, गेहू आटा, स्टार्च, मछली का तेल, ईस्ट मिनरल–विटामिन मिलाकर तैयार किया जा सकता है। अंगुलिकांए एवं ट्राउट आहार को मत्स्य विभाग से प्राप्त जा सकता है।

ट्राउट के लिए आहार तालिका

आकार	प्रोटीन	प्रतिदिन आहार दर वजन का %	प्रतिदिन आहार देने की संख्या
<10 ग्रा0	40%	5–10%	7–8
<50 ग्रा0	35%	5–6%	3–4
<50 ग्रा0	35%	2–3%	2–3

उत्पादन– लगभग 10–12 माह में 300–400 ग्रा0 के आकार की मछलियों को तालाब से निकालकर बेचा जा सकता है। निष्कासन के 1–2 दिन पहले आहार नही देते हैं तथा मछलियों की डिगटिंग एवं ग्रेडिंग कर लेते हैं। दूर बाजार में भेजने के लिए बर्फ के साथ पैकिंग की जा सकती है। प्रत्येक रेसवे (30 वर्ग मी0) से लगभग 1.25 लाख रूपये की शुद्ध आमदनी की जा सकती है। मूल्यवर्धित उत्पाद बनाकर तथा ब्रान्ड नेम "हिमालयन ट्राउट" से और अधिक आमदनी हो सकती है। वर्तमान में देश का ट्राउट उत्पादन लगभग 842 टन है तथा औसतन सालाना वृद्धि दर लगभग 31% आंकी गई है। कुल उत्पादन का लगभग 80% उत्पादन हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू एवं कश्मीर राज्य से होता है। अन्य पर्वतीय राज्य जैसे–उत्तराखण्ड, सिक्किम तथा अरूणाचल प्रदेश में भी आधुनिकतम तकनीक का प्रसार करके रेन्बो–ट्राउट पालन की व्यापक पहल की गई है, जो कि किसानों की आय वृद्धि में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

रेन्बो ट्राउट

रेन्बो ट्राउट पालिए समृद्धि पाइये

मत्स्य पालन एक उभरता रोजगार

अनुराग सेमवाल, *तरंग शाह, दीपक अग्रवाल एवं शुभम वासने
गो.ब.पंत. कृषि एवं प्रौद्यो. विश्वविद्यालय, पंतनगर
*भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

यूँ तो मत्स्य पालन देश–विदेश में प्रगति पर हैं, लेकिन अभी भी हमारे देश के कुछ राज्य अछूते है। खासकर उत्तरी इलाकों में किसानों को इसके बारे में थोड़ा कम ज्ञान है। समुद्र एवं नदियों से लगातार मछली निकाले जाने के कारण भी हमने अपने प्राकृतिक संसाधनों को नुकसान पहुचाया हैं, जिसके चलते मछलियों का स्तर इनमें ठहर सा गया है। इसलिए कई किसानों ने अपना रूख मत्स्य पालन की ओर किया है। मत्स्य पालन को अपनाकर हम अपने दैनिक आहार में प्रोटीन की कमी को पूरा कर सकते है एवं प्रोटीन युक्त खाद्य भी प्राप्त कर सकते है। मत्स्य पालन भारत की जीडीपी (GDP) में 1.4% का हिस्सेदार है। अगर हम सारे कृषि सम्बन्धित व्यापारों पर प्रकाश डाले तो भारत की जीडीपी में मत्स्य पालन का योगदान 4.6% हैं, और इन आकड़ों से आप अनुमान लगा सकते है कि मत्स्य पालन एक फायदेमंद एंव फलता फूलता रोजगार है। हमारे देश में भी कई ऐसे लोग हैं, जो आहार में प्रोटीन के लिए मछली पर निर्भर हैं, या यूं कहे मछली को बड़े चाव से खाते है तो जरा सोचिए ऐसे व्यक्ति अपने आहार में प्रोटीन की मात्रा को कैसे पूरा करेंगें? इसलिए ये एक अच्छा समय है कि लोग मत्स्य पालन को अपनाये एवं लोगों के दैनिक आहार को पूरा करें। वैसे तो मत्स्य पालन के अनेकों फायदे है लेकिन उनमें से मुख्य है :

- आकड़ों के मुताबिक देखे तो हमारे भारत देश में 60% से ज्यादा लोग मछली को आहार में लेना पंसंद करते है, जो ये बतलाता है कि मत्स्य पालन भविष्य में उभरता रोजगार है।
- मछली में पाया जाने वाला प्रोटीन हमारे आहार को पूरा करता है, इसलिए इसकी मांग भी भविष्य में ऐसे ही बनी रहेगी।
- भारतवर्ष में पाया जाने वाला जलवायु पर्यावरण मत्स्य पालन के लिऐ अनूकूल है, जो दर्शाता है कि किसानों को प्राकृतिक मार कम स्तर पर झेलनी पड़ेगी।
- हमारे देश में जल के अनेकों स्त्रोत (नदियां, झीलें) है, इसलिए किसान या उद्यमी तालाब में पानी निकटतम स्त्रोतों से भर सकता है।
- किसान एवं उद्यमी मछली की तरह–तरह की जातियां एवं उपजातियों को पाल सकते है जो की आसानी से उपलब्ध है।
- अगर आप ग्रामीण इलाके से है तो आप एकीकृत फार्मिंग कर सकते है जिसमें हम मत्स्य पालन के साथ–साथ बकरी पालन, मुर्गी पालन, बतख पालन एवं गाय पालन भी कर सकते है। इससे खाद्य एवं अन्य जानवरों के खान–पान का खर्चा भी बचता है।

मत्स्य पालन कैसे करें ?

किसान मत्स्य पालन छोटे एवं बड़े दोनों पैमानों में कर सकते है। इसके लिए कुछ खास बातों का ध्यान रखना होगा :

1. तालाबों का निर्माण

मत्स्य पालन के लिये हमें सबसे पहले तालाब का निर्माण करना होगा जो कि मत्स्य पालन की अहम कड़ी है, और मत्स्य पालन के लिये हमें इसमें पानी का संचय करना होगा। मछली पालन तालाबों में मौसमी एंव स्थायी दोनों तरीकों से किया जा सकता है। वो जगह जहां पानी हर महीनें उपलब्ध नही होता वहां मौसमी तरीके से मत्स्य पालन किया जा सकता हैं। तालाब में पानी भरने से पहले हम इसमें गोबर और चूना डालते है, ताकि मछलियों के भोजन के लिये प्लवक तैयार हो सके। प्लवक का आकार काफी छोटा होता है। जिसे मछली बड़े चाव से खाती है। पानी रिसाव को जांचने के लिये हम तालाब में कुछ दिन तक पानी छोड़ देते है। इसके बाद मछलियों का बीज पानी में डाला जाता है।

2. मछली की नस्ल

मछलियों का विकास अच्छे से हो इसलिये हमें उत्तम नस्ल का चुनाव करना आवश्यक है। हमें क्षेत्र में

मछलियों कि मांग के अनुसार भी मछली का चुनाव करना चाहिए। कुछ मछलियाँ पानी की सतह पर कुछ बीचों–बीच एवं कुछ तल पर रहना पसंद करती है। भारत में पाली जाने वाली कुछ मछलियाँ इस प्रकार हैः

कतला – सतह – सिल्वर कार्प

रोहू – मध्य – ग्रास कार्प

मृगाल – धरातल – कॉमन कार्प

3. मछलियों का भोजन

मछलियों की जल्दी वृद्धि के लिये अच्छी गुणवत्ता वाला भोजन उपयोगी साबित होता है। एकीकृत खेती के उपयोग से हम भोजन में होने वाले खर्चों को भी कम कर सकते है। हम मछली के भोजन को दो भागों में विभाजित कर सकते हैः

1. बाहरी खाना

इस प्रक्रिया में हम मछली को भोजन बाहर से डालते है। जैसे की एकीकृत खेती की मदद से एवं बाजार में उपलब्ध मछलियों के खाने को भी दे सकते है। आमतौर पर हम 50% चावल की भूसी और 50% सरसों के खल को मिलाकर फिर सूखाकर मछलियों को देते है।

2. आंतरिक खाना

इस प्रक्रिया में भोजन का उत्पादन तालाब में ही होता है। जिसमें प्लवक, छोटे कीड़े मकौड़े शामिल हैं, जिन्हे मछलियों बड़े चाव से खाती है। लेकिन इनका उत्पादन जैविक खाद, रासायनिक खाद एवं गोबर के उपयोग पर निर्भर करता है। मछलियों के पानी में पाये जाने वाले जीवाणु एवं कीटाणु से बचाने के लिये हमें समय–समय पर तालाब में दवाइयों का छिड़काव करना चाहिए। मछलियों के उत्तम विकास के लिये कुछ भौतिक एवं रसायनिक मानकों का आदर्श मानक पर होना आवश्यक है।

1. रंग – भूरा या हरा
2. पी.एच – 7.8–8.4
3. घुलित आक्सीजन – 5–10 मि.ग्रा. प्रति लीटर
4. तापमान – 25–300 सेल्सियस
5. नाइट्रेट/नाइट्रोजन – 0.1–0.रु मि.ग्रा. प्रति लीटर
6. क्षरियता – 150–300 मि.ग्रा. प्रति लीटर
7. घुलित लवण – 300–500 मि. ग्रा. प्रति लीटर
8. फॉस्फोरस – 0.3–0.5 मि.ग्रा. प्रति लीटर

स्नोट्राउट (शाइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी)

स्नोट्राउट (शाइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी) शीतजल की एक प्रमुख स्वदेशी प्रजाति है इसे असेला अथवा माउन्टेन बारबल के नाम से भी जाना जाता है। इसका विस्तार भारत में समुद्र तल से 300-2810 मी. की ऊँचाई में जम्मू कश्मीर से उत्तराखण्ड, असम, सिक्किम, नागालैण्ड एवं भूटान तक है।

यह प्रजाति तलछट में निवास करने वाली शाकाहारी प्रकृति की है तथा इसका मुख नीचे की ओर होता है। यह प्रजाति जल की विभिन्न तापीय सीमा को सहन कर सकती है लेकिन 8°C-22°C तक के तापमान वाली बर्फीली नदियों एवं तालाबों को ज्यादा पंसद करती है।

पर्वतीय मात्स्यिकी की महत्वपूर्ण ट्राउट प्रजातियाँ

कृपाल दत्त जोशी

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य आनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

हिमालय पर्वत अपनी अदभुत भौगोलिक संरचना के साथ–साथ अनेकों भौतिक एवं जैविक विविधताओं से परिपूर्ण हैं। सम्पूर्ण हिमालय एवं अन्य दक्षिणी पर्वत श्रंखलाओं के जल संसाधनां में 258 मत्स्य प्रतातियाँ पाई जाती हैं। जिनका उपयोग भोजन, आखेट, पर्यटन तथा सजावट के लिए किया जाता हैं। हिमालय की पर्वत श्रंखलाओं में पाई जाने वाली प्रजातियों में ट्राउट मछलियों का विशिष्ट स्थान हैं। ट्राउट प्रजातियाँ दो प्रकार की होती हैं– देशी ट्राउट एवं विदेशी ट्राउट। देशी ट्राउट के अंतर्गत सिजोथोरेक्स एवं सिजोथोरिच्थ्यिस जीनस प्रजातियाँ आती हैं। विदेशी ट्राटट प्रजातियों में रेन्बो ट्राउट एवं ब्राउन ट्राउट प्रमुख प्रजातियाँ हैं। राइमस बोला को भी इंडियन ट्राउट कहा जाता हैं, लेकिन मत्स्य पालन, आखेट एंव पर्यटन की दृष्टि से विदेशी ट्राउट मछलियों का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है।

इन प्रमुख ट्राउट प्रजातियों का विवरण निम्नवत हैं–

असेला बर्फानी ट्राउट (*साइजोथोरेक्स रिचार्डसोनी*)

असेला बर्फानी ट्राउट (*साइजोथोरेक्स रिचाईसोनी*) भारतीय उपमहाद्वीप स्थित हिमालय क्षेत्र की एक प्रमुख मत्स्य प्रजाति है। यह मछली हिमालय क्षेत्र में जम्मू कश्मीर से असम, सिक्किम, भूटान, नेपाल, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान तक पायी जाती है। इसे भारतवर्ष के अलग–अलग क्षेत्रों में भिन्न नामों से जाना जाता है। उत्तराखण्ड में इसे असेला, रसेला, जम्मू कश्मीर व हिमाचल प्रदेश में अलवन, गुलगुली तथा उत्तर पूर्व में ट्राउट कहा जाता है। यह हिमालय क्षेत्र की वेगवान नदियों, छोटी नदियों तथा पर्वतीय सदाबहार नालों में पायी जाती है। यद्यपि यह अपेक्षतया विस्तृत तापमान सहन कर लेती है। लेकिन असेला ट्राउट के लिए अनुकूल तापमान 15.0° से 24.0° सें.ग्रे. के बीच रहता है, क्योंकि इसी तापमान पर मछली की शारिरिक वृद्धि, प्रजनन आदि क्रियाऐं सम्पन्न होती है। उच्च तथा मध्य हिमालय क्षेत्र की कुछ नादियों में असेला ट्राउट की प्रतिशत उपलब्धता 23.81 से 98.03 प्रतिशत तक आंकी गयी है। जबकि निम्न पर्वतीय क्षेत्र में प्रतिशत उपलब्धता कम हो जाती है। स्वादिष्ट तथा जायकेदार मांस के लिए असेला ट्राउट पूरे हिमालय क्षेत्र में विख्यात है, तथा सिक्किम, भूटान एवं नेपाल में इसकी बहुत अधिक मांग है। कुछ क्षेत्रों में इसे विदेशी इन्द्रधनुषी ट्राउट से भी अधिक पसन्द किया जाता है। यद्यपि पर्वतीय क्षेत्रों में संगठित मत्स्य तथा मत्स्य बाजारों का अभाव है फिर भी यह मछली स्थानीय उपभोक्ताओं तक पहुँचती है।

असेला ट्राउट का आकार

यह मछली आकार में लम्बी तथा अर्ध बेलनाकार होती है। इसका निचला होंठ चपटा होता है जिसके छोटे–छोटे दाने सदृश संरचनाऐं (पैपिली) बनी रहती है जो एक चूषक (सकर) का रूप लिये होती हैं, यह विशिष्ट संरचना असेला ट्राउट की प्रमुख पहचान है। मछली का रंग स्टील सदृश भूरा होता है जो निचले भाग में हल्का हो जाता है। पेट का रंग हल्का सफेद–पीला होता है जिसमे कभी छोटे–छोटे भूरे या काले धब्बे होते हैं। इसका पृष्ठ पक्ष (डौरसल फिन) तथा पुच्छ पक्ष (कौडल फिन) भूरे–सफेद होते है, अन्य पक्ष भी कमोवेश पीले अथवा इसी रंग के होते है। पार्श्व रेखा (लेटरल लाइन) पूरी तथा धनुषाकार होती है। शल्क बहुत छोटे तथा दीर्घवृत्ताकार होते है, तथा पिछले भाग के शल्क अपेक्षतया आकार में बड़े होते है।

आवास

असेला ट्राउट हिमालय क्षेत्र में 270 से 2000 मी. तक ऊंचाई में स्थित छोटी नदियों तथा सदावहार नालों में मिलती है। यह ग्लेशियर निर्मित नदियों तथा छोटे नालों के मिलने से बनी हुयी नदियों में मिलती है। यह पर्वतीय झीलों व जलाशयों में भी पायी जाती है। हिमालय क्षेत्र में स्थित उपरोक्त जल स्रोतों में 4.1°-28.9° सें.ग्रे. तापमान के बीच इसकी उपलब्धता पायी गयी है। यह मछली नेपाल की नदियों में समुद्र तल से 1380 से 2180 मी. ऊंचाई तक में पायी जाती है।

प्राकृतिक आहार एवं प्रतिपूरक आहार

यह मछली जलीय संसाधनों के तल पर रहती है तथा तल भोजी प्रकृति की हैं। यह शाकाहारी तथा तल पर एकत्रित कार्बनिक पदार्थों चट्टानों, पत्थरों तथा नदी व जालों के किनारे स्थित ठोस वस्तुओं पर एकत्रित जैविक आवरण पर भोजन करती है जिसमें मुख्यता विभिन्न प्लवक होते है। लेकिन मछली के नव शिशु अथवा जीरा, तल पर उपलब्ध क्रस्टेशियन तथा कीटों के लार्वा का भक्षण करते है। असेला ट्राउट तालाब में पालने पर प्रतिपूरक अथवा कृत्रिम आहार भी ग्रहण करती है। लेखक द्वारा किये गये अनेक प्रयोगों के दौरान असेला ट्राउट को कृत्रिम आहार दिया गया जो इसके कुल भार के 1-5% तक था। कृत्रिम भोजन में 38.0% सोयाबीन आटा, 5-10% मछली चूर्ण तथा 2% विटामिन व खनिज चूर्ण दिया गया। इस कृत्रिम आहार में प्रोटीन की उपलब्धता 32% रखी गयी थी। प्रजनन के पश्चात् प्रस्फुटन के 84.168 घंटों के बाद जब अडंपीत भंडार समाप्ति पर होता है नव शिशु कृत्रिम आहार ग्रहण करना प्रारम्भ कर देते है।

पालन योग्य गुण

असेला ट्राइट मछली अनेक विशेषताओं से युक्त है जिसके अन्तर्गत कुछ पालन योग्य गुण भी मौजूद है:

1. अन्य पर्ततीय प्रजातियों की अपेक्षा यह मछली विस्तृत तापमान में रह सकती है। यह न्यूनतम 4.50 सें.ग्रे. तथा अधिकतम 28.90 सें.ग्रे. से तापमान में पायी जाती है।

2. यह बहते हुए तथा कुछ कम बहाव वाले पानी में आसानी से रह सकती है।

3. जलीय प्राकृतिक आहार के अतिरिक्त–प्रतिपूरक आहार भी ग्रहण कर लेती है।

4. शाकाहारी प्रकृति की है अतः निम्न पोषी तल में रहती है।

5. इस मछली का बीज प्राकृतिक जल श्रोतों में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहता है।

6. कृत्रिम प्रजनन भी सुगमता से किया जा सकता है तथा बीज उत्पादन किया जा सकता है।

7. असेला ट्राउट मछली अपने विशिष्ट स्वाद के लिए क्षेत्र में बहुत पसन्द की जाती है।

अतः इन समस्त गुणों से परिपूर्ण होने के बावजूद वार्षिक वृद्धि दर बहुत होने के कारण यह मछली पर्वतीय मत्स्य पालन में सम्मिलित नहीं हो पायी है।

इन्द्रधनुषी ट्राउट (*ओन्कोरिकस माइकिस*)

इन्द्रधनुषी (रेन्बो) ट्राउट (*ओन्कोरिकस माइकिस*) मूलतः उत्तरी अमेरिका के पैसिफिक जलागम क्षेत्र की मछली है। जो मूलतः अलास्का से मेक्सिको तक पायी जाती है। वर्ष 1874 के पश्चात् इन्द्रधनुषी ट्राउट को विश्व के अनेकों शीतजलीय देशों में पालन के उद्देश्य से ले जाया गया है और अब केवल अटार्कटिका को छोड़कर यह सभी महाद्वीपों में पायी जाती है। उत्तरी अमेरिका में इसका व्यावसायिक उत्पादन यद्यपि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो से ही प्रारम्भ हो गया था। लेकिन 1950 तक इन्द्रधनुषी ट्राउट के पालन पर ज्यादा ध्यान नहीं जा सका क्योंकि इसके पालन में आहार की व्यवस्था करना एक बडी चुनौती थी। वर्ष 1950 मे ट्राउट के लिए उपयोगी फैक्टरी उत्पादित शुष्क ट्राउट आहार (पैलेट फीड) विकसत हो जाने के पश्चात् इसके उत्पादन में तीव्र वृद्धि होती गयी। प्रारम्भिक वर्षों में सर्वाधिक इन्द्रधनुषी ट्राउट पालन उत्तरी अमेरिका, डेनमार्क तथा जापान में होने लगा। इन्द्रधनुषी ट्राउट अपने मूल आवास स्थलों नदियों, नालों एवं झीलों के ठण्डे तथा स्वच्छ जल में रहती है।

इन्द्रधनुषी ट्राउट मछली का पालन विश्व के अनेक पर्वतीय भागों में प्रारम्भ होने से इस प्रजाति के स्थानीय परिथितियों के अनुरूप उपयुक्त स्ट्रेन तैयार किये गये साथ ही इस प्रजाति को आनुवंशिक अनियान्त्रिकी विधियों, समूह चयन, संकरण आदि द्वारा पालन में उपयोगी गुणों युक्त कहकर विकसित किया गया। वर्तमान समय में यह प्रजाति विश्व के 70 से अधिक देशों में पाली जा रही है। लेकिन इसके प्रमुख उत्पादक क्षेत्रों में यूरोप, उत्तरी अमेरिका, चिली, जापान तथा आस्ट्रेलिया आते है। इन्द्रधनुषी ट्राउट एक बहुत ही संवेदनशील मत्स्य प्रजाति है, जो ठण्डे स्वच्छ तथा तेज बहाव बाले जल को पसन्द करती है, जलीय तापमान में वृद्धि, जल में गाद की बड़ी हुई मात्रा एवं जल प्रदूषण इसकी वृद्धि, प्रजनन तथा जीवितता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

आकार व रंग

इन्द्रधनुषी ट्राउट का शरीर मजबूत होता है तथा इसका ऊपरी एवं निचला भाग समान रुप से धनुषाकार

होता है। सिर की लम्बाई, शरीर की चौड़ाई से कम होती है। मुंह बड़े आकार का होता है, शरीर के शल्क बहुत छोटे–छोटे होते है।

इन्द्रधनुषी ट्राउट के सिर तथा शरीर के निचले भाग का रंग स्टील–नीला रहता है तथा पार्श्व रेखा की तरफ बैंगनी– लाल रंग की पट्टिका होती है। पार्श्व रेखा के ऊपर की ओर छोटे–छोटे काले रंग के गोल आकृति के धब्बे रहते है। पार्श्व रेखा के पास कुछ मछलियों में इन्द्रधनुषी रंग की पट्टिका भी दिखाई देती है। इसी विशेषता के कारण इन्हें इन्द्रधनुष (रेन्बो ट्राउट) नाम दिया गया है। पक्ष हल्के गुलाबी होते है। प्रजनन काल में नर मछली का रंग गहरा हो जाता है तथा उम्र दराज नर में निचला जबड़ा लम्बा तथा चम्मच के आकार का हो जाता है जिसे 'काइप' कहा जाता है।

आवास

इन्द्रधनुषी ट्राउट, ट्राउट वर्ग की एक प्रमुख प्रजाति है जिसमें पालन हेतु उपयोगी गुण है। यह अपेक्षतया विस्तृत तापमान (4.0-27.0^0 सें. ग्रे.) सहन कर लेती है। इन्द्रधनुषी ट्राउट जलीय संसाधनों के सतह पर अधिक समय व्यतीत करती है तथा इसकी वृद्धि दर भी अच्छी है। यह चलायमान जल बहाव युक्त तालाबों में पाली जा सकती है। इसका पालन तथा प्रजनन सुगमता से होता है। यह अपने मूल स्थानों की नदियों, सदाबहार नालों तथा झीलों के ठण्ड़े तथा स्वच्छ जल में रहती है। इसके पालन–उपयोगी गुणों के कारण आनुवंशिक अभियान्त्रिकी का प्रयोग कर इसके अधिक वृद्धि दर, रोग प्रतिरोधक एवं उच्च गुणवत्ता युक्त स्ट्रेन तैयार किये गये हैं।

रेन्बो ट्राउट यद्यपि विस्तृत तापमान सहन कर सकती है लेकिन इसकी अधिक्तम शारीरिक तथा लैंगिक वृद्धि 9.0 से 15.0 सें.ग्रे. तापमान तक की सीमा के अन्तर्गत होती है। इसके पालन के लिए 21.0 सें.ग्रे. जलीय तापमान अधिकतम सीमा है। तापमान इससे अधिक होने पर मछली की वृद्धि दर रूक जाती है तथा उसमें बीमारियों का प्रभाव पड़ने लगता है, और ये मरने भी लगती है। यह मछली अपने प्राकृतिक आवासों (नदियों एवं सदावहार नालों) में तीव्र बहाव एवं उच्च आक्सीजनयुक्त जल में रेतीली तलहटियों में प्रजनन करती है।

प्राकृतिक एवं कृत्रिम आहार

इन्द्रधनुषी ट्राउट एक मांसाहारी मत्स्य प्रजाति है। इसके जीरे तथा अगुलिकाएं जन्तुप्लवक एवं छोटे तलहटीय जन्तुओं को अपना भोजन बनाते है। इनके आहार में जलीय तथा बाहर के कीट, उनके लार्वा, घोंघे प्रजाति के जीव, क्रस्टेशियन, मछलियों के अण्डे तथा छोटी मछलियां सम्मिलित है। बड़ी ट्राउट मछलियां तलहटीय जन्तुओं के साथ–साथ छोटी मछलियों को भी खा जाती है। यहां तक कि इस प्रजाति में स्वजाति भक्षण (कैनिवलिज्म) गुण भी पाया जाता है अर्थात एक बड़े आकार की ट्राउट अपने से छोटे आकार की स्वजाति ट्राउट को खा जाती है। इस विशिष्टता के कारण ट्राउट पालन में समय–समय पर ग्रेडिंग करने की आवश्यकता होती है। जिससे एक आकार की मछलियां एक तालाब में रखी जाती है। तालाबों में ट्राउट पालन से पहिले छोटी मछलियां अथवा कीड़ें मकोड़े जिन्हें आहार के रूप में दिये जाते थे, लेकिन वर्ष 1960 के पश्चात् ट्राउट हेतु शुष्क आहार विकसित हो जाने के पश्चात् इन्हें शुष्क फैक्टरी उत्पादित कृतिम आहार दिया जाता है। यह आहार पावडर रूप से प्रारम्भ होकर छोटे–छोटे टुकड़ों (पेलेट) के आकार का होता है, ट्राउट के जीरे में उपलब्ध पीतक की समाप्ति के पश्चात् विभिन्न अवस्था की मछली के मुख के आकार के अनुसार कृत्रिम आहार बनाया जाता है।

मत्स्य पालन में उपयोगिता

यद्यपि पर्वतीय क्षेत्र में अनकों मत्स्य प्रजातियां पायी जाती है तथा कुछ अन्य प्रजातियों को देश के अन्य भागों अथवा विदेशों से भी लाया गया है लेकिन अधिकतर प्रजातियां पालन हेतु बहुत उपयोगी नहीं होती है। सामान्यतः पालन हेतु उपयोगी प्रजाति में निम्नलिखित में से अधिकतम विशेषताएं होनी चाहिए।

1. स्थान विशेष की जलवायु में सुगमता से रह सके।
2. अच्छी वृद्धि दर हो।
3. आसानी से प्रजनन कर सके अथवा कराया जा सके।
4. स्थानीय स्तर पर उपलब्ध आहार तथा प्रतिपूरक/कृत्रिम आहार ग्रहण करे।
5. उपभोक्ताओं की पसन्द के अनुरूप हो।
6. तालाब में सघन मात्रा में संचायित कर पाली जा सके।
7. रोग प्रतिरोधी क्षमता से परिपूर्ण हो।

इन्द्रधनुषी ट्राउट को उपरोक्त मानकों के आधार पर रखने पर यह एक

उपयुक्त पालन योग्य प्रजाति के रूप में पायी जाती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि इन्द्रधनुषी ट्राउट पर्याप्त एवं अनुकूल जलराशि वाले पर्वतीय क्षेत्रों में पालन हेतु सर्वगुण सम्पन्न एवं सर्वोत्तम मत्स्य प्रजाति है। इसके अतिरिक्त यह प्रजाति क्रीड़ा हेतु भी उपयुक्त है तथा इसको क्रीड़ा मत्स्य के रूप में भी जाना जाता है।

भूरी ट्राउट (साल्मो ट्रटा फेरियो)

भूरी (ब्राउन) ट्राउट (साल्मो ट्रटा फेरियो) मूलतः मध्य तथा पश्चिमी यूरोप के पर्वतीय जल स्रोतों की मुख्य मत्स्य प्रजाति है। इसमें प्रवासन की प्रवृत्ति नहीं होती है। इसके मूल प्राकृतिक आवास पूर्वोत्तर अटलांटिक में नार्वे के दक्षिण भाग, आइसलैण्ड, दक्षिणी ग्रीनलैण्ड तथा मध्य फ्रांस हैं। इन्द्रधनुषी ट्राउट की तरह यह भी तीव्र बहाव वाले पर्वतीय नदियों तथा सदाबहार नालों में रहती है। भूरी ट्राउट एक विश्व प्रसिद्ध क्रीड़ा मछली (स्पोर्ट फिश) के रूप में पायी जाती है यद्यपि इसका पालन भी किया जा सकता है। इस प्रजाति को भी अनेकों देशों में क्रीड़ा मछली के रूप में उपयोग हेतु ले जाया गया है। यह प्रजाति अर्न्टाटिका को छोड़कर अनेकों देशों के जल स्रोतों में पहुँचायी जा चुकी है, जिनमें से अधिकतर स्थानों में यह स्थापित हो चुकी है। कुछ एशियाई देशों – यथा चीन, ईरान, पाकिस्तान, भूटान, नेपाल, अफगानिस्तान तथा भारत में भी यह प्रजाति विभिन्न समय पर लायी गयी तथा भारत सहित अनेकों देशों के कुछ नदी तंत्रों में अब यह स्थापित भी हो चुकी है। इसकी उपप्रजाति बहुद्देश्यीय तथा समुद्री जल में तथा (साल्मोट्रटा लकास्ट्रिस) झीलों में रह सकती हैं।

उत्तरी सागर तथा बाल्टिक सागर में गिरने वाली नदियों में भूरी ट्राउट की साल्मो ट्रटा फेरियो उपप्रजाति तथा काला सागर में गिरने वाली नदियों में साल्मो ट्रटा लैबरेक्स की उप प्रजाति पायी जाती है। जबकि भूमध्य सागर में गिरने वाली नदियों में साल्मो ट्रटा मैक्रोस्टिग्सा उप प्रजाति पायी जाती है।

भारतवर्ष में भूरी ट्राउट को लाने के प्रयास वर्ष 1863 से प्रारम्भ किये गये थे। इस अवधि में भूरी ट्राउट (ब्राउन ट्राउट) तथा लौक लेवन ट्राउट (साल्मो लेवेंसिस) को दक्षिणी घाट स्थित नीलगिरि पर्वत श्रृंखलाओं के शीत जलीय नदियों व सदाबहार नालों में स्थापित करने के प्रयास किये गये, जिसमें उस समय सफलता नहीं मिल पायी। इसी बीच वर्ष 1900 में नयनयुक्त अण्डे श्री एफ0 मिचेल के निर्देशन में स्काटलैण्ड से सफलतापूर्वक कश्मीर लाये गये। इन अण्डों का कश्मीर के हरवान में विकास एवं पालन किया गया। 1905 में हरवान में सफलतापूर्वक भूरी ट्राउट का प्रजनन कर अण्डे प्राप्त किये गये। यहां से यह अण्डे जम्मू, गिलगिल, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड (तत्कालीन उत्तर प्रदेश), उत्तरी बंगाल, अरुणाचल प्रदेश तथा मेघालय तक स्थापित करने हेतु पहुंचाया गया।

उत्तराखण्ड में भूरी ट्राउट स्थापित करने का प्रथम प्रयास वर्ष 1910 में किया गया, जब 10,000 नैनयुक्त अण्डे भवाली (नैनीताल) हैचरी में पहुंचाये गये। पुनः 1912 ट्राउट की अंगुलिकाऐं नैनीताल जनपद की विभिन्न झीलों में डाली गई, लेकिन इन झीलों में ट्राउट जीवित नहीं रह पायी, जिसका कारण झीलों का अधिक वाष्पन होना था। इसी प्रकार वर्ष 1909 में अवलांच (नीलगिरि) में ट्राउट हैचरी की स्थापना कर श्री एच0सी0 बिल्सन द्वारा सफलतापूर्वक ट्राउट स्थापित करवायी।

आकार एवं रंग

भूरी ट्राउट का शरीर सुदृढ़, लम्बाकार, कुछ चपटा एवं टौरपीडो की तरह का होता है। पृष्ठ भाग में वसीय पक्ष होता है जो इसके निचले भाग में स्थित गुदीय पक्ष के पिछले सिरे के बराबर में रहता है। शल्क छोटे–छोटे होते हैं। इन मछलियों के रंग पर आवासीय स्थल भोजन तथा प्रजनन काल का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है, लेकिन सामान्यतः भूरी ट्राउट का पृष्ठ भाग गहरे तथा निचला भाग हल्के रंग का होता है। शरीर के भूरे रंग के कारण इसे भूरी (ब्राउन) ट्राउट नाम से जाना जाता है। इसके शरीर का पृष्ठ भाग भूरे रंग का होता है। पृष्ठभाग में लाल रंग के छोटे गोलेनुमा धब्बे होते हैं, जिनके बाहरी किनारे हल्के रंग के होते हैं। लेकिन अपरिपक्व मछली में पृष्ठ भाग के धब्बे नीले भूरे रंग के होते हैं। इस तरह इन धब्बों को देखकर परिपक्व अथवा अपरिपक्व मछलियों को आसानी से पहिचाना जा सकता है। इन मछलियों का निचला भाग सफेद–पीले रंग का होता है। लैंगिक रूप से परिपक्व नर मछली का निचला जबड़ा मजबूत तथा चम्मच के आकार का मुड़ा होता है।

मछली का पृष्ठ भाग गहरे रंग का तथा निचला भाग हल्के रंग का होता है तथा इसके पृष्ठ भाग मे लाल रंग

के छोटे–छोटे गोलेनुमा धब्बे होते हैं, जिनमे किनारे हल्के रंग के होते है। मछली का निचला भाग सफेद पीले रंग का होता है। अपरिपक्व मछली के पृष्ठ भाग के धब्बे नीले भूरे रंग के होते है। इस तरह अपरिपक्व तथा परिपक्व मछलियों को आसानी से पहचाना जा सकता है। लैंगिक रुप से परिपक्व नर मछली का निचला जबड़ा मजबूत तथा चम्मच नुमा मुड़ा हुआ होता हैं, जिसे ''काइप'' कहा जाता है।

आवास स्थल

भूरी ट्राउट अपने मूल आवास क्षेत्रों में उच्च, मध्यम तथा निचले पर्वतीय भागों तथा घाटियों में स्थित नदियों एवं सदाबहार नालों के तेज बहाव वाले स्थलों में रहती हैं तथा झीलों में भी इसकी उपलब्धता के प्रमाण मिलते हैं। यह मीठे जल की मछली हैए लेकिन समुद्री जल में भी यह कुछ समय के लिए रह सकती है।

यह मछली गहरी झीलों में भी रह सकती हैं तथा अपने आवासों में यह पेड़ों की छाया वाले जलीय आवासों तथा चट्टानों या पत्थरों के नीचे कम प्रकाश वाले क्षेत्रों में रहना पसन्द करती हैं। अपने को पत्थरों चट्टानों तथा पादपों के नीचे छिपा लेती हैं। भूरी ट्राउट के लिए 18.0 से 23. 00 सें.ग्रे. तापमान अधिक अनुकूल रहता है। यह भी इन्द्रधनुषी ट्राउट की तरह पर्याप्त आक्सीजन युक्त शीतलजल पसंद करती है, लेकिन यह इन्द्रधनुषी ट्राउट से अधिक तापमान संवेदी होती है। अर्थात् भूरी ट्राउट, इन्द्रधनुषी ट्राउट की तरह उच्च तापमान सहन कर सकती है। भूरी ट्राउट सामान्यतः जल स्रोतों के तल पर रहती है।

प्राकृतिक एवं कृत्रिम आहार

ट्राउट वर्ग की प्रजातियों की तरह ही भूरी ट्राउट भी एक मांसाहारी मछली है। यह कम रोशनी वाले क्षेत्रों में रहती है तथा कोई भी छोटा सजीव जन्तु दिखायी देने पर उसको झपटकर खा जाती है। यह रात्रि में भी अपना शिकार करती है। यह पौने अथवा अंगुलिका अवस्था में छोटे कीट, लार्वा व जन्तु प्लवकों पर भोजन करती है तथा बड़ी हो जाने के पश्चात् तलहटीय जन्तु झींगे, लार्वा, कीट, सतह पर उड़कर आने वाले कीट पतंगे, घोंघे, छोटी मछलिया यहाँ तक कि अपने ही बच्चों को भी खा जाती है। इस तरह भूरी ट्राउट मछली भी स्वजाति भक्षी श्रेणी में आती है। यह मेंढक, टोड तथा सांप के छोटे बच्चों तक को खा जाती है।

यह मछली मुख्यतः नदियों एवं नालों में क्रीड़ा प्रजाति के रूप में उपयोग की जाती है। इसके प्रजनकों, हैचरी उत्पादित पौना तथा अंगुलिकाओं को कृत्रिम आहार दिया जाता है जो सामान्यतः इन्द्रधनुषी ट्राउट के आहार की तरह फैक्ट्री उत्पादित होता है। इन्द्रधनुषी ट्राउट की तरह यह मछली कृत्रम आहार को बहुत पसन्द नहीं करती है तथा इसकी वृद्धि भी अपेक्षातया कम होती है।

उपयोगिता

यद्यपि भूरी ट्राउट में भी पालन योग्य गुण हैंए लेकिन अपेक्षतया कम शारीरिक वृद्धि दर तथा अत्यधिक मांसाहारी एवं स्वजाति भक्षी लक्षण के कारण यह इन्द्रधनुषी ट्राउट की तरह पालन हेतु अधिक उपयोगी नहीं मानी जाती है। इसलिए इस मछली का हैचरी में प्रजनन कर मत्स्य बीज अथवा अंगुलिकाएं नदियों एवं सदाबहार नालों में संग्रहित किये जाते हैं, जहां यह महत्वपूर्ण क्रीड़ा मछली के रूप में मत्स्य आखेटकों (एंगलर) के मनोरंजन का साधन बनती है। भारतवर्ष की एक अन्य ट्राउट, राइमस बोला अथवा इंडियन ट्राउट, पर्वतीय नदियों में पाई जाती हैं, जिसकी क्रीडा मत्स्य के रूप में विशेष मान्यता है, लेकिन पर्यावरण में परिवर्तन तथा अत्यधिक दोहन के कारण यह प्रजाति कम होती जा रही है।

काला बांस

काला बांस का शरीर सामान्यतः सफेद तथा रेखायुक्त एवं सिर अपेक्षाकृत छोटा होता है। मध्य पर्वतीय ऊँचाई वाले क्षेत्रों में इस शाकाहारी मछली की कार्प मिश्रित मछली पालन के रूप में संवर्धन की अपार सम्भावनाऐं, इसकी घुमन्तु प्रवृति तालाब में अतिरिक्त पैरिफाइटन की वृद्धि को नियंत्रित करने में भी सहायक होती है।

पर्वतीय क्षेत्रों में एक्वापौनिक्स द्वारा किसानों की सम्पन्नता

विपिन कुमार विश्वकर्मा, नित्यानन्द पाण्डे, *हरीश चन्द्र सिंह बिष्ट एवं सन्तोष कुमार
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल
*डी.एस.बी. परिसर, कुमाऊं विश्वविद्यालय नैनीताल

पर्वतीय क्षेत्रों में खेती–बाड़ी सीमित साधनों पर आधारित है जिसमें मछली पालन एक अतिरिक्त आय के साधन के रूप में प्रचलित है। पर्वतीय क्षेत्रों के कृषक मत्स्य पालन पर पूर्णतः निर्भर नही है फिर भी किसानों की आय को बड़ाने में मत्स्य पालन महत्वपूर्ण है। कृषि एवं बागवानी के साथ मछली पालन किसानों की आय वृद्धि में सहायक है परन्तु पर्वतीय क्षेत्रों में भौगोलिक विविधता के कारण यह लाभ प्रत्येक इच्छुक कृषक तक पहुँचाना सम्भव नही हो पा रहा है।

कालान्तर में वैश्विक तापमान में वृद्धि एवं जल स्त्रोतो के कम होने एवं जल स्तर में निरन्तर गिरावट के कारण अब कई कृषक चाह कर भी मत्स्य पालन नही कर पा रहे हैं। मत्स्य पालन के इच्छुक कृषक पानी की कमी के कारण मत्स्य पालन को अपनाने से वंचित हो रहे हैं क्योंकि या तो उनके क्षेत्र में पानी की कमी है या पानी केवल सीमित समयान्तराल के लिए ही उपलब्ध हो पाता है। इस लिए पानी की अपर्याप्त उपलब्धता के चलते कृषि/बागवानी व मत्स्य पालन करना मुश्किल हो जाता है। इसके अलावा भूमि की उपलब्धता भी एक महत्वपूर्ण कारक है, जिसमें कृषक भूमि की अपर्याप्ता के कारण मत्स्य पालन में पीछे रह जाने को मजबूर होते है।

यदि इन सभी समस्याओं का आंकलन किया जाए तो एक निष्कर्ष यह भी निकाला जा सकता है कि पानी व भूमि की कमी कृषकों की कृषि/बागवानी व मत्स्य पालन को पूर्णतः प्रभावित करता है।

कहा जाता है कि प्रकृति की प्रत्येक समस्या का निदान भी प्रकृति में ही निहित होता है। ठीक उसी प्रकार पर्वतीय क्षेत्रों में पानी की समस्या से उत्पन्न कृषि, मत्स्य एवं बागवानी में कमी का निदान भी खोज लिया गया है। इस निदान को वैज्ञानिकों ने नाम दिया "एक्वापौनिक्स" जोकि एक्वाकल्चर (जलीय पालन) व हाइड्रोपोनिक्स (जल संवर्द्धित कृषि अथवा जलीय कृषि) बागवानी का मिला–जुला व्यवहार है। एक्वाकल्चर में पानी का उपयोग करके मछली उत्पादन किया जाता है जबकि हाइड्रोपोनिक्स में मिट्टी के बजाय केवल पानी के उपयोग से ही कृषि/बागवानी की जाती है।

दूसरे शब्दों, में इसे बिना मृदा की कृषि/बागवानी अथवा जलीय कृषि अथवा जल सवंर्धित कृषि कहा जा सकता है। एक्वापोनिक्स तकनीक से न केवल जल का उपयोग कृषि/बागवानी के लिए किया जाता है अपितु इस तकनीक से कृषि/बागवानी वाले पानी का उपयोग मत्स्य पालन के लिए किया जाता है एवं मत्स्य पालन के लिए प्रयोग किया जाता है। पानी के इस चक्र के कारण पानी का सरंक्षण किया जाता है एवं कम पानी से पुनः लाभ प्राप्त किया जाता है।

एक्वापौनिक्स कैसे काम करता है?

इस पद्धति में पानी को एक चक्रीय प्रणाली में प्रवाहित किया जाता है जिससे कि पानी का भरपूर उपयोग प्रत्येक चरण में किया जा सके। इसके लिए सवंर्धित जल को मछली के तालाब में डाला जाता है, जहां यह मछली द्वारा उत्सर्जित पदार्थों से पोशक तत्व ग्रहण कर लेता है, फिर पोशक तत्वों से भरपूर यह जल पौधों के लिए प्रयोग किया जाता है। जहां पोशक तत्वों का उपयोग पौधों द्वारा कर लिया जाता है वहां फिर पुनः इस जल को संग्रहित करके फिर से मछली के तालाब में भेज दिया जाता है।

एक्वापौनिक्स को निम्न चरणों में समझा जा सकता है

चरण 1. मत्स्य पालन तालाब

एक्वापौनिक्स के चक्र में मत्स्य पालन तालाब को प्रथम चरण मानना इस प्रणाली को समझने की सर्वोतम युक्ति होगी। यह वह चरण है जहाँ पर पानी का पहली बार उपयोग होता है। इस जल का उपयोग मछली तालाब के लिए किया जाता है जहां पर मत्स्य आहार एवं तत्पश्चात मछली द्वारा उत्सर्जित पदार्थों का संग्रहण

होता है आहार एवं उत्सर्जित पदार्थों में नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होने से धीरे–धीरे यह पानी मत्स्य पालन की दृष्टि से दूषित अथवा हानिकारक होने लगता है।

मत्स्य पालन के पारम्परिक तरीकों में नाइट्रोजन यौगिक से भरपूर इस जल को प्रवाहित कर दिया जाता था, परन्तु एक्वापौनिक्स में इस जल का उपयोग दूसरे चरण के लिए किया जाता है।

चरण 2. पौधों द्वारा नाइट्रोजन का स्थिरीकरण

प्रथम चरण में मछली द्वारा उपयोग किए गए जल में मत्स्य आहार व उत्सर्जित पदार्थों के कारण नाइट्रोजन जोकि नाइट्राइट व अमोनिया के रूप में उपस्थित रहता है, बढ़ जाता है। अमोनिया व नाइट्राइट तीनो ही मत्स्य पालन की दृष्टि से मछलियों के लिए एक निश्चित मात्रा के बाद हानिकारक होने लगते है।

इन तीनों का निस्तारण पौधे नाइट्रोजन के स्थिरीकरण की विधि द्वारा कर देते है एवं नाइट्रोजन युक्त इस जल से पौधों का विकास एवं वृद्धि बेहतर होने लगती है। पौधों की जड़ो में उपस्थित लाभकारी बैक्टीरिया अमोनिया व नाइट्राइट को नाइट्रेट में परिवर्तित कर उसे पौधे की वृद्धि में सहायक बना देता है और इस प्रक्रिया में शेष बचा जल अब नाइट्रोजन मुक्त हो जाता है जिसे संग्रहण के लिए तृतीय चरण में अग्रसारित कर दिया जाता है।

चरण 3. जल का संग्रहण एवं निस्पादन

द्वितीय चरण से अग्रसारित जल का संग्रहण एक टैंक में कर लिया जाता है जहां से इसे पुनः प्रथम चरण में प्रवाहित कर दिया जाता है और यह पुनः मत्स्य पालन के लिए उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार तीनों चरणों से होते हुए जल का उपयोग बार–बार किया जाता है जिससे कम जल की उपलब्धता के चलते भी मत्स्य पालन के साथ कृषि/बागवानी दोनो से लाभ लिया जाता है।

एक्वापौनिक्स से क्या लाभ ?

1. कम स्थान की आवश्यकता
2. जल का समुचित संग्रहण
3. कृषि/बागवानी में खरपतवार रहित
4. मृदा की आवश्यकता नही होती
5. पौधों की बेहतर बढ़वार
6. पूर्ण पेस्टिसाइड/इंसेक्टिसाइड मुक्त उत्पाद
7. सतत् कृषि प्रणाली

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि एक्वापोनिक्स जल संवर्धन में सहायक है एवं इससे कम स्थान का भरपूर दोहन कर कृषि/बागवानी व मत्स्य पालन से पूर्ण आर्गेनिक उत्पाद प्राप्त किए जा सकते है। जिसमें खरपतवार इत्यादि का भी कोई भय नही होता।

चूंकि पर्वतीय क्षेत्र में कृषकों की मुख्य समस्या अपर्याप्त जल व अपर्याप्त भूमि है एवं सत्त कृषि के लिए कृषि/बागवानी के चुनिंदा संसाधन होते है। अतः एक्वापौनिक्स थोड़ी सी भूमि और जल के दोहन से शुरू किया जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र के कृषकों के लिए एक बेहतर विकल्प साबित हो सकता है।

सुनहरी महाशीर

हिमालयी उप-महाद्वीप के पर्वतीय मात्स्यिकी की सुनहरी महाशीर एक महत्वपूर्ण साइप्रिनिड मत्स्य प्रजाति है हिमालयी विरासत एवं संस्कृति से जुड़ी यह मछली आर्थिक एवं मत्स्य आखेट हेतु प्रमुख मछली है। सुनहरी महाशीर की प्राकृतिक जल क्षेत्रों में दिनों-दिन कम होती जा रही है, जिसके परिणाम स्वरूप IUCN संस्था द्वारा इसे "संकटग्रस्त" मत्स्य प्रजाति घोषित किया गया है।

एकीकृत मत्स्य पालन

लक्ष्मी प्रसाद, आशीष कुमार मौर्या एवं दिनेश कुमार
मात्स्यिकी महाविद्यालय नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद

हमारे देश में अधिकांश मत्स्य पालकों के पास छोटे–छोटे तालाब हैं। अधिक मत्स्य उत्पादन प्राप्त करने के लिये सघन, मिश्रित मछली पालन एंव एकीकृत मत्स्य पालन तकनीकें का विकास एवं प्रचार प्रसार हुआ है। एकीकृत मत्स्य पालन विधि में कृषि आधारित अन्य व्यवसायों जैसे कि मछली पालन के साथ साथ सब्जी उत्पादन, बकरी पालन, बत्तख पालन, गाय पालन, सुअर पालन, धान उत्पादन एंव फलदार बृक्ष रोपण जैसे अनेक कृषि आधारित उद्योगां का संचालन संयुक्त रूप से एक ही इकाई पर किया जाता है। इस विधि में कृषि आधारित इकाइयों से प्राप्त अपशिष्ट पदार्थ मत्स्य पालन में प्रयोग किये जाते हैं, जिसके कारण तालाब में खाद एवं परिपूरक आहार की आवश्यकता कुछ सीमा तक कम हो जाती है एवं मत्स्य उत्पादन में हमारी लागत कम हो जाती है। एकीकृत मत्स्य पालन द्वारा आर्थिक हानि का जोखिम भी अन्य संयुक्त व्यवसायों से होने वाली आय के कारण कम हो जाता है, साथ ही साथ मत्स्य पालन करने से जल एंव जमीन जैसे–संसाधनों का परिवेश के अनुकूल समुचित उपयोग होता है।

एकीकृत मत्स्य पालन हेतु तालाब की तैयारी एंव प्रजातियों का चयन

मत्स्य बीज संचय से पहले तालाब को अच्छी तरह से बन्धों, जल निकासी द्वारों की मरम्मत कर लेना चाहिए। जलीय खरपतवार एंव कीटों का नियंत्रण डीजल एंव साबुन के घोल को प्रयोग कर सकते हैं। मत्स्य बीज की जैविक दर अच्छी रहे इसलिये प्राकृतिक एंव गुणवत्ता युक्त कृतिम आहार की एंव अतिरिक्त वायु कारक (एअरेटर) यन्त्रों की पहले से व्यवस्था करना चाहिए। जलीय कीटों, खरपतवारों एवं परभक्षी मछलियों को बीज संचय से पहले नियन्त्रित कर लेना चाहिये। तालाब को तीन से

चार साल के अन्तराल पर सुखाकर 10–15 से0मी0 गहराई तक जुताई करते है जिससे कार्बनिक पदार्था के आक्सीकरण में तेजी आती है साथ ही साथ तलहटी में उपस्थिति कीटों, प्यूपों एंव उनके अंडों का भी विनाश हो जाता है। जुताई के बाद जब तालाब की मिट्टी में नमी 10–15 प्रतिशत तक रह जाय तब पानी भर कर चूने का प्रयोग 200–250 कि0ग्रा0 प्रति हे/मी0 गहराई की दर से करना चाहिए। चूना डालने के 10–12 दिन के उपरान्त प्लवकों के पर्याप्त उत्पादन के लिए गोबर की कच्ची खाद एवं रसायनों संतुलित का प्रयोग किया जाता है। तालाब का जल जब हल्का हरा भूरे रंग का हो जाय तब मत्स्य बीज संचय करते हैं। पालन के लिए शीघ्र बढ़ने वाली, बाजार में जिनकी खपत अच्छी हो, जिन प्रजातियों में भोजन के लिये कम से कम प्रतिद्विन्दता हो, मत्स्य बीज आसानी से उपलब्ध हो एंव जैव विविधता को किसी प्रकार का कोई नुकसान न पहूंचाये, ऐसी मत्स्य प्रजातियों का चयन किया जाता है। भारतीय मेजर कार्प (कतला, रोहू, मृगल) एंव विदेशी कार्प (सिल्वर

कार्प, ग्रासकार्प एंव कॉमन कार्प) एकीकृत मत्स्य पालन के लिये उपयुक्त है। इनका संचय अनुपात 3:4:3 अथवा 4:3:3 रखते है।

एकीकृत मत्स्य पालन की प्रणालियाँ

मुर्गी सह मत्स्य पालन

मुर्गी सह मत्स्य पालन तकनीक में प्रति हैक्टेयर जल–क्षेत्र के लिये 500–600 मुर्गियां पर्याप्त होती है। मुर्गी की प्रजातियों में ब्रायलर, रोड आइस लैण्ड, काकरेल, गिनी फाउल या लेगहार्न एवं देशी प्रजातियां प्रमुख हैं। इनका बाड़ा बन्धे पर ही बनाया जाता है एंव उनको बाहर नहीं छोड़ा जाता है। एक वर्ग मी. क्षेत्र में 4–5 मुर्गियों को रखा जा सकता है। मुर्गियों को आहार 40–50 ग्राम प्रति मुर्गी प्रतिदिन की दर से दिया जाता है, इनसे प्राप्त अपशिष्ट पदार्थो को सीधे तालाब में खाद के रूप में प्रयोग करते हैं। मुर्गी सह मत्स्य पालन में मछली पालन की अवधि एक वर्ष एंव मुर्गी को एक महीने में वान्छित वजन ग्रहण करने के उपरान्त बेच देते हैं। इस तकनीक से अनुमानित मत्स्य उत्पादन 3–5 टन प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष अण्डे देने वाली मुर्गियों से 80,000 से 1,00000 अण्डों के अतिरिक्त 600–1000 कि. ग्रा. मांस एक वर्ष में प्राप्त किया जा सकाता है, जो कि आय में बृद्धि के स्रोत होते हैं।

बत्तख सह–मत्स्य पालन

बत्तख के बाड़े का निर्माण बन्धे पर किया जा सकता है। खाकी केम्पवेल, इंडियन रनर व व्हाईट पेकिंग इनकी प्रमुख प्रजातियां हैं। प्रति हैक्टेअर तालाब पर 250–300

बत्तख रख सकते हैं। इनके बाड़े का दरवाजा सीधे तालाब में खुलता है। बत्तखें तालाब से छोटे–छोटे कीड़े मकोड़े उनके डिम्बकों एंव जलीय वनस्पतियों को खाती हैं। बत्तखें पानी में तैरती रहती हैं, जिससे पानी में आक्सीजन की मात्रा बढ़ती है, साथ ही साथ अपने त्यागे हुए अपशिष्ट पदार्थो से तालाब की उर्वराशक्ति को बढ़ाती हैं। बत्तखों को 100 ग्राम प्रति बत्तख प्रतिदिन की दर से भोजन दिया जाता है, छः महीने बाद ये अण्डे देना प्रारम्भ कर देती हैं तथा दो वर्ष तक अण्डे देती रहती हैं। इनसे प्राप्त अण्डे व मांस अतिरिक्त आय का साधन होते हैं।

सुअर सह मत्स्य पालन

सुअरों के लिये बन्धे पर बाड़ा बनाया जाता है। एक सुअर के लिये 1–2 वर्ग मी. स्थान की आवश्यकता होती है। एक हेक्टेअर तालाब क्षेत्र में 30–40 सुअर पर्याप्त होते हैं तथा इनसे प्राप्त अपशिष्ट पदार्थो को तालाब में खादीकरण के लिये प्रयोग करते हैं। रसोई से प्राप्त (किचन वेस्ट), जलीय पौधे, एवं फसलों के बचे हुए दाने इनका भोजन होते हैं। भोजन पर्याप्त मात्रा में मिलने पर 6 माह में लार्ज व्हाइट यार्क शायर, लेण्डरेस तथा हैम्पशायर जैसी प्रजातियॉ 60–70 किलो वजन प्राप्त कर लेती हैं, जिसकी मॉग कई क्षेत्रों में लगातार बनी रहती है।

गाय–सह–मत्स्य पालन

गौशाला तालाब के एक किनारे पर बनाई जाती है। एक गाय के लिये 6 वर्ग मी. जगह की आवश्यकता होती है। इनसे प्राप्त गोबर तथा मूत्र नाली द्वारा जरूरी मात्रा में तालाब में प्रविष्ठ कराये जाते हैं। ये पदार्थ तालाब को नत्रजन, फास्फोरस, पोटेशियम के अलावा कार्वनिक तत्व प्रदान करते है जो कि मत्स्य भोजन के उत्पादन में मदद करते हैं। एक हेक्टेअर के तालाब पर 10–15 गाय अथवा भैंस पर्याप्त होतीं है। एक गाय औसतन 6 ली. दूध एंव भैंस इससे अधिक दूध प्रतिदिन देती है। उन्नत प्रजाति की गाय, भैंस दूध की और अधिक मात्रा दे सकती है, जिससे आय में वृद्धि की जा सकती है।

बकरी सह–मत्स्य पालन

बकरी सह–मत्स्य पालन में उन्नत प्रजाति की बकरियां को तालाब परिक्षेत्र में पालते हैं। एक बकरी के लिये 2 वर्गमीटर स्थान की आवश्यकता होती है। बकरियों के चारे हेतु बरसीम, सूडान घास को तालाब के बन्धे पर उगाते हैं। बकरियों से प्राप्त खाद को तालाब में डालते हैं। एक हेक्टेअर तालाब पर 30–40 बकरियां रख सकते हैं। अच्छी प्रजाति की बकरी जैसे–बरबरी व जमुनापारी हर छः महीने में 1–3 बच्चे तक देती है। 6–7 महीने में इनके बच्चे बेचने योग्य हो जाते हैं, जिन्हें बेंचकर किसान अपनी आय में बृद्धि कर सकते हैं।

कृषि सह–मत्स्य पालन

इस तकनीक में तालाब परिक्षेत्र में मिर्च, छोटे फलदार वृक्ष जैसे, केला, नींबू, पपीता एंव विभिन्न प्रकार के फूलों का उत्पादन कर सकते हैं। छोटे वृक्ष होने के कारण ये तालाब के बन्धों को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं।

धान सह मत्स्य पालन

इस प्रकार का समाकलित मत्स्य पालन जल की अधिकता वालें क्षेत्रों में सफल रुप में किया जा सकता है। जिस क्षेत्र में जल–धारण–क्षमता अधिक हो एवं वर्षा का पानी 5–6 महीने तक थमता हो इन क्षेत्रों में धान की लम्बी किस्म या गहरे जल मे होने वाली किस्मों को लगाय जाता है जैसे जलमग्न (उत्तर प्रदेश), जलधि (पश्चिम बंगाल), जयसुरिया (हिसार) आदि।

इसके लिये धान के खेत के चारों ओर नाली का निर्माण करते हैं जिसकी चौड़ाई लगभग छः मी0 एंव गहराई 1–1.5 मी0 तक रखते हैं। मई के महीने में खेत को धान बोने के लिए तैयार करते है। साथ ही मॅछलियों के लिये खाई भी बना ली जाती है। मानसून के पहले वर्षा के बाद ही धान की बीजाई की जाती है। वर्षा प्रारम्भ होने से पहले पानी ट्रैंच में और फिर पूरे भूखंड पर एकत्रित हो जाता है। इस समय धान के पौधे तेजी से बढने लगते हैं जुलाई माह में 500–600 मछली के बच्चे प्रति हेक्टैयर की दर से संचित कर लिये जाते है मछलियों की अच्छी बढोत्तरी के लिए कृत्रिम आहार उपलब्ध कराया जाता है, जिससे मछली की उत्पादकता अच्छी मिलती है। सितम्बर–अक्टूबर तक खरीफ की फसल तैयार हो जाती है तब फसल की कटाई ऊपर से ही कर लेते है, जिससे निचला भागपानी में सड़ गल कर मृदा एवं जल की उर्वरकता को बढता रहता है फलस्वरुप मंछलियों को प्लवक प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है।

रबी–फसल के लिये भूखंड को खाद एवं उर्वरक द्वारा तैयार कर लिया जाता है। इन महीनों में पानी में धीरे–धीरे कम होने लगता है।, अतः जाल चलवा कर बड़ी मछलियों को निकालकर बेच दिया जाता हैं जनवरी–फरवरी तक रबी की फसल तैयार हो जाती है। एवं मछलियों को भी जाल चलवाकर खाई से पूर्णतः निकाल लिया जाता है। इस प्रकार वर्ष में पानी की सुविधानुसार धान की दो फसलों के साथ मछली की एक फसल 1000–1500 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। यह उत्पादन अतिरिक्त आय प्रदान करतर है।

मत्स्य पालन सह कृषि सह पशु पालन

समेकित मत्स्य पालन में कृषि एवं बागवानी संग मत्स्य पालन कर कृषि के व्यवसायीकरण पर जोर दिया जा रहा है। इस तकनीक से सीमांत कृषक अपनी सीमित भूमि का उपयोग विभिन्न कार्यों में कर जीविकोपार्जन हेतु पर्याप्त धन कमा सकते है। इस तरह के मत्स्य पालन में कृषक एक ही भूमि पर मत्स्य पालन, बागवानी तथा कृषि एक साथ कर प्रेक्षेत्र का पूरा उपयोग करते है। तालाब में आधुनिक वैज्ञानिक विधि द्वारा मत्स्य पालन किया जाता है, बागवानी में बंधों पर छोटे फलदार वृक्ष जैसे पपीते, केले, अमरुद, नीबूं के पेड़ लगाये जाते हैं। बंधों पर अथवा तालाब के आसपास छोटी क्यारियों में मौसमी सब्जियॉ फूलगोभी, लोबिया, धनिया, गाजर, प्याज, हरी मटर उगाई जाती है। इनसे प्राप्त फल एवं सब्जियॉ अतिरिक्त आय का स्रोत होते हैं। बचे हुये न खाये जाने वाले भागों को

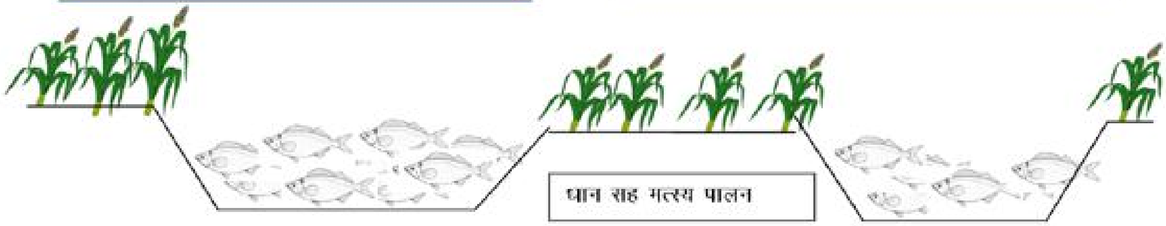

ग्रास कार्प के लिये खाने में प्रयोग कर लिया जाता है।

वर्षा काल के बाद तालाब को खाली करके तली पर जमा गाद का प्रयोग खेतों या फल सब्जियों की क्यारियों में किया जाता है जो मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाता है। तालाब के उर्वर जल का प्रयोंग फसलों की सिंचाई के लिये भी किया जाता है। तालाब प्रक्षेत्र पर किसान के घर के पास पशुशाला एवं जैवगैस संयंत्र स्थापित करते हैं पशुओं से प्राप्त गोबर को जैवगैस संयंत्र में डाला जाता है, संयंत्र से प्राप्त मीथेन, गैस ईंधन के रुप में प्रयुक्त होती है तथा इसकी पंक को भी फसलों, फल सब्जियों तथा तालाब को खादयुक्त करने में प्रयोग कर लेते है।

एकीकृत मत्स्य पालन में एक विधा से प्राप्त होने वाले अनुपयोगी पदार्थ मत्स्य उत्पादन को बढ़ाने में सहायता करते हैं, जिससे किसानों की लागत में कमी एवं आय में अनुपातिक वृद्धि होती है। इस प्रकार की मत्स्य पालन तकनीक ग्रामीण भारत के लिये सर्वात्तम सिद्ध हुई है। इस तकनीक में मत्स्य उत्पादन 3–5 टन प्रति हैक्टेयर प्रतिवर्ष तक प्राप्त किया जा सकता है, इसके अतिरिक्त एकीकृत मत्स्य पालन प्रक्षेत्र पर पशु, पक्षियों एंव कृषि आधारित इकाइयों से प्राप्त धन अतिरिक्त आय के साधन होते हैं। चूँकि एक सीमित कृषि–जल क्षेत्र का एकीकृत मत्स्य पालन में समुचित उपयोग होता है यह तकनीकी किसानों एवं मत्स्य पालकों को उत्तम पोषक तत्वों युक्त आहार एंव अतिरिक्त आय का स्रोत होते हैं। इस प्रकार अपनी सीमित भूमि का भरपूर से प्रयोग कर एक सीमांत कृषक अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है

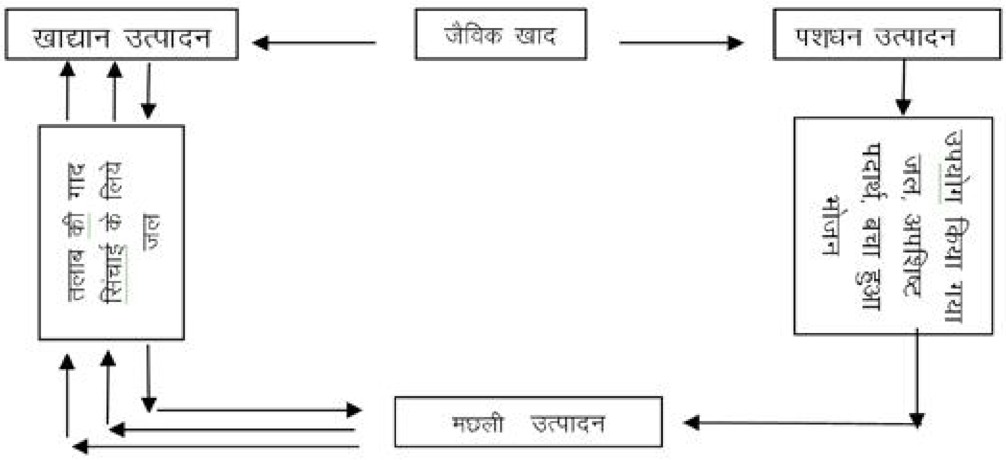

असेला

सामान्यतः असेला 3 वर्ष से अधिक समय में परिपक्वता प्राप्त करती है। वर्ष में दो बार (फरवरी-मई तथा अगस्त-अक्टूबर) अण्डे देती है। अगस्त-अक्टूबर के समय को व्यापक पैमाने पर बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त माना जाता हैं। प्राकृतिक रूप से स्वच्छ जल, तलछट में ककंड़-पत्थर, बजरी आदि का पर्याप्त मात्रा में जमाव तथा 1.5–3 ली./सेकेण्ड जल प्रवाह पी.एच. 7–4–8.2, घुलित ऑक्सीजन की सघनता 8–10 मिग्रा/अण्डजनन के लिए बेहतर प्राकृतिक वातावरण बनाता है।

रंगीन मछली पालन हेतु एक्वेरियम निर्माण

शिव कुमार शर्मा
कृषि विज्ञान केन्द्र, काशीपुर

बेरोजगारी वर्तमान समय की अनेक समस्याओं में से एक प्रमुख समस्या है। सरकार का भी मानना है कि युवा नौकरी पर निर्भर रहने की अपेक्षा स्वरोजगार हेतु लघु उद्योग प्रारम्भ करें। इसके दृष्टिगत रंगीन मछली पालन एक लघु उद्योग के रूप में विकसित करके युवा कम लागत में एक अच्छा व्यवसाय शुरू कर सकते है। आजकल की भागदौड़ और तनावपूर्ण जीवनचर्या में यदि घर लौट कर आने पर आपको शान्ति प्रदान करने वाला नजारा देखने को मिलेगा तो निश्चय ही वो आपका मन मोह के आप की चिन्ताएं कम करने का प्रयास करेगा। अतः ऐसे में रंगीन मछली पालन को एक उद्योग की तरह युवाओं में स्वरोजगार हेतु स्थापित करने की अपार सम्भावनाएं है। रंगीन मछली पालन हेतु आवश्यक समस्त जानकारी इस लेख में वर्णित की गयी है।

सामान्य सिद्धान्त

मछलियों को पालने से पहले हमें उनके जीवन जीने के तरीकों का कुछ ज्ञान आवश्यक है जैसे अन्य जलीय जीवों के समान मछली भी हवा में मौजूद ऑक्सीजन को सांस लेने में प्रयोग करती है। अतः जितना ज्यादा पानी की सतह का क्षेत्रफल होगा, उतनी ज्यादा आक्सीजन पानी में जायेगी। इसके लिए एक आयताकार टैंक का प्रयोग किया जाता है। यह सामान्यतः कांच की दीवार एवं तली से बनता है जो कि एक धातु के फ्रेम में फिट होता है। धातु का फ्रेम एंगल आयरन अथवा एल्युमिनियम का बना होता है तथा विटामिन से अच्छी तरह सील बन्द होता है। आजकल सिलिकॉन रबर द्वारा कांच को चिपकाने की विधि अधिक प्रचलन में है।

टैंक सामान्यतः कई आकारों के बनाये जाते हैं। सबसे बड़े आकार का टैंक जो कि आसानी से व्यवस्थित किया जा सकता है जिसकी 60 सेमी0 लम्बाई, 30 सेमी0 चौड़ाई, एवं 40 सेमी0 ऊंचाई का होती है, (24 इंच x 12 इंच x 15 इंच) जिसमें 57 ली0 पानी आ सकता है।

टैंक को एक समतल मेज अथवा स्टैण्ड जहाँ पर अच्छी रोशनी आती हो, पर इस प्रकार रखें कि जिससे वे हिले नहीं। एक नये टैंक अथवा पुराने टैंक को कुछ समय खाली रखना चाहिए जिससे कि उसमें यदि पानी आदि का रिसाव हो रहा हो तो पता चल जाये। रिसाव सामान्यतः अपने आप कुछ दिन में बंद हो जाता है। यदि अपने आप रिसाव बंद नहीं होता है तो टैंक को अच्छी तरह सुखाकर रिसाव की जगह को पुनः बन्द करते हैं। टैंक को एक बार भरने के बाद उसे एक जगह से दूसरी जगह पर नहीं ले जाना चाहिए इससे उसमें रिसाव होने की सम्भावना बढ़ जाती हे।

मछली के टैंक को खिड़की से थोड़ा दूर इस प्रकार रखना चाहिए कि उसे प्रकाश आदि मिलता रहे। अधिक प्रकाश मछली के लिए हानिकारक तो नहीं है परन्तु यह शैवाल एवं छोटे–छोटे पौधों की अत्यधिक वृद्धि के लिए सहायक है जो कि पानी को हरे रंग में परिवर्तित कर देते हैं तथा शीशे आदि पर हरी तह भी बना देते है। प्रायः इससे बचने के लिए टैंक की पिछली दीवार पर पेपर या पेंट आदि लगा दिया जाता है।

कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था

अपर्याप्त मात्रा में सूर्य के प्रकाश के कारण प्रायः जलीय पौधे मुर्झा जाते हैं। इसकी कमी को दूर करने के लिए कृत्रिम प्रकाश ट्यूब आदि की व्यवस्था टैंक के ऊपर ही करनी चाहिए। हालांकि यह कोई नियम नहीं हैं कि टैंक में कितनी देर तक लाइट जलनी चाहिए परन्तु विभिन्न समयान्तराल के लिए बार–बार लाइट जला कर हम यह निश्चित रूप से यह पता लगा सकते हैं कि टैंक में पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए कितनी देर के लिए लाइट की आवश्यकता होगी। टैंक की जगह निश्चित कर लेने के पश्चात अगले चरण में टैंक में लगभग 3 सेमी0 मोटी अच्छी तरह धुले हुए बालू की तह बनायें। तह बनाने के लिए छोटे कणों वाली बालू अच्छी नहीं होती है इससे तह बहुत कठोर बनती है जिससे जलीय पौधों की जड़ों को नीचे जाने में परेशानी होती है। दूसरी तरफ यदि हम मोटी बजरी आदि बिछाते हैं तो उनके बीच में खाद्य पदार्थ फंस जाते हैं और

उन तक मछलियां पहुँच नहीं पाती हैं। अतः थोड़ी मोटी बालू जिसका आकार माचिस की तीली के सिरे जितना होता है, इस कार्य के लिए अच्छी बालू मानी जाती है। बालू को इस तरह बिछाना चाहिए कि उसमें पीछे से आगे की ओर ढलान रहे जिससे गंदगी इत्यादि आसानी से साफ की जा सके।

इसके बाद टैंक में पानी भरा जा सकता है। टैंक में पानी सीधे डालने से बालू की सतह बिगड़ सकती है अतः इसके लिए एक चौड़ा बर्तन रखकर उसमें पानी डालना चाहिए जिससे पानी बह कर बिना बालू की सतह को अस्त व्यस्त किये बिना टैंक को भर दें। बर्तन के स्थान पर एक मोटे कागज का प्रयोग भी टैंक को भरने में किया जा सकता है।

पौधे एवं सजावट

यूँ तो मछलियों को बिना पौधों वाले टैंक मे भी रखा जा सकता है परन्तु जब हम टैंक में पौधें लगाते हैं तो इसका तीन गुना प्रभाव देखने को मिलता है एक तो वे टैंक की सजावट को बढ़ा देते हैं दूसरा वो मछली को रहने–छुपने को आश्रय प्रदान करते हैं तथा तीसरा वे दिन के समय कार्बन डाई आक्साइड का प्रयोग कर ऑक्सीजन छोड़ते हैं जो कि मछलियों द्वारा प्रयोग की जाती है ।

एक्वेरियम में कई प्रजातियों के जलीय पौधें लगाये जा सकते हैं। प्रायः इन्हें दो वर्गो में बाँटा जाता हैं –जड़ीय एवं बिना जड़ वाले पौधे। जड़ीय पौधों को बालू में इस प्रकार रोपना चाहिए कि उनकी जड़ पूर्णतयाः बालू में धंस जाये, एक्वेरियम में प्रायः निम्न पौधों का प्रयोग किया जाता है:

वैलिसनेरिया एवं सेजिटेरिया

यह सबसे आमतौर पर प्रयोग किये जाने वाले एक्वेरियम पौधे हैं। ये घास जैसे दिखते हैं एवं साधारण ातयाः ईल अथवा फीता घास के रूप में पहचाने जोते हैं।

क्रपटोक्रायोन एवं अपोनोजेटॉन

इनकी पत्तियों लम्बी व नुकीली होती हैं। इनकी भी अनेक प्रजातियां उपलब्ध हैं।

सिराटोप्ट्रेरिस

यह काफी सहनशील पौधा है इसकी वृद्धि भी काफी अच्छी होती है। जब इसकी पत्तियां जल की सतह पर पहुँचती हैं तो ये छोटे–छोटे पौधे बनाती हैं जो सतह पर तैरते हैं। इनको काट कर नये पौधे की तरह रोपा जा सकता है।इनके अतिरिक्त हाईड्रोफिला, काबोम्बा एमबुलियां, सिरेटोफाइलम, माइरोफिलयम आदि एक्वेरियम के लिए उपयुक्त पौधें हैं।

जलीय पोधों को एक्वेरियम में रोपने से पहले उन्हें परजीवियों, कीटाणुओं, कीटों एवं अन्य मछलियों के शत्रुओं से पूर्णतयाः शुद्ध कर लेना चाहिए। इसे करने के लिए इन पौधों को $KMnO_4$ के विलयन में 20 मिनट तक डुबों कर रखना चाहिए अथवा नमक के घोल में थोड़ी–थोड़ी देर के समयान्तराल में डुबोना चाहिए। ज्यादा देर तक डुबोने से पौधे की मृत्यु हो सकती हे।

जलीय पौधों को लगाने के पश्चात एक्वेरियम में पत्थर आदि सजाते हैं। इनको सजाते समय हमें यह ध्यान देना चाहिए कि हम नुकीले पत्थर आदि प्रयोग न करें क्योंकि उनसे मछलियां घायल हो सकती हैं। इसके उपरान्त एक्वेरियम को लगभग एक सप्ताह तक पौधों के जड़ पकड़ने तक छोड़ देना चाहिए तथा तापमान को निर्धारित करने के उपाय करने चाहिए।

तापमान

मछलियां एक पालतू जीव की तरह से घर में रखी जाती हैं जो कि विभिन्न देशों से आयात किए जाने के कारण वे ज्यादा देर तक कम तापमान में जिंदा नहीं रह पाती हैं। 22^0 सेग्रे0 से 24^0 सेग्रे0 तक का तापमान में मछलियों के लिए उपयुक्त होता है। मछलियां प्रायः 10^0 सेग्रे0 या 5^0 सेग्रे0 के बदलाव को धीरे–धीरे सह सकती हैं। जिन स्थानों में रात का तापमान काफी कम हो वहां पर सामान्यतः डूबने वाले हीटर (इमर्शन हीटर) का प्रयोग तापमान को निर्धारित करने में किया जाता है। इसके लिए 50 से 100 वॉट तक के हीटर, जो कि एक्वेरियम के आकार पर निर्भर करता हैं अच्छे होते हैं। जिन स्थानों पर विद्युत आपूर्ति नहीं हो वहां एक्वेरियम को बालू से भरी प्लेट में रखकर उसके नीचे तेल के लैम्प से गर्म किया जा सकता है।

वायु संचारण

गर्मियों में एक्वेरियम को कम से कम 29^0 सेग्रे0 तापमान तक ठंडा करना आवश्यक है जिसे एक वातक (Aerator) के द्वारा आसानी से किया जा सकता है। यह वातक दूसरी ओर एक डिफ्यूजर से जुड़ा

होता है जो पानी में छोटे आकार के बुलबुले छोड़ता रहता है स्पंदक पम्प का प्रयोग सुविधाजनक होता है।

मछलियां

घर के एक्वेरियम में समान्यतः कार्प, लोच, कैट फिश आदि मछलियां को रखा जाता है रंगीन मछलियों को एक्वेरियम में डालने से पहले कम से कम एक हफ्ते तक किसी छोटे टैंक में रखकर यह देखना चाहिए कि वो रोगों से पूर्णतयाः मुक्त हों उनके द्वारा कोई भी बीमारी, संक्रमण आदि अन्य सभी मछलियों में फैल सकती है उसके उपरान्त ही उसे अन्य मछलियों के साथ रखा जाना चाहिए।

खाद्य

मछलियों को मत्स्य टैंक में डालने के पश्चात उनके रख रखाव हेतु खाद्य की आवश्यकता होती है। मत्स्य खाद्य को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है जीवित आहार एवं कृत्रिम आहार। जीवित आहार को प्राप्त करना काफी मुश्किल होता है, यह मत्स्य पोषण की सभी मांग को पूरा करता है। इनमें टयूँवीफैक्स, डाफनियॉ एवं मच्छरां के लारवा प्रमुख हैं। जीवित आहार को अगर एक्वेरियम में ऐसे ही डाल दें तो ये शीघ्र ही आपने आप को बालू में दबा लेते हैं जिससे अधिकतर मछलियां उन्हें खा नहीं पाती हैं अतः इसके लिए हमें आहार कप का प्रयोग करना चाहिए। आहार कप प्रायः प्लास्टिक का बना होता है जिसकी तली में छोटे–छोटे छिद्र होते हैं। इसको चूषक की सहायता से दीवार पर चिपका दिया जाता है जसमें से धीरे–धीरे कीड़ें निकलकर पानी में जाते हैं और मछलियां उन्हें साथ–साथ ग्रहण करती हैं।

कृत्रिम आहार सामान्यतः जौ, गेहूँ एवं सूखे झींगा आदि से बना होता है जिसमें कभी–कभी अन्डा आदि भी मिलाया जाता है। इन अवयवों को थोड़े पानी अथवा दूध में मिलाकर गूंध लिया जाता है तथा हल्का सा पकाकर धूप में सुखा लिया जाता हैं। सूखने के बाद इसे पीसकर मछलियों को खिलाते हैं। मत्स्य खाद्य को मछलियों को देते समय हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए कि पीसे हुए मत्स्य आहार का आकार मत्स्य के मुख के आकार से छोटा होना चाहिए।

खाद्य व्यवस्था

मछलियों को आहार सुविधानुसार कम से कम दो बार अवश्य देना चाहिए जिसमें एक सुबह एक एवं दोपहर के बाद। मत्स्य आहार प्रयोग करने के लिए आहार मुद्रिका (Feeding ring) का प्रयोग करना चाहिए जिसे मछलियां आसानी से देख सकती हैं।

सामान्य रख रखाव

आहार व्यवस्था तो एक्वेरियम का रख–रखाव में एक मुख्य भाग है। इसके अलावा अन्य क्रियाएं जैसे पानी बदलना आदि, में ध्यान रखने योग्य बात यह है कि जल्दी–जल्दी पानी बदलने से तापमान में होने वाले अन्तर के कारण मछलियां तनाव में आ जाती हैं। यदि एक्वेरियम में सही संख्या में मछलियां डाली गयी हैं तो इसका पानी महीनों तक साफ सुथरा रह सकता है। ऐसे में सिर्फ वाष्पोत्सर्जन द्वारा कम हुए पानी की मात्रा को पूरा कर दें तथा समय–समय पर मछलियों द्वारा फैलाई गयी गन्दगी को साफ कर दें। एक्वेरियम का पानी बदलने के लिए साइफन विधि द्वारा पानी को निकाल कर रखे पानी द्वारा उसे दुबारा भर देते हैं जिससे उसमें उपस्थित क्लोरीन आदि निकल जायें। इसके अतिरिक्त पानी को साफ रखने के लिए विभिन्न प्रकार के फिल्टर का प्रयोग भी कर सकते हैं। पानी की सतह पर कभी–कभी तेल की एक परत दिखाई पड़ती है जो खाने आदि की सड़न या रसोईघर के खाने के तेल के कारण उत्पन्न होती है। इसे कागज के पन्ने को पानी की सतह पर रखकर निकाल सकते हैं। पेन्ट, वार्निश, कीटनाशक आदि का छिड़काव करते समय अत्यधिक सावधानी रखनी चाहिए जिससे कि यह पानी में न जाए। साबुन का प्रयोग करने के बाद भी यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि साबुन हाथों से पूरी तरह से साफ हो गया है।

मत्स्य रोग

बीमार होने पर मछली खाना खाना छोड़ देती हैं। पूंछ एवं पंख को फड़कती है तथा सामान्य रूप से तैरने के विपरीत कुछ अलग तरीके से तैरने लगती हैं। एक्वेरियम में रखी जाने वाली मछलियों में आमतौर पर होने वाले कुछ प्रमुख रोगों का वर्णन निम्नवत है–

- बीमारियों में मुख्य रूप से होने वाली बीमारी 'ईच' रोग है जिसे सफेद दाग भी कहते हैं। यह सामान्यतः ठंड से होता है। जब हम किसी नई मछली को एक्वेरियम में डालते है तो इसमें पंख एवं पूंछ पर सफेद

दाग हो जाते है जो धीरे–धीरे पूरे शरीर पर फैल जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए पानी का तापमान कम रखते हैं। 2 प्रतिशत मरक्यूरोक्रोम का प्रयोग बचाव के लिए सर्वोत्तम होता है, जिसकी मात्रा 2 बूंद एक गैलन पानी के लिए पर्याप्त होती है।

- दूसरा प्रमुख रोग है मुख फंगस, जिसे होने पर मछली सतह के निकट तैरती है तथा उसके होठों पर रूई जैसी वृद्धि दिखाई देने लगती है। इसके लिए टैरामाईसिन अथवा औरीओमाइसिन जैसी एंटीबायोटिक दवा का प्रयोग करना चाहिए।
- वैलवेट रोग, ईच रोग से मिलता जुलता रोग होता है परन्तु इसमें पड़ने वालें धब्बों का आकार छोटा एवं रंग हल्का पीला होता है। वैलवेट रोग के उपचार के लिए तांबा धातु का एक टुकड़ा लगभग एक सप्ताह के लिए एक्वेरियम में रख देना चाहिए।
- फंगस रोग (सेप्रोलिग्निया) सामान्यतः अन्य रोग से कमजोर हुई मछलियों अथवा किसी कारण बने घाव द्वारा फैलता हैं। इसमें संक्रमित अंग में सफेद धागे जैसे संरचना की वृद्धि पैदा हो जाती है। इसके उपचार हेतु दो चम्मच नमक 1 गैलन पानी हेतु अथवा पोटेशियम परमैंगनेट की 0.33 ग्राम मात्रा को प्रति 100 लीटर पानी के लिए प्रयोग करते हैं।
- पंख अथवा पूंछ सड़न रोग में मछलियों के पंख सड़ने लगते है। इसके लिए सड़े हुए पंख को कैंची आदि से काट देना चाहिए एवं टैरामाइसिन औरियोमाइसिन, पोटेशियम परमैंगनेट अथवा नमक का प्रयोग पहले बतायी गयी विधि अनुसार करना चाहिए।
- 'ड्रोप्सी रोग' में मछली के शरीर में द्रव्य जमा हो जाता है जो सामान्यतः किडनी के सही तरीके से काम न करने से होता है। यह रोग पानी द्वारा अन्य मछलियों को संक्रमित नहीं होता है। इसके लिए सुई के द्वारा किसी आन्तरिक अंग को नुकसान पहुचायें बिना द्रव को निकालना ही एकमात्र उपाय है।
- पॉप आई रोग से ग्रसित मछलियों में आंखे बाहर की तरफ निकल आती हैं जो पानी में बहुत अधिक वायु संचरण एवं गंदे टैंक में सड़न उत्पन्न होने के कारण होता है। इसके उपचार हेतु मछलियों की आंखों पर सिल्वर नाइट्रेट को लगाने के उपरान्त 1 प्रतिशत पोटेशियम डाईक्रोमेट में स्नान करायें। यह विधि उन मछलियों के लिए भी फायेदमंद है जिनकी आंखे किसी पत्थर आदि से घायल होने के कारण अपारदर्शी हो गयी हों।

उपरोक्त वर्णित निर्देशों का पालन करके रंगीन मछलियों के पालन हेतु एक्वेरियम का कुशल प्रबन्धन कर इसे एक लाभप्रद लघु उद्योग के रूप में स्वरोजगार हेतु स्थापित किया जा सकता है।

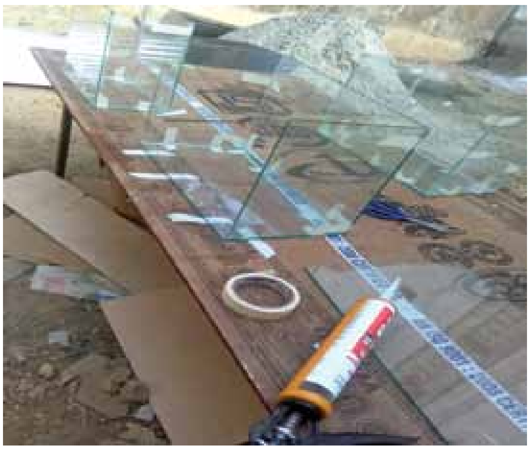

कांच के एक्वेरियम का निर्माण

एक्वेरियम में रखे मछलियों की पोषक औषधियाँ एवं भोजन

जलवायु परिवर्तन एवं मत्स्य उद्योग पर उसके प्रभाव

सहर नाज़िम एवं अमित पाण्डे
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

प्रस्तावना

अनादि काल से पृथ्वी की जलवायु परिवर्तित होती रही है। लगभग 650,000 साल पुराने हिमयुग सात हिमचक्रों के बाद लगभग 7000 साल पहले समाप्त हुए। पृथ्वी का तापमान धीरे–धीरे बढने लगा एवं उपयुक्त तापमान पर एवं जलवायु परिस्थितियों में जीव जन्तु एवं वनस्पतियां पनपने लगी। फिर धरती पर मानव का पदार्पण हुआ। मानव ने सामाजिक एवं वैज्ञानिक विकास करते हुए धीरे–धीरे परिस्थितियों को अपने अनुसार ढालने का प्रयास किया। विज्ञान के बढते प्रभाव एवं उपयोग की बदौलत मनुष्य ने प्राकृतिक शक्तियों को अपने अनुसार नियोजित कर लिया। वनों को कृषि एवं शहरीकरण के नाम पर समाप्त किया जाने लगा। विकास की अंधी भेड़चाल में हमारे प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुन दोहन किया गया। उर्जा के लिये कोयला, पैट्रोलियम एवं नैचुरल गैस जैसे जीवाश्म ईधनों का बड़े स्तर पर अनियोजित प्रयोग किया गया। परिणामस्वरूप कार्बन डाई आक्साइड एंव नाइट्रोजन के आक्साइड, सल्फर के आक्साइड एवं नाइट्रोजन के आक्साइड्स वातावरण में निरन्तर बढते चले गए। इस प्रकार वातावरण में गैसों की सांद्रता लगातार बढने लगी, एवं इन गैसों के एक आवरण ने पृथ्वी को चारों ओर से घेर लिया। यह जैसे जनसाधारण के लिए हानिकारक तो हैं ही साथ ही हमारी धरती भी इनके दुष्प्रभाव से अछूती नहीं है। ग्रीन हाउस इफेक्ट के कारण इन गैसों द्वारा अवशोषित अवरक्त किरणें धरती के तापमान एवं ऊष्मा में लगातार वृद्धि कर रही है। पृथ्वी के तापमान में हमेशा उतार चढ़ाव आते रहते है। परन्तु तापमान वृद्धि की यह प्राकृतिक प्रक्रिया बहुत धीमी होती है, एवं कई सौ वर्षों में जाकर तापमान में कोई ध्यान देने योग्य परिवर्तन होता है। परन्तु बढते ग्रीन हाऊस प्रभाव एवं घटते हुए वनक्षेत्र ने इस प्रक्रिया की गति को कई गुना बढ़ा दिया है। जिसका परिणाम ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु में अप्रत्याशित परिवर्तन के रूप में सामने आया है।

जलवायु परिवर्तन : अर्थ एवं प्रभाव

जलवायु परिवर्तन ने समस्त जनसाधारण को प्रभावित किया है एवं सबका ध्यान इस ओर खींचा है। वैश्विक स्तर पर बढता हुआ तापमान और उसके कारण मौसम में हो रहे अप्रत्याशित एंव आकस्मिक परिवर्तनों को संकलित रूप में ''जलवायु परिवर्तन'' की संज्ञा दी गई है। ऋतु चक्र के विस्थापन भीषण गर्मी एवं वर्षा चक्र में विस्थापन तथा वर्षा की मात्रा में परिवर्तन (अत्यधिक या अतिनिम्न वर्षा) इसके द्योतक है। विश्व स्तर पर आ रही असामयिक बाढ, सूखा, हिमशिखरों का गिरता हिमस्तर एंव समुद्र का बढता हुआ जलस्तर, जलवायु परिवर्तन के ही दुष्प्रभाव हैं। जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण धरती की बढती हुई वैश्विक ऊष्मा या ग्लोबल वार्मिंग है। वैज्ञानिकों द्वारा प्रमाणित किया गया है कि कुछ गैसें, जैसे कि कार्बन–डाई–ऑक्साइड, मिथेन, नाइट्रस आक्साइड एंव कार्बन मोनो आक्साइड इत्यादि धरती द्वारा परावर्तित की गई सौर रेडिएशन को अवशोषित कर लेती है। साधारण परिस्थितयों में ये रेडिएशन को अवशोषित कर लेती है। साधारण परिस्थितियों में ये रेडिएशन अनन्त की ओर लौटा दी जाती है परन्तु इन गैसों द्वारा अवशोषित होने पर इन सौर रेडिएशन की ऊर्जा वातावरण में ही रह जाती है। सौर रेडिएशन का ही एक भाग अवरक्त किरणें (Infra Red) भी होती है। इन किरणों में ऊष्मा प्रभाव होता है अर्थात इन किरणों की ऊर्जा ऊष्मा में परिवर्तित हो जाती है। यह अतिरिक्त ऊष्मा वाह्यय वातावरण के औसत तापमान में बढोत्तरी कर देती है। यह ऊष्मा वातावरण की विभिन्न तहों से होती हुई समस्त वातावरण का औसत तापमान समानुपात में बढा देती है। यही प्रक्रिया दिन प्रतिदिन निरंतर दोहराई जाने से वातावरण का औसत तापमान लगातार बढता जाता है।

धरती का औसत तापमान निरंतर बढने के कारण हिमशिखर एवं ग्लेशियर लगातार पिघल रहे हैं यह हिम जल में परिवर्तित होकर अन्ततः समुद्र में जा मिलता है जिसके कारण समुद्र का जल स्तर भी निरंतर बढ़ रहा है। वैज्ञानिक आकड़ों के

अनुसार सन् 1901 से 2010 के बीच वैश्विक समुद्री जलस्तर औसतन 0.19 मीटर ऊँचा उठ गया है। बढती ऊष्मा का प्रभाव वाष्पोत्सर्जन पर भी पड़ा है। विशेषकर भारतीय प्रायद्व ीप में मानसून उठने की दर बढने से उसका आयतन एवं घनत्व भी बढा है, परिणामतः भारतीय प्रायद्वीप भीषण वर्षा एवं वर्षा दर में हो रहे अप्रत्याशित परिवर्तनों का सामना कर रहा है। इन सब वैश्विक प्रक्रियाओं का सम्मिलित प्रभाव है समुद्री जल स्तर में बढोत्तरी बड़ा हुआ समुद्री जल स्तर समुद्री धाराओं एवं गर्म एवं ठण्डीं समुद्री हवाओं को प्रभावित करता है। जिसके कारण वर्षा चक्र विस्थापित हो जाता है जिसका परिणाम अप्रत्याशित सूखा अथवा बाढ़ के रूप में सामने आता है। जिसका प्रभाव स्थानीय एवं वैश्विक दोनों स्तर पर पड़ता है।

जलवायु परिवर्तन का मत्स्य उद्योग पर प्रभाव

बढ़ती जनसंख्या, खाद्य सामग्री की मांग एंव घटती हुई खाद्य सुरक्षा ने हमें विभिन्न अपारम्परिक भोजन स्त्रोतों की ओर आकर्षित किया है। मत्स्य एवं समुद्री भोजन हमारे आहार का बढता हुआ एवं महत्वपूर्ण अंग बनते जा रहा है। मछली एवं अन्य समुद्री भोजन, प्रोटीन, लाभदायी वसा, मिनरल्स, विटामिन्स एवं पौष्टिकता से भरपूर होता है। इसमें मिलने वाले ओमेगा–3 युक्त वसीय अम्ल ह्ृदय एवं रक्त वाहिनियों के लिए हितकारी होते है।

विश्व के लगभग 200 लाख जनमानस रोजगार के लिए मत्स्य उद्योग पर निर्भर करते है। मत्स्य उद्योग विशेषकर मत्स्य पालन बहुत से निर्धन परिवारों को आत्मनिर्भरता प्रदान करता है। घरेलू अर्थव्यवस्था के अन्यथा विदेशी बाजार में बढ़ती समुद्री भोजन की मांग के कारण निर्यात द्वारा विदेशी आय अर्जित करने का यह बड़ा स्त्रोत बनकर उभरा है। मत्स्य उद्योग के नवीनीकरण, नई तकनीकी एवं उपकरणों के विकास एवं मत्स्य पालन के बढते ज्ञान का इस उद्योग पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

कृषि एवं पशुपालन की ही तरह मत्स्य पालन भी देश की बढती हुई आय का महत्वपूर्ण स्त्रोत बनकर उभरा है। वैश्विक स्तर पर मत्स्य उद्योग एंव मछली पालन के विस्तार की वार्षिक दर लगभग 8.9% है जो कि खाद्य क्षेत्र में तीव्रता से बढ़ रहा है। नई तकनीकों के प्रयोग एवं कृषि तथा मत्स्य पालन के एकीकरण द्वारा कम लागत में अधिक लाभ पाया जा सकता है। उदाहरणतः चावल के खेतों में मत्स्य पालन करने से अनुपयुक्त भूमि तो प्रयोग होती ही है। अनुपयुक्त उर्वरक भी मछली के भोजन के रूप में प्रयोग हो जाता है। इस प्रकार एक पंथ दो काज वाली युक्ति चरितार्थ होती है।

जलवायु परिवर्तन ने तीव्रता से बढ़ते इस उद्योग को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। धरती का तापमान बढने से समुद्र के औसत तापमान में भी वृद्धि हुई है। जिस कारण समुद्री जल की अम्लता भी बढ़ी है। वातावरण में बढती कार्बन डाई आक्साइड की सान्द्रता भी समुद्री जल की अम्लता बढ़ने का एक बड़ा कारण है। औद्योगीकरण के प्रारम्भ से अब तक कार्बन डाई आक्साइड की सांद्रता वातावरण में लगभग 40% बढ़ चुकी है। समुद्र द्वारा इस बढी हुई कार्बन डाई आक्साइड की मात्रा का लगभग 93% अवशोषिक किया गया है। यह बढ़ता हुआ कार्बन डाई आक्साइड का प्रतिशत समुद्री जल को निरंतर अम्लीय बना रहा है।

तापमान एंव अम्लीयता में यह परिवर्तन समुद्री परिस्थितिकी एवं जीव–जन्तु व वनस्पतियों को लगातार प्रभावित कर रहा है। एक उदाहरण स्वरूप मूंगें की चट्टानें या कोरल रीफ्स जो कि समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र का बड़ा भाग है एवं सैकड़ों जीव जन्तुओं एवं वनस्पतियों को वास स्थान एवं आहार प्रदान करती है। लगातार क्षय होकर घटती जा रहीं है। कोरल ब्लीचिंग कहलाने वाली यह प्रक्रिया गंभीर परिणामों की द्योतक है। समुद्री जीवन का एक बड़ा भाग समाप्त होने की कगार पर है। मत्स्य उद्योग पर भी इन परिवर्तनों का प्रभाव दिखने लगा है। प्रत्येक समुद्री जीव खाद्य–चक्र का एक भाग है एंव नष्ट होते कोरल रीफ्स एवं बदलते पारिस्थितिकि तंत्र इस उद्योग को भयावह क्षति पहुंचा रहे हैं। मछलियों की संख्या निरंतर कम हो रही है। कई प्रजातियाँ तो विलुप्तप्राय होती जा रही है। जलवायु एवं परिस्थितियों के परिवर्तन मछलियों के पलायन का मुख्य कारण बन गए हैं। जो कि मत्स्य उद्योग को नकारात्मक रूप से प्रभावित करते हैं।

बदलता समुद्री तापमान एवं परिण ामतः समुद्री धाराओं में आए परिवर्तन भी मत्स्य धन को प्रभावित करते है। निरंतर बढ़ रहा जल स्तर भी समुद्र के भीतर पनप रहे विभिन्न पारिस्थितति

तंत्रां को परिवर्तित एवं नष्ट कर रहा है। कुछ मत्स्य प्रजातियां जैसे सालमन, समुद्री तापमान परिवर्तन के प्रति अति संवेदनशील होती है। जिसके कारण तापमान बढने पर उनकी मृत्यु दर बड़े पैमाने पर बढ़ जाती है। मछली के जीवनचक्र पर भी जल के तापमान एवं अम्लीयता का प्रभाव पड़ता है। मछलियों की प्रतिरोधक क्षमता भी इन बदली हुयी परिस्थितियों में क्षीण हो जाती है।

मत्स्य पालकों के लिये परिस्थितियों को सामान्य एवं स्थिर बनाए रखना एक बड़ी चुनौती होती है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्रीष्म ऋतु समय से पहले प्रारम्भ होने लगी है एवं उसकी अवधी भी बढ़ रही है, जिससे संक्रामक रोग एवं मछलियों की मृत्यु दर आकस्मिक बढ़ने का खतरा बढ़ जाता है। पिछले कुछ वर्षा से यह मृत्यु दर निरंतर बढ़ रही है।

सादे या मीठे पानी का भी तापमान ग्रीष्म ऋतु में बढ़ जाता है। लगातार बढ़ती गर्मी से जलाशय एंव अन्य जल स्त्रोत सूखने लगते है। शुष्क परिस्थितियों की मार तो मत्स्य धन पर पड़ती ही है साथ ही जल के तापमान व गुणवत्ता में परिवर्तन भी मछलियों के पलायन एवं बढ़ी हुई मृत्यु दर का कारण बनते है, विशेषर उन स्थानों पर जहां मानव गतिविधियों के कारण अत्यधिक अवशिष्ट पदार्थ एवं कूड़ा जलाशयों में प्रवाहित किया जाता है।

ग्लोबल वार्मिंग के कारण अप्रत्याशित मानसून भी मत्स्य पालन उद्योग में क्षति पंहुचाता है। निरंतर भारी वर्षा एवं बाढ़ के कारण मछलियों की मृत्यु दर में बढ़ोत्तरी तो होती ही है। मत्स्य चारा संभरण भी बाढ़ की भेंट चढ़ जाता है, जिससे मत्स्य पालकों को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है।

जल निकायों में बढ़ता प्रदूषण संक्रामक रोगो के प्रसार में मदद करता है। परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण ग्रीष्म ऋतु में जलीय जीवों की प्रतिरोधक क्षमता पहले ही क्षीर्ण होती है। जल निकायों एवं जलाशयों की नियमित सफाई एवं प्रदूषण कम करके हम बढ़े स्तर पर मत्स्य धन की हानि कम कर सकते है।

मछली पालक जल का तापमान एवं अम्लीयता निय़िंत्रत करके मछलियों को प्रभावित होने से रोक सकते है, जिससे मत्स्य उद्योग को होने वाली बड़ी हानि टाली जा सकती है। इस प्रकार धरती के बढ़ते तापमान एवं जलवायु परिवर्तन के कारण मत्स्य उद्योग पर पड़ रहे नकारात्मक प्रभावों को अपनी–अपनी क्षमतानुसार नियोजित एवं नियन्त्रित करके इसके बढ़ते दुष्प्रभाव कम करने में हम अपना सहयोग दे सकते हैं।

काली महाशीर

काली महाशीर, नाजिरेटर चिलिनायड गढ़वाल हिमालय तथा नेपाल के कुछ भागों में तेज बहाव वाली नदियों में पायी जाती है। आई.यू.सी.एन. की लाल सूची में इस मत्स्य प्रजाति को असुरक्षित एवं लुप्तप्राय प्रजाति की श्रेणी में सूचीबद्ध किया गया है। शीतजल मत्स्य पालन हेतु यह प्रजाति एक खाद्य मछली तथा सजावटी मछली के रूप में उपयोगी है एवं पर्वतीय क्षेत्रों में इसके पालन एवं प्रजनन की अपार सम्भावनायें है।

सुनहरी महाशीर (टौर प्युटिटौरा): प्रजनन, बीज उत्पादन एवं हैचरी प्रबंधन

देबाजीत सर्मा, मौहम्मद शहबाज़ अख्तर एवं सीजी अलैक्जैंडर
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

परिचय

सुनहरी महाशीर जिसे वैज्ञानिक रूप से टौर प्युटिटौरा के रूप में निर्दिष्ट किया जाता है बड़ी साइप्रिनिड है। ये दक्षिण पूर्वी एशिया के जंगलों की ऊष्ण कटिबन्धीय नदियों से लेकर हिमालय की भीमताल जल वाली नदियों, एशिया की तेज बहाव वाले पुरातन व स्वच्छ जल स्त्रोत्रों में वास करती है। अपने सजावटी सौन्दर्य संघर्ष कौशल व बेहतर स्वाद के लिए इसकी अत्यधिक माँग है। भारतीय उपमहाद्वीप में सुनहरी महाशीर भारतीय जल प्रणाली की राजा के रूप में वर्णित है, जिसका विस्तार प्रायद्वीपीय भारतीय नदियों के निचले क्षेत्रों तक विस्तृत है।

टौर प्युटिटौरा हिमालय क्षेत्र की बहुमूल्यवान देशी मछली के रूप में स्वीकार की जाती है। मध्य हिमालय क्षेत्र की अधिकांश नदियों, धाराओं सहित आसाम, जम्मू व कश्मीर, सिक्किम, अफगानिस्तान, बंग्लादेश, चीन, बर्मा (मयन्मार), थाइलैंड, कम्बोडिया, लाओस, नेपाल, पाकिस्तान, वियतनाम, इन्डोनेशिया एवं मलेशिया से टौर की लगभग 20 विभिन्न प्रजातियों का पता लगा है। महाशीर हिमालयी देशों में कृषि सहित मात्स्यिकी विकास के लिए एक सम्भावित मत्स्य प्रजाति है। प्राकतिक जलस्त्रोतों में इस मछली की लम्बाई में 9 मिमज और भार में 54 की वृद्वि देखी गई है। वर्तमान में इस आकार प्रकार की मछली यदा–कदा ही दिखाई देती है।

सुनहरी महाशीर (टौर प्युटिटौरा)

माहशीर का अर्थ है भारत में बडे मुखवाला इसका उपयुक्त नाम है लम्बी पतले आकार वाली प्राणी, जिसे ताजे पानी कीं सभी शिकारी मछलियों के प्रबलतम लडाकू प्राणी के रूप में माना जाता है। भारतीय नदियों की र्निविवाद राजा महाशीर है। प्रचंड एवं तेज बहाव वाले क्षेत्र इसके आवास स्थल है इसलिए यह मछली एक कुशल तैराक है। यह मछली विश्व में कार्प परिवार की सबसे बडी सदस्य है। यह मछली प्रतिकूल धारा में 20–25 वर्ष की आयु तक जिन्दा रहती है।

स्थानीय शब्दों में महाशीर शब्द का अर्थ बड़ा मुँह है जो कि कार्प से निकट सम्बन्धित है। ताजे पानी की शिकारी मछलियों में इसको सबसे शक्तिशाली मछली के रूप मे जाना जाता है। इसका शरीर लम्बा और थूथन नुकीली होती है। जबड़े समान आकार के होते है। मैक्सीलैरी की अपेक्षा रोस्ट्रल स्पर्शक छोटे होते है। यह एक अत्यधिक नखरेबाज और मूडी मछली है। इसके शरीर का रंग सुनहरा, पृष्ठीय हिस्सा भूरा तथा पंख लाल पीले रंग के होते है। इसके आवास स्थल उच्च आक्सीजन युक्त पानी में स्थित चट्टानों के किनारे होते है। हिमालय से निकलने वाली अनेक नदियों में यह महाशीर पायी जाती है। बहुतयात में उपलब्धता के कारण इसका बहुत आर्थिक महत्व है। महाशीर की विभिन्न प्रजातियों के उष्णकटिबन्धीय क्षेत्र है, जहॉ गर्मियों में तापमान 35 से.ग्रे. तथा उप हिमालय क्षेत्रों में जल का तापमान 6 से.ग्रे. तक चला जाता है। इसी प्रकार वे मुश्किल से कुछ मीटर की दूरी पर समुद्र स्तर से ऊपर 200 मीटर की उँचाई पर पायी जा सकती है। विभिन्न प्रकार के

पर्यावरण और भोजन के अनुकूलन लिए यह मछली असाधारण हैं।

इसमें कोई जोर देने कीं आवश्यकता नहीं है कि महाशीर विश्व प्रसिद्ध आखेट योग्य एवं भारत की प्रमुख खाघ मछली के रूप में प्रसिद्ध है। यह पूरे विश्वभर के आखेटकों को शिकारमाही में सालमन मछली से अधिक मनोरंजन प्रदान करती है। यह टाइगर इन वाटर्सश् के रूप में भी जानी जाती है। वाणिज्यिक मत्स्य पालन में अपनी अच्छी गुणवत्ता के लिए यह महत्वपूर्ण स्थान रखती है। बड़े आकार की वजह से मछुवारों के लिए महाशीर का बड़ा महत्व है। एक खाघ मछली के रूप में यह अत्यधिक सम्मानित है तथा भारत के उत्तर पूर्वी बाजार में ऊँची कीमतों पर बिकती है।

एक समय में इनकी बहुतायत के बावजूद भी प्राकतिक जल स्त्रोतों में महाशीर के आकार और संख्या में गिरावट आई है जिसमें इसके विलुप्त होने के गंभीर खतरे पैदा हो गए है। अवक्रमित जल पर्यावरण तथा नगरीकरण के साथ–साथ अत्यधिक मत्स्य संदोहन मुख्य रूप से मछली पकडने के अवैध तरीकों जैसेः विघुत करंट, विषैले रसायन, डाइनामाइट आदि के प्रयोग द्वारा पारिथितिकी में जैविकी परिवर्तन के कारण प्राकतिक जल स्त्रोतों में इसकी संख्या में गिरावट आई है, जिस कारण निकट भविष्य में यह संकटग्रस्त हो सकती है। कैप्टिव ब्रीडिंग तथा संवर्धन तकनीक, मत्स्य संरक्षण व सत्त मत्स्य उत्पादन को बढावा देने के साधन हैं। अनेक वर्षों के अध्ययन के पश्चात टौर प्युटिटौरा की प्रजनन तकनीकी का विकास भा.कृ.अनु.प.–डी.सी.एफ.आर. में किया गया है प्रजनन तकनीकी की सफलता से बीज की उपलब्धता में वृद्धि हुई हैं तथा प्राकतिक जल स्त्रोतों में पुर्नसंचयन के द्वारा इनकी संख्या–वृद्धि में मदद मिली है। संवर्धन तकनीकियों के विकास से इसके वाणिज्यिक उत्पादन को बढ़ावा मिलेगा जो प्राकृतिक जल स्त्रोतों में मात्स्यिक दबाव को कम करेगा तथा अंततः प्रकति में इसकी पैदावार के संरक्षण और रख रखाव में सहायक सिद्ध होगा साथ ही यह कुल मत्स्य उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ पर्यटन उघोग के विकास एवं वृद्धि में भी मददगार होगा। स्थानीय मत्स्य पालक अब प्राकृतिक जल स्त्रोतों में महाशीर की सुरक्षा विशेषकर बरसात के महीनों में अण्ड जनन के समय सुरक्षात्मक मत्स्य पालन के द्वारा कर रहे हैं। साथ ही वे उत्तराखण्ड क्षेत्र की कुछ झीलों व धाराओं के चारों ओर अवांछित मत्स्य प्रगहण को रोकने के लिए गश्त भी कर रहे हैं।

वर्गीकरण

वर्तमान अध्ययन के द्वारा टौर वंश के अन्तर्गत 6 विभिन्न प्रजातियों की वैधता की पुष्टि की गई है जो नीचे दी गई हैः–

वैज्ञानिक नाम	सामान्य अंग्रेजी नाम
टौर प्युटिटौरा (हैम)	गोल्डन या प्युटिटौर महाशीर
टौर टौर (हैम)	ट्यूरिया या टौर महाशीर
टौर (हैम)	डीप बौडी महाशीर
टौर (मैक्लीलैंड)	कॉपर या मोसाल महाशीर
टौर खुदरी	श् झुंगाश् महाशीर
टौर मुसुल्लाह	डैकन या खुदरी महाशीर हम्पबैक या मुसुल्लाह

महाशीर की तीन उप प्रजातियों टौर मोसाल महानदी कस, टौर खुदरी मालबारीकस एवं टौर खुदरी लौंगिपिनस का भी पता लगा है। आखेटकों द्वारा चौकलेट महाशीर जिसे समान्यतः असम की बोका अथवा कतली महाशीर के रूप में भी जाना जाता है को महाशीर वर्ग में सम्मिलित किया गया है। इस मछली की नियोलियोचिल्स हैक्सागोनोलोपिज के नाम से वैज्ञानिक रूप में पहचान की गई है। समान्यतः महाशीर का शरीर चपटा व लम्बा होता है। इसकी थूथन नुकीली व जबड़े समान लम्बाई वाले होते है। इसके दो जोड़े स्पर्शक होते है। शरीर का रंग सुनहरा तथा पृष्ठीय व पार्श्व भाग गहरे ग्रे रंग का होता है। इसके पूरे शरीर में बड़े–बड़े शल्क होते है। पंखों का रंग लाल–पीला होता हैं।

संघ	कार्डेटा
उप संघ	वर्टिब्रेटा
वर्ग	एक्टीनोप्टीरीगी
उप वर्ग	निओप्टीरीगीई
इन्फ्राक्लास	टिलिओस्टाई
उपक्रम	ओस्ट्रीओप्सीई
क्रम	साईप्रनीफोर्मस
सुपर फैमिली	साइप्रीनिडी
परिवार	साइप्रीनिडी
जाति	टौर ग्रे 1834
प्रजाति	टौर प्युटिटौरा (हैमिल्टन 1822)

भारतीय उपमहाद्वीप में वास करने वाली प्रजाति/उपप्रजातियों की सूची:

सं.	प्रमाणिक प्रजातियाँ	प्रमाणिक उप प्रजातियाँ	संदिग्ध प्रजातियाँ
1.	टौर प्युटिटौरा	टौर खुदरी लौंगीसपिनीज	बारबस लैक्सास्टीकस
2.	टौर टौर	टौर खुदरी मालवारीकस	बारबस डुकाई
3.	टौर मोसाल	टौर मोसाल महानदीकस	बारबस नैइली
4.	टौर खुदरी	टौर प्युटिटौरा मैक्रोलीपिज	बीण्चिलीनोइडिस
5.	टौर मुसुल्लाह		टौर मोयोरेंसिज
6.	टौर प्रोजिनियस		टौर कुलकार्मी
7.	एन. हैक्सागोनोलिपिज		

महाशीर के स्थानीय नाम:

भाषा /क्षेत्र	देशीय नाम
हिन्दुस्तानी	महाशीर
हिन्दी	नहार्म
पंजाबी	काकहीता
मराठी	काउची मस्ता
सिंन्धी	जुन्गाह,पिटिहा, करिहा
असमी	बारापिटिहा, बारापान्ना,झंगाह
तमिल	बोम्मिन,पुम्मिन, केन्दाई
बंगाली	महासोल
कनारसी	पेरूवल, हराली–मिनुई
मैसूर	हल्लामिम
मलयालम	मेरूवल,चूरा,कट्टी, कोयिल
तुलू	हेरागुलू, पेरूवल
झलम	ठाकुर तथा क्षखराल
मध्य भारत	चादनी मछली

प्रजनन विज्ञान

विस्थापन एवं अण्डजनन

सुनहरी महाशीर रूक रूक कर प्रजनन करने वाली मछली है। इसके बारे में यह पता लगा है कि यह वर्ष भर एक मुर्गी की भॉति अंतराल में अण्डे देती है। इसके अण्डो को मुख्यतः मानसून के समय प्राप्त किया जाता है। टौर प्युटिटौरा के इस आन्तरायिक प्रजनन व्यवहार को व्यवहारिक रूप से नेपाल मे स्थापित किया गया। गोनेडोसोमेटिक सूचकांक के आधार पर यह पता लगा है कि प्राकतिक जल स्त्रोतो में इस मछली की परिपक्वन की अवधि मई से अगस्त तक हो सकती है। महाशीर स्वच्छ जल में अण्डे देना पसंद करती है इस हेतु इसके विस्थापन की आदत से सभी लोग परिचित है। बाढ के दिनों में महाशीर नदी के ऊपरी क्षेत्रों की ओर बढती है और ताजा प्रजनन के लिए लम्बी दूरी तय करती है तथा किसी चट्टान के नीचे अण्डो का समूह देती है। यह प्रकिया मौसम में कई बार दोहरायी जाती है। यह देखा गया है कि महाशीर अधिकांशतः बारिश के आरम्भ के समय प्रजनन करती है। प्रजनन के समय जहॉ तक की पर्वतीय नदियों में अण्डे देने का सवाल है इसके लिए तापमान का विशिष्ट समायोजन,पी.एच.वेग गदलापन एवं वर्षा आदि सामूहिक रूप से मछली को अण्डे देने के लिए अभिप्रेरित करते हैं। सुनहरी महाशीर भी इसी प्रकिया का पालन करती है। मादा मछलियों में प्रजनन की पॉंच अलग चरणों की पहचान की गयी हैं–

प्रथम चरण– अपरिपक्व लिंग द्वितीय चरण–परिपक्व लिंग तृतीय चरण–परिपक्व लिंग चतुर्थ चरण–परिपक्व एवं पंचम चरण–पूर्णपरिपक्व।

कुमायूँ की झीलों में महाशीर अधिकाशतः बरसात के आगमन पर प्रजनन करती है। ये वर्ष में एक बार से अधिक अण्डे देती हैं। यही कारण है कि महाशीर के सभी आयु वर्ग के जीरा कुमायूँ क्षेत्र की नदियों में वर्षभर दिखायी देते है। इसी प्रकार पश्चिमी घाट की नदियों में भी सभी मौसमों में महाशीर अंगुलिकाऐं उपलब्ध है। महाशीर की जनन ग्रंथी लम्बी, हल्के रंग की पट्टी के आकार की लम्बवत रूप में आंतों के दोनों ओर, पेट की दीवार और एयर ब्लैडर के बीच, एक खाँचे में एक जोड़ी के रूप में होता है। भीमताल झील में टौर प्युटिटौरा के अण्डे देने का मौसम मई से सितम्बर तक होता है। गौला नदी में टौर प्युटिटौरा समूहों में अण्डे देती है। यह समूहों की संख्या पर्यावरण की स्थिति पर निर्भर करता है। 190 से 250 मि. मी. लम्बाई वाले अण्डजनकों में कुल गदलेपन की सीमा 3987 से 7320 मि.मी. लम्बाई तक थी।

प्रारम्भिक अवस्था में नर और मादा मछली के जननांग समान आकार प्रकार के होते है। जब नर परिपक्व होता है तो Visceral Carity में उतनी

सुनहरी महाशीर हेतु जैविक सारणी

वितरण	संपूर्ण हिमालयी क्षेत्र असम, जम्मू एवं कश्मीर, सिक्किम, उत्तराखण्ड, हि.प्र., अफगानिस्तान, बंग्लादेश, नेपाल एवं पाकिस्तान
प्रजनन काल	वर्ष में तीन बार जनवरी से फरवरी; मई से जून व जुलाई से अक्टूबर।
भोजन एवं भोजन आदतें	डिम्बावस्था में सर्वहारी तरूणावस्था में मांसाहारी वयस्कावस्था में शाकाहारी
परिपक्वता	नर 2 वर्ष, मादा 2 वर्ष
गदलापन (Fecundity)	3500–8900 संख्या ओवाधकिग्रा. शरीर के भार का
अण्डों का रंग	हल्का पीला–सुनहरा भूरा
अण्डों का व्यास	2.5–3.5 मि.मी.
उर्ववरण प्रतिशत निषेचन (Fertilization %)	90–99 प्रतिशत
उदभवन अवधि (Incubation period)	96–140 घंटा 17–24 डिग्री. से.ग्रे. पर
उदभवन (Hatching)	80–85 प्रतिशत

अधिक वृद्धि नहीं हो पाती जितनी की मादा मछली में होती है। नर मछली के जननांग में वृद्धि की गति बहुत अधिक होती है जिस कारण वह शीघ्र ही प्रजनन करने योग्य हो जाती है। मादा में वृद्धि नहीं होने के कारण यह माना जाता हैं कि उसका भोजन आपूर्ति के साथ जो पुर्नउत्पादन संबंघ होता है वह मानसून के दौरान कम हो जाता है। जिस कारण उसके अण्डे देने का समय देर से आरम्भ होता है।

यह सर्वविदित है कि महाशीर अण्डे देने के लिए उथले पानी में ऊपर की ओर जाती है। यह देखा गया है कि बाढ़ की अवधी में महाशीर काफी ऊँचाईयों (समुद्र तल से 800–1800 की ऊँचाई) तक चढ़ती है और अण्डे देने के लिए लम्बी–लम्बी यात्राऐं करती है। यह लम्बी यात्रायें बहुत जोखिमपूर्ण और खतरे से भरी हो सकती है। ये नदियाँ उनको अण्डें देने के लिए यथोचित स्थान एवं ताजे आहार स्थलों को प्रदान करती है। साथ ही उनके अण्डों और जीरों को सेने के समय सुरक्षा भी देती है। मछलियाँ इस पानी में तब तक रहती हैं जब तक पानी का स्तर कम नहीं हो जाता है। जब पानी का स्तर कम हो जाता है तो मछलियाँ अण्डें देने के उपरान्त कम होते हुए पानी के साथ अण्डें देकर ऊँचाई से नीचे की ओर आ जाती हैं। ये अण्डें मानसून के दौरान परिपक्व होकर जीरा बन जाते है। टौर प्युटिटौरा के जीरा पत्थरों के किनारों पर रहना पसंद करते हैं क्योंकि ये पानी में निरंतर धुलते रहते हैं। महाशीर के अण्डें मिट्टी के बजाय रेत अथवा पत्थरों पर अधिक दिखाई देते है। इस प्रजाति के प्रचार–प्रसार के लिए इसके जननकाल का निर्धारण एक अनिवार्य तत्व है। कुछ लेखकों द्वारा विविध जलवायु परिस्थितियों में विविध प्रजातियों का उल्लेख किया गया हैं। भारत के कुछ भागो में महाशीर की समान प्रजातियो की विभिन्न प्रजनन आदतों के कारण इसके प्रजनन काल के परिक्रमण के सम्बन्ध में विभिन्न विचारधाराऐं है। भारत की उत्तर–पूर्वी नदियों में महाशीर एक अवधी में तीन बार प्रजनन करती हैं। उत्तरी भारत के मैदानों में प्युटिटौरा महाशीर के बारे में पता चला है कि प्युटिटौरा महाशीर वर्ष में कई बार प्रजनन करती हैं। इसके अतिरिक्त महाशीर को विलुप्त होने से बचाने के लिए यह आवश्यक हैं कि इसका संवर्धन किया जाए तथा इसके बीजों को व्यापक पैमाने पर वितरित कर विभिन्न नदियों, धाराओं, झीलों और जलाशयों में डाला जाए। महाशीर के बीजों को आमतौर पर प्राकृतिक जलस्त्रोतों से एकत्र किया जाता हैं किन्तु वर्तमान में कृत्रिम गर्भाधान और हाइपोसैसन के द्वारा भी उत्पादन किया जाता हैं।

महाशीर बीज उत्पादन ईकाई

जल आपूर्ति

सफल मत्स्य पालन कार्यक्रम हेतु फार्म के लिए स्थल का चुनाव बहुत महत्वपूर्ण है। फार्म के विकास तथा उसकी उपलब्ध जल की मात्रा की क्षमता को भी ध्यान में रखा जाए।

महाशीर पालन के विभिन्न स्तरों पर जल की मात्रा के सम्बन्ध में आदर्श शर्तें नीचे दी गई है:

हैचरी (अण्ड जनन शाला) के स्थल का चुनाव

जहाँ तक सम्भव हो सके हैचरी के लिए स्थान अधिक ऊँचाई पर ऐसी जगह पर होना चाहिए जहाँ पर पानी का समुचित प्रवाह हो तथा बाढ़ वाले क्षेत्र से बिल्कुल सुरक्षित हो। हैचरी–फार्म के लिए भू–क्षेत्र और जल आपूर्ति कम ढलान वाली व समान तपीय स्तर वाली होनी चाहिए तथा साथ ही प्रग्रहण क्षेत्र पर कम से कम मानवीय गतिविधियाँ होनी चाहिए।

हैचरी निर्माण के लिए ऐसे स्थल को वरीयता देनी चाहिए जहाँ पर जल आपूर्ति का गुरूत्व फार्म एवं हैचरी की ओर हो सकता हो। हैचरी का जल स्त्रोत अच्छे प्रकार का एवं पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए।

अच्छे पानी का स्त्रोत

पानी का स्त्रोत या तो झरने की तरफ लिम्नोक्रीनी अथवा रिओक्रीनी या फिर ऐसे नालों–धाराओं का हो सकता है जिसमें गाद एवं कार्बनिक पोषण तत्वों की मात्रा बहुत कम हो। हैचरी को होने वाली जल की आपूर्ति प्रदूषित नहीं होनी चाहिए जिससे की मछलियों को कोई हॉनि पहुँचे।महाशीर पालन के लिए झरनों का पानी बहुत आदर्श स्त्रोत होता है। क्योंकि उसके पानी में तापक्रम के स्तर पर उतार–चढाव नहीं होता। पानी में तापक्रम प्रजनन के दौरान 20–25 डिग्री. से.ग्रे. तथा पालन–पोषण के समय थोड़ा अधिक होना चाहिए।

जल प्रवाह	पालन क्षमता
1 ली/मि. 3–4 ली/मि. 4–6 ली/मि.	4–6 ली/मि. 20–28 °C पर 2000 अण्डों का उदभवन एवं पालन पोषण 20–27 °C पर 2000 जीरों 0–3 माह का पालन पोषण 1500 अगुलिकाओं का पालन पोषण 4–9 माह के
जल प्रवाही पोषणशाला	
ओवर हैंड टैंक	5 मीटर की ऊचाई पर 1000L टैंक व्यवस्था।
हैंचिंग टैंक	200x60x30 से.मी. के आधार की फाइबर की चादर अथवा जंगरोधक लोहे की चादर
हैंचिंग ट्रे	200 X 60 X 30 से.मी. 1मिमी. मेस साइज का सिंथैटिक जाल पर 5000–6000 अण्डों को रखा जा सके।

हैचरी में पानी का वितरण इस प्रकार नियंत्रित होना चाहिए कि प्रत्येक ईकाई जिसमें हैचिंग ट्रफ, नर्सरी टैंक आदि के अलग–अलग प्रवेश मार्ग हैचरी के विभिन्न अंगों जैसे पंम्पिग सुविधायुक्त ओवर हैड टैंक से आक्सीजन युक्त पानी ग्रहण कर सकें।

प्रजनन संग्रहों का प्रबन्धन

व्यापक पैमाने पर सुनहरी महाशीर के बीज उत्पादन के लिए उसके प्रजनक भण्डारों का या तो फार्म में या फिर प्राकृतिक जल स्त्रोतों में उपलब्ध होना पूर्व प्राथमिकता है। यह एक पालतू प्रजाति है। इस प्रजाति के बारे में यह कहा जाता है कि ये कुछ अन्तराल में गुणात्मक आधार पर अण्डे देती है। परिपक्व प्रजनक प्रजनन काल में नदियां, झीलों, धाराओं और जलाश्यों में तेज गति से जाती हुयी नजर आती है। इसको फॉसा जाल के द्वारा पकडकर सिट्रिपिंग विधि से प्रजनक के लिए उपयोग किया जाता है। मछली की यह प्रजाति कृत्रिम प्रजनन के लिए अण्ड प्रस्फुटन जीरो और अंगुलिकाओं के पोषण हेतु नियंत्रित वातावरण में भी व्यावहारिक है।

हैचरी

अण्डों और जीरों के पालन–पोषण के लिए हैचरी एक छत के नीचे

महाशीर हैचरी, भीमताल

तथा अनेक ट्रफों व टैंको की व्यवस्था सहित होनी चाहिए। हैचरी ऐसी होनी चाहिए जिसका निर्माण वास्तव में इसी उद्देश्य के लिए किया गया हो। फर्श सीमेंट का बना होना चाहिए ताकि उसमें पानी साफ करने की व्यवस्था हो। हैचरी को सूर्य की किरणों के सीधे प्रवेश से सुरक्षित होने के साथ–साथ, साफ –सुथरे कार्य स्थल पर होना चाहिए।

ट्रफ

हैचरी ट्रफों को विभिन्न आकार –प्रकार का होना चाहिए,किंतु प्रत्येक ट्रफ में पानी रखने की इतनी क्षमता होनी चाहिए कि उसमें अण्डों,लार्वा व अविकसित भ्रूणों को पाला जा सके। आयताकार ट्रफों (220x50x40 cm अथवा 220x60x50 से.मी. को समान्यतः टाऊट हैचरियों में प्रयुक्त किया जाता है। इन ट्रफों को महाशीर के अण्डों से लार्वा व जीरो को बडा करने के लिए भी प्रयोग मे लाया जा सकता है। महाशीर के जीरों व अण्डों के पालन पोषण के लिए इन ट्रफों की गहराई 10–25 से.मी. भी बढाई जा सकती है। ये ट्रफ सीमेंट, एल्मुनियम के बनाए जा सकते हैं किंतु फाइबर ग्लास से निर्मित ट्रफों को ही वरीयता दी जाती है। हैचिंग ट्रफों की व्यवस्था एक लाइन में इस प्रकार से होनी चाहिए कि उद्गम स्त्रोत से जल पहले अथवा प्रधान ट्रफ में आए तत्पश्चात अन्य ट्रफों में बारी–बारी से आए।प्रत्येक ट्रफ में अवमुक्त आक्सीजन की मात्रा में वृद्वि हेतु अतिरिक्त जल की आपूर्ति को उपलब्ध कराया जा सकता है। प्रत्येक ट्रफ का अलग प्रवेश व निकास द्वार होना चाहिए ताकि ट्रफ में पानी की उचित व्यवस्था की जा सके। एक ट्रफ में कम से कम पाँच हैचिंग तश्तरियों को जिसमें 20,000–25,000 निषेचित अण्डे आ सकें रखा जा सकता है।

तश्तरियाँ

तश्तरियॉ फाइबर ग्लास/लकडी की आयताकार या वर्गाकार इस प्रकार बनी हो सकती है कि प्रत्येक ट्रफ में 4–5 तश्तरियों को रखा जा सके। प्रत्येक हैचिंग तश्तरियों के नीचे नियमित रूप से पानी के संचालन हेतु सिंथैटिक कपडे का जाल मेस सइज 2 मि.मी. लगा होना चाहिए तथा प्रत्येक तश्तरी की ऊँचाई 3–4 इंच तक होनी चाहिए। तश्तरी की बाहरी लम्बाई–चौडाई ऐसी होनी चाहिए कि उसका प्रत्येक ट्रफ की लम्बाई के साथ एक सीध में रखा जा सके। प्रत्येक तश्तरी में 4000–5000 निशेचित अण्डों को रखने की क्षमता होनी चाहिए।

तश्तरियाँ

नर्सरी तालाब

नर्सरी तालाब हैचरी का एक अन्य प्रमुख अंग है। जिसका प्रयोग महाशीर के पूर्व–अविकसित जीरों को पालनें के लिए शुरूआती भोजन देने के लिए किया जाता है। इन तालाबों का आकार –प्रकार भिन्न हो सकता है किंतु ये अधिक गहरे नहीं होने चाहिए। छोटी महाशीर का सफल उथले तालाबों में सम्भव हो सकता है। आयताकार नर्सरी तालाबों का आकार 2.0 x 0.5 x 0.6 मी. या 2.0 x 0.7 x 0.60 x तथा गोलाकार तालाबों का 2.0 x 0.75 x 0.60 मी. व्यास हो सकता है। फाइबर ग्लास के उचित प्रवेश व निकास द्वार युक्त तालाबों के प्रयोग को वरीयता दी जा सकती है।

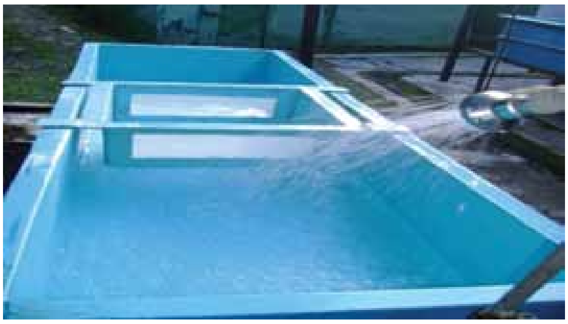

ट्रफ

जीरा तालाब/टैंक

महाशीर अंगुलिकाओं के पालन पोषण के लिए नर्सरी तालाबों में पाले गए विकसित जीरों को निकालकर फार्म क्षेत्र में मिट्टी कें तालाबों में स्थान्तरित किया जाता है। इन जीरो के तालाबों/टैंकों के निर्माण में डामरीकरण, सीमेंट अथवा फाइबर ग्लास का प्रयोग किया जा सकता है। इसमें पानी को निरंतर बदलने की सुविधा का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। इसमें पानी को निरंतर बदलने की सुविधा का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। इसमें पानी के

प्रवाह की दर 2–3 ली/मिनट हो तथा क्षमता 1000 मी. होनी चाहिए।

सहायक सुविधाएं

हैचरी में अण्डों के उद्भवन भंडार सामग्री के पालन पोषण के अतिरिक्त विभिन्न विश्लेषण एवं हैचरी कार्य के संचालन के लिए एक प्रयोगशाला तथा हैचरी उपकरणों को रखने के लिए एक भंडार का होना भी नितांत आवश्यक है।

अण्ड जनन के समय तैयार मादा महाशीर की परिपक्वता का अंदाज उसके कोमल पेट को छूकर, गुहा (ऐनस) का गुलाबी रंग देखकर व इसके गर्भाशय पर हल्का दबाव देकर लगाया जा सकता है कि वह अण्डे देने के लिए तैयार है या नहीं। नर मछली में इसके गुहा के पास जब हल्का दबाव दिया जाता है तो शुक्र रस (मिल्ट) का तेज प्रवाह इसके परिपक्व होने की पुष्टि करता है।

प्रजनन तकनिकियाँ

प्रजनकों का संग्रह

प्रजनक मछलियाँ प्रजननकाल में नदियों, धाराओं, झीलों व जलाशयों में तेज गति से जाती हुई नजर आती है और इनको फॉसा जाल से पकड़ा जाता है। प्रत्येक मछली को जाल से सावधानीपूर्वक निकाला जाना चाहिए ताकि उसको कोई चोट आदि न लागे। अण्डे देते समय गहरी झीलों व जलाशयों में जाल को मुख्य भोजन द्वार पर लगाना चाहिए। जाल में फंसे महाशीर के प्रत्येक बच्चे की नर व मादा के रूप में पहचान कर उसे एक अलग कंटेनर में रखा जाना चाहिए। तालाबों मे पाले गए प्रजनकों के सम्बंध में दिन के शुरूआती घंटो में अण्डे लेने की प्रकिया से पूर्व लिंगों को अलग किया जाना चाहिए। अण्ड दोहन के पश्चात प्रजनकों को वापस पौंड में 5 प्रतिशत की दर से पोटेशियम परमेगनेट के घोल में उचित तरीके डालकर छोड़ देना चाहिए।

अण्ड दोहन प्रक्रिया

निषेचन एवं उर्वरण हेतु केवल महाशीर के जीवित प्रजनकों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए। जब वे जाल में फँसे हुए हों तो परिपक्व प्रजनकों से अण्डों को तुरंत निकाल दिया जाना चाहिए ताकि उन्हें कोई नुकसान न पहुँचे। आमतौर पर मछलियों से अण्डों का दोहन उर्वरण "शुष्क विधिष" के द्वारा किया जाता है। इसमें अण्डों का दोहन एक सुखे पात्र या बेसिन में किया जाता है। इन अण्डों का कृत्रिम निषेचन या तो दो पुरूष विधि या फिर किसी अनुभवी पुरूष द्वारा किया जाता है। पूर्णतः परिपक्व मछली या प्रजनक के पेट पर हल्के से दबाकर अण्डें की एक धारा निकलती है। इस प्रकिया को अनेक बार तब तक दोहराया जाता है जब तक परिपक्व

अण्ड दोहन प्रक्रियाः नर व मादा

अण्डे पूरी तरह बाहर नहीं निकल जाते। कभी–कभार अण्ड दोहन के समय अण्डों के साथ कुछ रक्त भी आ जाता है जो कुछ अण्डों के अपरिपक्व होने, अधिक दबाव डालने आदि के कारण हो सकता है। इसके पश्चात अण्डों का दोहन तुरंत बंद कर देना चाहिए। महाशीर के अण्डें का रंग हल्के पीले से लेकर चमकीले नारंगी रंग का तथा उसका व्यास 2.5 से 3.5 मि.मी. होता है समान्यतः का रंगीनपन मछली के आवास स्थलों को सूचित करता है। ताजे दोहित अण्डें प्राकृतिक रूप में तब तक चिपचिपे होते हैं जब तक कि वे पानी में रहकर कठोर नहीं हो जाते।

अण्डों का निषेचन

अण्डों को दोहने के पश्चात समान कार्य विधि से नर मछली का शुक्र रस निकाला जाता है। 2–3 मादाओं से निकाले गए अण्डों की पर्याप्त मात्रा के निषेचन के लिए एक चम्मच शुक्र रस पर्याप्त होता है। दोनां लिंगो के उत्पादों के मिश्रण के पश्चात उनको निषेचन के लिए तुरन्त एक स्थान पर रखा जाता है। पात्र के अन्दर अण्डों को सूर्य की प्रत्यक्ष किरणों से उचित प्रकार ढक कर रखा जाना चाहिए और कुछ समय के लिए उसको हिलाना–ढुलाना नहीं चाहिए। अण्डों को पानी से 30–40 मिनट तक कठोर होने के लिए छोड देना चाहिए। इसके पश्चात बार–बार धोने के उपरान्त अतिरिक्त शुक्र रस और बाध्य पदार्थ धुल जाते है। पानी में कठोरीकरण के पश्चात निषेचित अण्डे 3.5–4.0 मिमी. तक के हो जाते है। निषेचिकरण दर का मूल्यांकन "एसिटिक ऐसिड

अण्डों का निषेचन

विधि'' के द्वारा किया जाता है तथा कठोरीकृत अण्डों को 5% ग्लेशियल एसिटिक एसिड के मिश्रण में 24 घण्टे के लिए रख दिया जाता है। अकुंरक्षम अण्डे पारदर्शी हो जाते है जबकि अनिषेचित अण्डे कभी भी पारभाषी हो सकते है। परिपक्व प्रजनकों का उद्भवन करने के लिए उनका रख–रखाव उचित प्रकार से किया जाना चाहिए ताकि 90% से अधिक निषेचन हो सके।

अण्डों का परिमाणन एवं उद्भवन

हैचरी में निषेचित अण्डों की कुल संख्या के रख–रखाव तथा विभिन्न स्तरों पर उनकी उत्तरजीवितता व परिमाणन के मूल्यांकन हेतु उनका एक लेखा तैयार कर लिया जाता है। महाशीर के सम्बन्ध में इसके लिए आयतीन और भारमितीय दोनां प्रकार की पद्वतियों का प्रयोग किया जाता है। सामान्यतः सुनहरी महाशीर के अण्डों की संख्याओं की मात्रा प्रति लीटर 35–60 तथा भार 60–100 अण्डे/ग्राम के मध्य होता है। अण्डों के कठोरीकरण की प्रकिया के पूर्ण होने तथा निशेचित अण्डों का संख्यात्मक मूल्यांकन करने के पश्चात उनको हैचरी में सेने, उदभवन एवं पालन–पोषण के लिए हस्तांतरित किया जाता है। हैचरी के अन्दर निषेचित अण्डों को सूर्य की सीधी किरणां से बचाकर उचित प्रकार से सुरक्षित रखना चाहिए। इन निषेचित अण्डों को पर्याप्त आक्सीजन युक्त (7.5–9.0 मि.ग्रा./ ली.) साफ व ताजे पानी की निरंतर आपूर्ति में उद्भिद् किया जाता है।महाशीर के अण्डों के उदभवन के लिए जल का तापमान 20–25^{0} सेग्रे. अधिक सुविधाजनक रहता है। हैचरी के अनुकूलतम वातावरण में 20–25 सेग्रे. पर उद्भवन तथा 10–12 दिनों

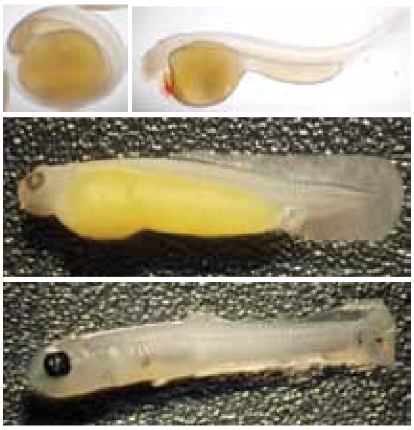

अण्डों का विकास

में 80–95 घण्टो में अण्डपीत का पूर्ण अवशोषण हो जाता है।

अण्डों एवं जीरों का हवाई परिवहन

सुदूरवर्ती क्षेत्रों में महाशीर के बीजों का सुगमतसपूर्वक वितरण एक गिली रूई में उसके अण्डों को रखकर हवाई परिवहन के द्वारा किया जाता है। पानी में कठोरकरण प्रकिया के पश्चात अण्डों को गीली रूई में 2–3 परतों में सावधानीपूर्वक प्लास्टिक के बक्से में पांक्तिबद्व रखा जाता है। अण्डों को सेंने का समय कम से कम 80 घण्टों का होता है। अण्डों को सेंने का कार्य सामान्य प्रकिया के द्वारा किया जाता है।

खाली आँतो वाली मछली भरी ऑतो की अपेक्षा आक्सीजन का उपभोग कम करती है। परिवहन के लिए पाचन के दौरान उत्पादित खराब पानी,अमोनिया,यूरिया आदि का प्रयोग किया जाता है। परिवहन से पूर्व मछलियों को अत्यधिक तनाव का अभ्यस्थ हो जाना चाहिए। मत्स्य परिवहन के लिए विभिन्न आकार–प्रकार के प्लास्टिक बैंगों अथवा कंटेनरों का जो कि पी.वी. सी., फाइबर ग्लास (FRP), लोहे या एल्मुनियम आदिं से निर्मित हो को प्रयोग में लाना चाहिए। अनुकूलन एवं परिवहन का समय बहुत अधिक लम्बा हो तो मछलियों को संक्रमण से बचाने के लिए 20–40 मिलिग्राम प्रति लीटर पानी मे प्रतिरोधी (एन्टीबायटिक) दवाओं का इस्तेमाल किया जा सकता है। 0.03% साल्ट के प्रयोग द्वारा परिवहन के दौरान मछलियों में तनाव संवेदनशीलता और क्रियाशीलता कम हो जाती है। परिवहन के दौरान आवश्यकता से अधिक अर्थात ओवर लोडिंग से बचना चाहिए।परिवहन के पश्चात

मछलियों को छोडते समय पानी की गुणवत्ता और तापक्रम का समान होना बहुत आवश्यक है।

महाशीर का पालन–पोषण (रैचिंग)

रैचिंग अर्थात् पालन–पोषण को ऐसी मत्स्य –पालन प्रणली के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें तरूण महाशीरों को पानी में असुरक्षित भोजन पर छोड़ दिया जाता है तथा जहां उसका आकार–प्रकार बाजार में बेचने योग्य हो जाता है। इस प्रकार रैचिंग मछलियों के पुनः प्रसार की प्रभाव पूर्ण विधि है। रैचिंग के सम्बन्ध में बिलकुल भी भ्रान्त होने की आवश्यकता नही है कि मत्स्य वृद्धि या प्रत्यारोपण अथवा इसके भण्डार में वृद्धि को क्या कहा जाता है। रैचिंग का अर्थ है नदियों और जलाशयों में जीरों, अण्डों व अंगुलिकाओं को उन स्थानों पर छोड़ा जाना जहां पर वयस्क मछलियों उनके अण्डों के विस्थापन के समय उन तक न पहुँच सके अथवा जो पालन–पोषण हेतु उपयुक्त क्षेत्रों को उपलब्ध करा सके। रैचिंग संकट ग्रस्त मछलियों के समय बद्व और आशाजनक रूप से पुर्नवासन का कार्य हो सकता है।

महाशीर के लिए उपयुक्त हैचरी तकनीकियों का अभाव तथा इसके बीजों के पालन की प्रमुख समस्या महाशीर पालन के कार्य में एक बडी बाधा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के शीतजल अनुसंधान निदेशालय ने सुनहरी महाशीर के बीज उत्पादन की पहल की है और उसके बीजों को भारत सहित विश्व के अन्य देशों की नदियों धाराओं और जलाशयों में संचयित किया है ताकि महाशीर मत्स्य उत्पादन में वृद्वि हो,साथ ही इस निदेशालय ने इस प्रजाति के जननद्रव्य को समाप्त होने से बचाने के लिए इसे सुरक्षित भी रखा है।

हैचरी में उत्पादित बीजों को पश्चिम बंगाल, सिक्किम व हरियाणा राज्य के मत्स्य विभागों के साथ–साथ अन्य संस्थानों को भी हस्तांतरित किया जाता है। इस प्रजाति के बीजों को पापुआ न्यू गिनी की रामू तथा स्पिक नदियों में भी संचायित किया गया है। वर्ष 2001 में निदेशालय ने इसके बीजों को उत्तराखण्ड के कुमायूँ क्षेत्र की श्यामलाताल झील में संचयित किया जहाँ आज ये पर्याप्त मात्रा में फूल–फल रही है और पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बन रही है। इसी प्रकार के कार्यक्रमों को उन सभी क्षेत्रों में भी आयोजित किया जाए जहाँ महाशीर पर्याप्त मात्रा में विघमान है।

मत्स्य आखेट एवं पर्यटन

महाशीर ऐशिया की प्रमुख आखेट योग्य मछली है। एप्टले ने कहा है '' महा'' अर्थात बड़ा तथा सीर अर्थात सिर अथवा शेर। सभी मत्स्य पालकों के लिए महाशीर को एक प्रतिष्ठा के रूप में माना जाता है। देश और विदेश से लाखों पर्यटक भारतवर्ष के प्राकृतिक सौन्दर्य को देखने आते हैं तथा यहाँ की पर्वतीय नदियों, धाराओं और झीलां में मत्स्य आखेट का आनन्द लेते हैं। वास्तव में समाज के सभी सामाजिक आर्थिक वर्ग तथा सभी आयु वर्ग के लोग मत्स्य आखेट का आनन्द उठाते हैं एवं आज के दिन यह मनोरंजन का प्रमुख आश्रय–स्थल बन चुका है। पर्यटकों के परिवारों के अतिरिक्त इन आखेट–स्थलों के आस–पास रहने वाले स्थानीय लोग मनोरंजन के साथ–साथ भोजन के लिए भी मछलियों का आखेट करते है। पर्वतीय क्षेत्र के जल स्त्रोतों में रहने वाली मछलियों में महाशीर मछली सबसे अधिक आखेट–योग्य मछली है, क्योकि इसकी खूबियां शिकारियों को खूब रिझाती हैं। भारत में महाशीर का शिकार अपेक्षाकृत रूप से धनाढ्य वर्ग के परिवारों तथा यहां घूमने के उद्देश्य से आने वाले पर्यटकों द्वारा ही किया जाता है। यद्यपि हिमालय की नदियों में शिकार योग्य मछलियों के सतत् उत्पादन की अपार संभावनाऐं लेकिन अब इनका पर्याप्त मात्रा में संदोहन किया जा चुका है। बाह्य अथवा निम्न हिमालय क्षेत्र में टेड़ी मेड़ी बहने वाली नदियाँ/धाराऐं सुनहरी महाशीर का अच्छा स्त्रोत हैं तथा पिछली शताब्दीयों में आखेटकों ने इन क्षेत्रों से बड़ी–बड़ी मछलियां पकड़ी है। अतः आखेट आदि के उद्देश्यों के उद्वेश्यों के लिए इन जल क्षेत्रों में महाशीर की वृद्धि हेतु ''महाशीर जल स्त्रोतों को विकसित करना होगा। हिमालय की नदियों, धाराओं में व्यास तथा उसके मैदानी क्षेत्र की सहायक नदियों तथा गिरी नदी (हि.प्र.) ताजे वाला (हरियाणा) से डाक पत्थर (उत्तराखण्ड) के मध्य यमुना नदी, टिहरी से ऋषिकेष के मध्य तथा इसकी सहायक नदियों, काली नदी, सरयू, पूर्वी व पश्चिमी रामगंगा, पूर्वी व पश्चिमी नयार, सौंग, कोसी (समस्त उत्तराखण्ड) चिनाव उसकी सहायक नदियों, तवी ईखनी नाला एवं अंजी (जम्मू एवं कश्मीर) तथा जिया भोरेली, दिवांग, सुवन सिरी मानस (उत्तर–पूर्वी क्षेत्र) आदि नदियां महाशीर के

सुनहरी महाशीर का ranching

कोसी नदी, रामनगर, उत्तराखंड

साड़ियाताल झील, नैनीताल, उत्तराखंड

नैनीताल झील, नैनीताल, उत्तराखंड

नौकुचियाताल झील, नैनीताल, उत्तराखंड

बैजनाथ मंदिर, उत्तराखंड

मेहओ झील, अरुणाचल प्रदेश

सम्बन्ध में अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। इनके अतिरिक्त कुमायूँ की सभी झीलों (भीमताल, सातताल, नौकुचियाताल, गरूणताल, खुर्पाताल) का महाशीर पालन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान हैं तथा यहाँ पर शिकारमाही अथवा आखेट की अपार संम्भावनाऐं भी हैं किंतु अधिकाशंतः इन जल स्त्रोतों में आखेट प्रिय लोग शिकार नही करते। अध्ययन से पता चला है कि कुमायूँ की नदियों में कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिन्हे आखेट स्थल के रूप में विकसित किया जा सकता है। ताकि इससे पर्यटन उद्योग को बढ़ावा मिले और इस क्षेत्र के लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके।

निष्कर्ष

सुनहरी महाशीर (टौर प्युटिटौरा) ताजे पानी की सबसे बड़ी प्रजाति के रूप में विख्यात है। यह केन्द्रीय हिमालय क्षेत्र की प्रमुख खाद्य एवं आखेट की मछली है। यद्यपि पूरे वर्ष में सुनहरी महाशीर की संख्या में कमी आ रही है जिसके कारण पर्वतीय नदियों एवं धाराओं की मात्स्यिकी प्रभावित हुई है। केन्द्रीय हिमालय क्षेत्र की विभिन्न जल प्रणालियां जैसेः नदियों, धाराओं, झीलों आदि में सुनहरी महाशीर की मात्स्यिकी के विकास की अपार सम्भावनाऐं है। इन मछलियों के बचाव एवं संरक्षण हेतु विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। जल स्त्रोतों का संरक्षण, मत्स्य बीज सम्वर्द्वन, कृत्रिम विधि द्वारा बीज उत्पादन, प्रक्षेत्रों मे मछलियों का पालन–पोषण आदि कुछ ऐसे विशिष्ट तौर–तरीके हैं जिनसे इन मछलियों को फिर से विकसित करके संरक्षण के साथ–साथ मत्स्य आखेट को बढावा दिया जा सकता है और समूचे हिमालय क्षेत्र के आर्थिक ढांचे को मजबूती प्रदान की जा सकती है। शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल ने महाशीर बीज पोषणशाला की स्थापना करके इस क्षेत्र में पहल की है,साथ ही महाशीर प्रजनन की मानकीकृत तकनीकियों के विकास द्वारा इसकी संख्या में वृद्वि का सफल प्रयास किया है।

सुनहरी महाशीर का प्रजनन एवं विकास

प्रवासी हिमालयन महासीर का अस्तित्वः प्रवसन एक पहलू

प्रकाश नौटियाल
हेमवती नंदन बहुगुणा विश्वविद्यालय, गढवाल, उत्तराखण्ड

वर्तमान में हिमालयन/गोल्डन महासीर प्रजाति को आई.यू.सी.एन द्वारा संकट ग्रस्त दर्शाया गया है। गंगा नदी तंत्र में अध्ययन से ज्ञात हुआ कि हिमालयन महासीर के जीवन चक्र में प्रवसन की विशेष भूमिका है। अतः इस प्रजाति के प्रवसन व्यवहार का ज्ञान अति आवश्यक है। ऋषिकेश–हरिद्वार स्थित गंगा नदी में महासीर के वयस्क तथा जुवेनाइल (जो 2–3 वर्षों में वयस्क बनेंगे) फरवरी–मार्च माह में ऋषिकेश से देवप्रयाग–टिहरी की ओर अलकनंदा व भागीरथी क्रमशः में बढ़ना प्रारम्भ करते है। जून–जुलाई तक भागीरथी, अलकनन्दा, गंगा में प्रवास के पश्चात वर्षा ऋतु में केवल ब्रूडर (प्रजनन हेतु तैयार वयस्क), भारी संख्या में नयार नदी में बाड़ आने पर प्रजनन हेतु जाती हैं। यह प्रक्रिया वर्षा ऋतु के अंत (सितम्बर माह) तक होती है। वर्षा के पश्चात घटते हुये जल स्तर के साथ–साथ ये वयस्क और जुवेनाइल ऋषिकेश की ओर अग्रसर होते है। अतः प्रवसन का प्रमुख उदे्श्य प्रजनन है और प्रवसन के अभाव में महासीर का प्रजनन संभव नहीं है। प्रजनन के अभाव में महासीर की जनसंख्या धीरे–धीरे घट रही है।

महासीर की प्रवसन प्रक्रिया से यह स्पष्ट है कि गंगा नदी में उसके अस्तित्व के लिए नयार व ऋषिकेश से देवप्रयाग तक गंगा में महासीर को संरक्षण प्राप्त होना चाहिए। नयार नदी में सतपुली से व्यासघाट के मध्य तक महासीर का प्रमुख प्रजनन क्षेत्र है। अतः नयार (पूर्वी व पश्चिमी) के संगम के बाद व्यासघाट व व्यासघाट–देवप्रयाग से ऋषिकेश तक का नदी क्षेत्र महासीर अभ्यारण्य बनना चाहिए। जब तक जल विद्युत परियोजना विकसित नहीं हुई थी भागीरथी व अलकनंदा नदियों में कैप्चर फिशरी की काफी क्षमता थी। हरिद्वार से भटवारी व विष्णुप्रयाग तक टोर तथा साइजोथोरेक्स का प्रमुख क्षेत्र हैं। साथ ही गारा, क्रोसीचीलस, गिलिप्टोथोरेक्स, सूडाकनिस, बोटिया इस क्षेत्र की क्षेत्र विशेष मछलियां है। इनमें से टोर तथा साइजोथोरेक्स प्रवासी मछलियां है जो गंगा के मैदानी भागों से पर्वतीय भाग के मध्य रहती हैं। हरिद्वार से भटवारी (जिला–उत्तरकाशी) व विष्णु प्रयाग (जिला–चमोली) तक भागीरथी व अलकनंदा नदी में क्रमशः मछलियों के प्रजनन के लिए प्रमुख क्षेत्र थे। इसमें कई स्थानों पर छोटी–छोटी जल धारायें जुड़ती हैं जिनमें की मछलियां प्रजनन हेतु प्रवास करती थी। इन परियोजनाओं से प्रमुखतः महासीर संकट–ग्रस्त हो रही है।

70 के दशक के बाद जब से नदियों में जल विद्युत परियोजनाओं का निर्माण आंरभ हुआ तब से इन प्रवासी मछलियों के प्रवसन में बाधा पड़ रही है, क्यांकि इन परियोजनाओं के लिए बनाए गए बांध तथा झीलें उनके प्रवास में रूकावट पैदा कर रही हैं। टिहरी जल–विद्युत परियोजना में झील की गहराई अधिक होने के कारण अब ऐसा जल मार्ग नही बनाया जा सकता जिससे मछलियां प्रवसन कर सकें। अलकनंदा नदी पर बनी विष्णु प्रयाग जल–विद्युत परियोजना के कारण क्षेत्र विशेष मछलियों के आवास स्थल का विघटन हुआ है। परियोजना से पूर्व तथा बनने के उपरांत मछलियों के आवास स्थान में काफी बदलाव हुआ है जो कि मछलियों को संकट–ग्रस्त बनाता है। इसी नदी पर बने दूसरे बांध (ए.एच.ई.पी.सी) द्वारा श्रीनगर से ऊपर मछलियों के प्रवसन में बाधा पहुच रही है। इस बांध के बनने से मछलियों का श्रीनगर से ऊपर प्रवसन पूर्ण रूप से बंद हो गया है। भागीरथी नदी में टिहरी बांध के निर्माण से पूर्व मनेरी भाली परियोजना का प्रथम चरण बांध, मनेरी गांव के बाद मछलियों के भागीरथी प्रवसन को रोक देता है। इसी प्रकार टिहरी जल–विद्युत परियोजना के दौरान मछलियों के प्रवसन हेतु जल मार्ग अक्टूबर 2005 को बांध का जल स्तर बढाने हेतु पूर्ण रूप से बाधित कर दिया गया, जिससे मछलियों (टोर तथा साइजोथोरैक्स) का प्रवसन पूर्ण रूप से अवरूद्ध हो गया। टी.एच.डी.सी द्वारा एक और जल–विद्युत परियोजना का निर्माण किया गया जो कि टिहरी बांध से 17 कि.मी. की दूरी पर है। इससे भी मछलियों के प्रवसन में बाधा उत्पन्न हुई है तथा उनके प्रजनन पर प्रभाव पड़ा है।

कौटलि–भेल जल विद्युत परियोजना के निर्माण हेतु ई.आई.ए किया गया जिसमें मछलियों तथा अन्य जलीय जीवों की तत्काल स्थिति तथा संरक्षण का जायजा किया गया जिसमें टोर तथा साइजोथोरैक्स को प्रमुखता दी गयी।

उपरोक्त बिंदुओं से यह निर्णय निकाला जाता है कि जल–विद्युत परियोजना मछलियों के प्रवसन में बाधाएं उत्पन्न करती हैं, जिससे की बांध के ऊपरी हिस्सों में मछलियों की संख्या कम हो रही है क्योंकि मछलियां यहां तक प्रवास नहीं कर पा रही हैं। प्रायः इन मछलियों के संरक्षण हेतु बांध के नजदीक हैचरी का निर्माण प्रस्तावित किया जाता है। नयार नदी में भी मछलियों के संरक्षण हेतु हैचरी बनाने की अपार सम्भावनाएं हैं। स्थिति की व्यापकता को समझाते हुए हैचरी के अतिरिक्त संरक्षण के और भी तरीके तलाश करने होंगे।

काली परिपक्व मादा

काली (लेबियो डायचिलस) एक स्वदेशी मध्यम आकार वाली माइनर कार्प प्रजाति है। यह तलछट भोजी तथा समुद्रतल से 400–1000 मी. की ऊँचाई पर नदियों एवं उनकी धाराओं में वास करती है। इस प्रजाति का शरीर सामान्य रूप से भूरा श्वेत व अत्यधिक रेखाओं वाला एवं सिर छोटा होता हैं। इस शाकाहारी मत्स्य प्रजाति का मध्य ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों में पॉलीथीन बिछे तालाबों में पालने की अपार संभावनाऐं है।

ब्राउन ट्राउट (साल्मोट्रूटा फेरियो, वर्ग 1908)

शुभम कश्यप, अभिषेक वर्मा, उपेन्द्र सुमन एवं विकास कुमार
चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कानपुर

प्रस्तावना

ब्राउन ट्राउट (सैल्मो ट्रूटाफेरियो) ठण्डे पानी की एक यूरोपीय प्रजाति हैं, यह सैल्मोनिर्ड वर्ग की एक महत्वपूर्ण मछली है। ब्राउन ट्राउट पर्वतीय एवं समतल क्षेत्रों के शीतजल तालाबों, झीलों एवं नदियों में पायी जाती है। यह प्रजाति विश्व के विभिन्न प्राकृतिक वातावरण में पायी जाती है जैसे कि यूरोप, उत्तरी अमेरिका के कुछ भाग, मध्य पूर्वती भाग एवं पश्चिमी एशिया। ब्राउन ट्राउट आकार में प्रायः छोटी होती हैं एवं शरीर की लम्बाई 20–30 से. मी. से अधिक नही हो पाती है। ब्राउन ट्राउट 2–3 वर्ष में प्रजनन के लिए परिपक्व हो जाती है। जब जल अल्प क्षारीय होता है तो उसमें भोजन की मात्रा बढ़ जाती है। इस परिस्थिति में ब्राउन ट्राउट 2–5 किलो तक हो जाती है एवं इसका जीवन काल 10–14 वर्ष तक का होता है। यह प्रजाति छोटे झील से बढ़ते हुए झरने के अधीन प्रजनन के लिए जाती है और वयस्क ट्राउट प्रायः भोजन झील से प्राप्त करती हैं। ब्राउन ट्राउट झील में ही प्रजनन के लिए परिपक्व हो जाती है। जिन झीलों में पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में पायी जाती है वहां ब्राउन ट्राउट की लम्बाई में अधिक वृद्धि होती है। ब्राउन ट्राउट पूर्ण रूप से प्रवासी मछली है। यह प्रजनन के लिए बहती हुई नदी में प्रवेश करती है जो झील की ओर बहती है।

ब्राउन ट्राउट एक विदेशी प्रजाति है जो इंग्लैण्ड से भारत में अण्डों की अवस्था में सन् (1899–1900) में लायी गयी थी। सर्वप्रथम इन अण्डों से जीरा सफलता पूर्वक एक छोटी ट्राउट हैचरी में किया गया जो हरवन (कश्मीर) में स्थित है। ब्राउन ट्राउट के अंगुलिकाओं को कश्मीर से हिमालय की तरफ संवर्धन करने के लिए भेजा गया। कश्मीर से अन्य प्रदेश जैसे गिलगिट, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तरी बंगाल, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय एवं नागालैंड में सफलतापूर्वक संवर्धन किया गया। हिमाचल प्रदेश में ब्राउन ट्राउट के अण्डों को कुल्लू, कांग्रा और चम्बा की घाटी में प्रवेश कराया गया, उचित झरनों का किनारा, एवं कुण्ड न होने के कारण ब्राउन ट्राउट का उत्पादन उचित ढंग से नही हो पाया। लेकिन कुल्लू घाटी के महीली हैचरी में सफलतापूर्वक संवर्धन कर लिया गया।

वैज्ञानिक वर्गीकरण:

किंगडम	एनीमेलिया
फाइलम	कॉर्डेटा
क्लास	एक्टीनोप्टेरीगाई
ऑडर	सैल्मोनीफार्म
फैमली	सैल्मोनाइडी
जीनस	सैल्मो
स्पीसीज	ट्रूटा

रहन–सहन

थूरी ट्राउट उन्ही नदियों या झीलों में पायी जाती हैं जहां का वातावरण शुद्ध एवं ऑक्सीजन की उपर्युक्त मात्रा पायी जाती है। ब्राउन ट्राउट झरने और बजरी वाले क्षेत्र में अच्छी तरह विकास करती है। इसके लिए 20–100 सेंमी. गहरा और 30–100 सेमी. प्रति सेकंड तेज प्रवाह वाले पानी में उपयुक्त है। प्रजनन काल में इस मछली को 2–12^0 से.ग्रे. वाले जल की आवश्यकता होती हैं एंव व्यस्क प्रजनन के समय नदी के किनारे छिछले पानी में रूक जाते है, जहाँ पानी की गहराई 45 सेमी. और जल का वेग 5–80 सेमी. प्रति सेकण्ड होता है। ट्राउट अपने भोजन में मेफ्लाई, स्नेल्स एवं झींगा खाती है।

(विक्टोरिया) देश के सभी नदियों में भूरी ट्राउट का उत्पादन किया जा सकता हैं क्यांकि वहां का वातावरण और परिस्थितियों भूरे ट्राउट के लिए अनुकूल है। भूरी ट्राउट में अन्य ट्राउट से अधिक तापमान सहन करने की क्षमता पायी जाती हैं। यह मछली अंटार्कटिका जैसे ठंडे महाद्वीप में रहने में सक्षम है। ब्राउन ट्राउट सबसे ज्यादा पथरीली तल एवं डूबे हुए चट्टानों, पौधों के बीच में छुपे होते है।

बायोलॉजी

ब्राउन ट्राउट धाराओं, तालाबों, नदियों झीलों में पायी जाती है। किशोर

3–4 वर्ष में परिपक्व हो जाते हैं एवं सहायक नदियों और झीलों के छोरों पर प्रवाशन करती है। यह प्रजाति शीतजल एवं अधिक ऑक्सीजन युक्त उच्च स्तरीय पानी के स्त्रोतों में रहना पसन्द करती है। एक मादा मछली एक बार में 3000–4000 अंडे देती है। मादा मछली रेत एवं बजरी के द्वारा अण्डों को ढ़कती है। ब्राउन ट्राउट के स्पॉन 2–3 सप्ताह तक बजरी में रहते है जब उनकी लम्बाई 25 मिमी. की नहीं हो जाती है फिर ये पानी की बीच सतह पर भोजन के लिए जाते है। किशोर मुख्य रूप से जलीय एवं स्थलीय कीड़ों को अपने आहार के रूप में लेती है। जिसमें ज्यादातर मोलस्क, क्रस्टेशियन एवं छोटी मछलियों को अपने आहार में लेती है।

आहार

ब्राउन ट्राउट एक मांसाहारी मछली हैं तथा इसका पाचन तंत्र पशु प्रोटीन को अवशोषित करने के लिए उचित होती है। ब्राउन ट्राउट अपने आहार में उचित मात्रा में पशु प्रोटीन उच्च श्रेणी (45-50%), निम्न श्रेणी (28-35%) युक्त होता है। कार्बोहाइड्रेट युक्त (ग्लूकोज, लैकटोज इत्यादि) को निम्न मात्रा में आहार में उपयोग करते है। ट्राउट के आहार में वसा एक छोटी मात्रा में आवश्यक होती है। उचित खाद्य मिश्रण में लगभग 5-8% वसा होती है। ब्राउन ट्राउट के आहार में खनिज एवं विटामिन एक निम्न मात्रा की आवश्यकता होती है।

प्रजनन

ब्राउन ट्राउट एक एनाड्रोमस मछली है। यह प्रजनन के लिए समुद्र से नदी की आरे आती है यह मछली बसंत ऋतु में अण्डे देती है। ब्राउन ट्राउट को अच्छी तरह से परिपक्व होने के लिए 3–4 वर्ष लगते है। इसका प्रजनन काल अक्टूबर से नबम्बर के बीच होता है। यह मादा मछली एक बार में 3000–4000 अंडे देती है और अंडे का व्यास 3–4 मिमी. होता है।

उत्पादन

ब्राउन ट्राउट ताजे पानी की सैल्मोनिडी परिवार की एक मछली है। इसका उत्पादन हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, उत्तराखण्ड, तमिलनाडू एवं केरल में अधिक होता है। ब्राउन ट्राउट सर्वप्रथम ब्रिटिश के द्वारा भारत में मनोरंजनात्मक मछली के रूप में प्रस्तुत किया गया।

ट्राउट के अंडे , इण्लैंड से भारत के जम्मू में सर्वप्रथम एक छोटी हैचरी में स्थापित किए गए थे। हिमाचल प्रदेश में देश का सबसे अधिक ब्राउन ट्राउट का उत्पादन होता है। ब्राउन ट्राउट हिमाचल प्रदेश की सहायक नदियां जैसे व्यास, रावी, सतलुज नदी के बर्फीलें छोरों में पायी जाती है। इस राज्य में ब्राउन ट्राउट की कुल 512 हैचरी है, जिसमें कुल्लू, चम्बा, शिमला, किन्नौर एवं मण्डी शामिल है। सन् 2014–2015 में ट्राउट का उत्पादन देश में 351. 27 मेट्रिक टन हो गया जो कि 2010–2011 में 75.91 मेट्रिक टन ही था। इस मछली का उत्पादन अन्य स्थानों जैसे चम्बा, किन्नौर, कुल्लू, लाहुल, स्पीती, पब्बार में अधिक होता है।

पालन की देश में सम्भावनायें

उचित गुणवत्ता युक्त पर्याप्त शीतजल उपलब्ध होने के कारण यह मछली 1500 मी. से अधिक उँचाई वाले स्थानों (उच्च नदी घाटी कटिबंध) में पायी जाती है इस विदेशी मछली का उत्पादन समुचित कृत्रिम पौष्टिक आहार द्वारा किया जा सकता है। ट्राउट पालन हेतु प्रदूषण रहित, उच्च गुणवत्ता वाले शीतजल की आवश्यकता होती हैं। इस मछली के उत्पादन के लिए जल का तापमान 20^0 से.ग्रे. से नीचे एवं घुलनशील आक्सीजन की मात्रा 8–10 मि.ली. ग्राम/लीटर तक रहना अत्यंत आवश्यक माना गया है। ब्राउन ट्राउट पालन हेतु उपयुक्त जल स्त्रोतों के निकट समतल भूखण्ड पर कंक्रीट के लम्बे एवं संकरे तालाबों का निर्माण कर जल का समुचित प्रवाह की व्यवस्था आवश्यक होती है।

भारत में इसका उत्पादन हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, उत्तराखण्ड, तमिलनाडु एवं केरल में किया जाता है। ब्राउन ट्राउट सबसे ज्यादा हिमाचल की नदियां जैसे व्यास, रावी, सतलुज के ठण्डें जल के क्षेत्रों में सबसे अधिक पायी जाती है।

पूर्वोतर भारत की औरनामेंटल मछलियों के रूप में स्वदेशी मछलियों की संभावनाएं

सोना यांगोपम एवं दीपेश देबनाथ
भा.कृ.अनु.प.–सेंट्रल इनलैंड फिशरीज रिसर्च इनस्टिट्यूट, रिजनल सेंटर, गुवाहाटी

रंगीन व विभिन्न मछलियों (औरनामेंटल मछलियाँ) का पालन सबसे पुराने व लोकप्रिय शौकों में से एक है। औरनामेंटल मछलियाँ रंग–बिरंगी मछलियों को कहा जाता हैं। इनकी शांतिपूर्ण प्रकृति के कारण इन्हे पालतू जीवों के रूप में एक्वैरियम या बगीचे में छोटे तालाब में पाला जाता है, जिसका उद्देश्य मछलियों के सौंदर्य का आंनद लेना है। शौक के अलावा यह भी माना जाता है कि घर में एक्वैरियम रखने से घर में धन व भाग्योदय की प्राप्ति होती है। माना जाता है कि पालतू जानवरों के रूप में सजावटी मछलियों को रखने का प्रचलन कई सौ साल पहले चीन में हुआ, जहां इन्हे काँच के कटोरों में रखा जाता था। सन् 1853 में इंग्लैंड में रीगेंट्स पार्क में एक्वैरियम का पहला सार्वजनिक प्रदर्शन किया गया था। भारत में, औरनामेंटल मछलियों में रूचि सन् 1951 में मुंबई के तारापुर वाला एक्वैरियम के बाद देखी गई। पूर्वात्तर में यह शौक, पहली एक्वैरियम की दुकान जो कि गुवाहाटी नर्सरी द्वारा सत्तर के उत्तरार्ध में खोली गई के बाद बहुत बढ़ गया। वर्तमान में गुवाहाटी शहर में लगभग 30 सक्रिय एक्वैरीयम की सारी आवश्यकताओं को पूरी करने कि क्षमता है, लेकिन कुछ ही औरनामेंटल मछलियों की प्रजनन ईकाइयां देखी गई है। पूर्वोत्तर की स्वदेशी मछलियों की औरनामेंटल मछलियों के रूप में अच्छी मूल्य है और 100 से ऊपर प्रजातियों को औरनामेंटल मछलियों के रूप में पहचाना गया है। इस क्षेत्र में औरनामेंटल मछलियों के व्यापार में विस्तार की असंख्य सम्भावनाऐं है, जो कि सिर्फ रोजगार का ही साधन नहीं बल्कि विदेशी मुद्रा को भी अर्जित कर सकती है। अब यह समय आ गया है जब पूर्वोत्तर के राज्य जागरूक होकर इस जैविक सम्पदा का लाभ उठा सकते है। इसके साथ ही यह ध्यान रखने की भी जरूरत है कि जो प्रजाति व्यापार के योग्य है क्या वो किसी प्रकार के खतरे में तो नही हैं।

पूर्वोत्तर भारत में औरनामेंटल मछलियों में जैव विविधता

भारत के पूर्वोतर राज्यों को ताजे पानी की मछलियों के व्यवसायिक हाटस्पॉट के रूप में पहचाना गया है। कई शोधकर्ताओं ने पूर्वोत्तर भारत की स्वदेशी मछलियों के अध्ययन में उनके औरनामेंटल मूल्य को पहचाना है। शोध के अनुसार लगभग 806 ताजे जल की मछलियों की प्रजाति में 266 प्रजातियां पूर्वोत्तर राज्यों में है जो कि 114 जेनेरा के तहत 38 फैमिली व 10 आर्डर में स्थित है। लगभग 250 प्रजातियों में औरनामेंटल मूल्य व अधिक प्रजातियां असम (187) में अंकित की गई है, इसके बाद अरूणाचल प्रदेश (165), मेघालय (159), मणिपुर (139), त्रिपुरा (103), नागालैंड (71), मिजोरम (46) व सिक्किम (29)। औरनामेंटल मछलियों की संरक्षण स्थिति से यह पता चला है 250 प्रजातियों में से 10 गंभीर रूप से लुप्तप्राय है, 28 लुप्तप्राय, 49 भेघ, 45 खतरे के करीब है एवं 8 कम खतरे में हैं। 3 में जानकारी की कमी व 107 का मूल्यांकन नही है। करीब 58 स्वदेशी औरनामेंटल मछलियों को पूर्वोतर राज्यों से निर्यात की जा रही है।

क्षेत्र से औरनामेंटल मछली का व्यापार

एक्वेरियम की मछलियों में बढ़ती रूचि के परिणामस्वरूप विश्व–स्तर में औरनामेंटल मछली व्यापार में लगातार वृद्धि हुई है। एक्वेरियम में मछलियां रखने हेतु औरनामेंटल मछलियों का व्यापार 1080 के दशक से चला आ रहा है। 2011 में औरनामेंटल मछलियों का विश्व व्यापार लगभग 372 मिलियन अमेरिकी डालर अर्जित किया गया है। पूरे उद्योग की कीमत सहायक उपकरण व चारा के साथ तकरीबन 18–20 अरब अमेरिकी डालर आंका गया है। हालांकि, 2500 से अधिक प्रजातियों का व्यापार किया जाता हैं, फिर भी ताजे पानी की 30–35 प्रजातियां अपना वर्चस्व कायम किये है। 90 प्रतिशत ताजे पानी की

पूर्वोत्तर भारत की रंगीन मत्स्य प्रजातियाँ

मछलियों को कैंद में प्रजनन किया जाता है, जबकि कुछ ही समुद्री औरनामेंटल मछली का ऐसे प्रजनन किया जा रहा है। भारत में तकरीबन 28 लाख की मूल्य की औरनामेंटल मछली का निर्यात जापान, सिंगापुर, यू.एस.ए., चीन, जर्मनी, ताईबान, थाईलैण्ड, हांगकांग, श्रीलंका, नीदरलैंड, फिंनलैंड व मालदीव करता है। यूनाइटेड स्टेड में औरनामेंटल मछलियों का सबसे बड़ा व्यापार है, उसके बाद युरोपियन यूनियन व जापान, सिंगापुर कई वर्षों से सबसे बड़ा निर्यातक रहा है और प्रमुख व्यापार का केन्द्र माना जाता है।

भारत को वरदान स्वरूप उपयुक्त जलवायु प्रदान हुई हैं, जिसके चलते कई विदेशी व स्वदेशी औरनामेंटल मछलियों के लिए प्रजनन, विकास व परिपक्वता के लिए उपयुक्त परिस्थितियां है। लेकिन वैश्व स्तर में औरनामेंटल मछली में भारत का हिस्सा नगण्य है और ज्यादातर व्यापार जंगली मछलियों का है। यह क्षेत्र ग्रामीण व शहरी परिवारों को आय बढ़ाने व अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से जुड़ने का अच्छा अवसर प्रदान करते है। क्षेत्र के औरनामेंटल मछली व्यापार में निर्यात धीरे–धीरे जोर पकड़ रहा हैं और अधिकांश मछली जंगली संग्रह से आती है। मछलियों को अपने प्राकृतिक आवास से चयनित लोगों द्वारा एकत्रित करके (गुवाहाटी व क्षेत्र के कुछ अन्य कस्बों) कुछ अनियंत्रित एजेंटों/ स्टोकिस्टो के माध्यम से कोलकाता, मुंबई व चैन्नई के कुछ निर्यातकों को भेजा जाता है। यह व्यापार ज्यादातर अव्यवस्थित है और ज्यादातर प्रकृतिक संग्रह पर निर्भर करता है। इस वजह से क्षेत्र में औरनामेंटल मछली के व्यापार का आंकलन नहीं किया जा सकता है। साथ ही उपलब्धता की अनिश्चिताओं को भी देखा गया है। क्योंकि मछलियों को प्राकृतिक आवासों (जल स्त्रोतों) से पकड़ा जाता है।

औरनामेंटल मछली के चयन के मापदंड

उपयुक्तता के आधार पर औरनामेंटल मछली के चयन के मापदंड निम्नानुसार है:

- आकर्षक के साथ सुन्दर रंग
- सिमित छोटे क्षेत्र में रहने के लिए अनुकूल
- शातिपूर्ण प्रकृति व अन्य मछली प्रजातियों के साथ रहना
- कृत्रिम चारें को आराम से स्वीकार करना
- अद्वितीय/असामान्य आकार (डेविल केटफिश,)
- दुर्लभ प्रजातियां (उदाहरण के लिए रंगीन चींग)
- अनोखी प्रकृति (रंग बदलने वाली बदिसबदिस)

स्वदेशी औरनामेंटल मछलियों का संग्रह : प्राकृतिक जल स्त्रोतों से एकत्रित मछलियों को ध्यान से पकड़ना चाहिए। पकड़ते हुए उन्हे किसी प्रकार की चोट नहीं आनी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए उपयुक्त मत्स्य पालन विधियां ड्रैग नेट, स्कूप नेट, कास्ट नेट, कटल फिशिंग व पानी का अपवाहन। पर्वतीय जल स्त्रोतों से मछली पकड़ना एक कठिन कार्य है। ऑक्सीजन के साथ–साथ संग्रह के स्थान पर आवश्यक व्यवस्था होनी चाहिए।

औरनामेंटल मछलियों की मौसमी उपलब्धता

स्वदेशी औरनामेंटल मछलियों का

पूरा व्यापार मौसमी है। क्षेत्र में उपलब्धता जुलाई से नवम्बर के महीने में सबसे ज्यादा होती है। दिसम्बर से जनवरी के दौरान भी उपलब्धता देखी जाती है, जब पानी का स्तर गीले मैदानों, निचले इलाके व मुख्य नदियों में कम हो जाता है। जिसके चलते उनका संग्रह करना आसान हो जाता हैं। दिसम्बर से जून तक उपलब्धता सबसे कम होती है, जिसके कारण ये उच्च मूल्य में बाजार में आती है, इसका एक प्रमुख कारण प्राकृतिक जल निकायों में इनकी संख्या इस मौसम में कम होना है।

प्रजनन व बीज का उत्पादन

सभी महत्वपूर्ण निर्यात योग्य प्रजातियों के लिए कैप्टिव प्रजनन की तकनीक का विकास करने की तत्काल आवश्यकता है क्योंकि मूल पशुधन का शोषण, आवास का नुकसान एवं बाजार में सालाना आपूर्ति बनाए रखने के लिए इनकी संख्या कम होती जा रही है। इसके अलावा खेत से पैदा हुई मछली, जंगली कुछ स्वदेशी ताजे पानी की मछलियां जिनका प्रजनन किया गया है वे इस प्रकार है: कोलिसा सोटा, सी. फासिआटा और चिथिसकोसुआटिस, गागातेसेनिया, डैनी डांगलिया, नंदसनदस, पुंटिसमिलेनेक्स, पुंटिमेलेनोस्टिग्मा, पुंटियसफिलामेंटोसस, पी. वाईटेटस, पैरालूसिओडैनिकोनिस, प्रिस्टोलेपिसमारगीनाटा, गारामूल्या, निमेस्चीलुसट्राईएगूलेरिस, डैनिओमाला बरिकस, सोमस्डेनिरिकस, एट्रोप्लस मैक्यूलेट्स, व मैक्रोपोडसकूपैनस। एक अच्छी तरह विकसित, रोग मुक्त, ब्रूड स्टाक, पोषक तत्व संतुलित, उचित तापमान व पानी की गुणवत्ता व अच्छी तरह तैयार नर्सरी जैसी सुविधा के साथ औरनामेंटल मछली के सफल स्पॉनिगं व लार्वा पालन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। व्यवसायिक प्रजनन की तकनीककी तरफ ध्यान देने की जरूरत है। औरनामेंटल मछलियों की विदेश में मांग, मूल्य और उनका पालन की जानकारी से व्यावसायिक प्रजनन को लोकप्रिय किया जा सकता है जिससे जंगली प्रजातियों का शोषण कम किया जा सकता है।

निष्कर्ष

क्षेत्र से स्वदेशी ताजे पानी की मछलियों की प्रजातियों के व्यापार में आपार सम्भावनाएं है, और स्थानीय लोगों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने की क्षमता है। लम्बें समय तक औरनामेंटल मछलियों के प्रजनन व पालन को विकसित किया जाना चाहिए ताकि प्राकृति जल स्त्रोतों में मछलिया सुरक्षित रहें। औरनामेंटल मछलियों के व्यापार में अन्य जलीय कृषि की तुलना में कम निवेश व जगह की आवश्यकता होती है, लेकिन जीव विज्ञान और मछलियों के स्वभाव से भलीभांति परिचित हो।

इस क्षेत्र को ज्यादा लाभकारी बनाने के लिए विभिन्न उत्पादन इकाइयों की स्थापना के माध्यम से सार्वजनिक–निजी साझेदारी को प्रोत्साहित किया जा सकता है। नई उद्यमिता को कई कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। जिसमें आपूर्ति व मूल्य श्रंखला की जानकारी की कमी, तकनीकी ज्ञान की कमी, समर्थन प्रणाली व संस्थानों आदि में जागरूकता की कमी है। सरकारी एजेंसियों को तकनीकी ट्रेनिंग कार्यक्रम, जो कि औरनामेंटल मछलियों के व्यापार में लाभदायी हो। जिसमें प्रजनन इकाईयों की स्थापना कैसे की जाए की जानकारी दी जाए। इसी उदेश्य को ध्यान रखते हुए पूर्वोत्तर राज्य में, वाणिज्य मंत्रालय, भारत सरकार के तहत एक उप–क्षेत्रीय कार्यालय गुवाहाटी में खोला गया है। जिसके अतर्गत क्षेत्र के सारे राज्य है। योजना के तहत औरनामेंटल प्रजनन इकाई की स्थापना में सब्सीडी, विदेशी बाजार में निर्यात व अंतराष्ट्रीय मेंलों में भागीदारी का अवसर प्रदान किया जा रहा है। इस तरह के सकारात्मक विकास आने वाले वर्षों में अधिक व्यापार, आजिविका, स्वरोजगार ग्रामीण विकास व विदेशी मुद्रा के प्रवाह का अवसर प्रदान करेंगे।

पूर्वोत्तर राज्यों की रंगीन मछलियों की जैव विविधता का संरक्षण तथा पालन एवं प्रजनन को बढावा देने हेतु प्रयास

सैय्यद गुलमस सईउद्दीन ज़ैदी एवं देबाजीत सर्मा
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

रंगीन मछलियाँ रखने का शौक विकासशील देशों में सर्वाधिक लोकप्रिय है तथा इसकी लोकप्रियता अब विकासशील देशो में भी बढती जा रही है। यही कारण है कि विश्व में इन रंगीन में मछलियों के व्यापार में लगातार वृद्धि हो रही है। आज विश्व में रंगीन मछलियो का व्यापार लगभग 6 अरब अमेरिकन डालर तक पहुँच गया है और इसके 8 प्रतिशत वार्षिक विकास वृद्धि होने से इस क्षेत्र के विकास में असीम संभावनाएं दिखाई देती है। विश्व के शीर्ष निर्यातक देशों में सर्वप्रथम सिंगापुर है इसके पश्चात हांगकांग, मलेशिया, थाईलैण्ड, फिलीपींस, श्रीलंका, ताइवान, इंडोनेशिया और भारत प्रमुख है। सजावटी मछलियों का सबसे बड़ा आयातक देश यूरोप और जापान है इसके बाद अमेरीका है। उभरतें हुए बाजारों में चीन और दक्षिण अफ्रीका है। संयुक्त राज्य अमेरिका में हर साल 500 मिलियन अमेरिकी डालर से अधिक मूल्य की एक्वेरियम मछलियों का आयात किया जाता है। भारत से एक्वेरियम मछलियों का निर्यात केवल 16 करोड रूपयों का ही होता है जो विश्व व्यापार की तुलना में नगण्य मात्र 0.008 है। भारत में रंगीन मछलियो का घरेलू बाजार भी बहुत अच्छा है जो लगभग प्रति वर्ष 10 से 15 करोड़ रूपयों का है और सालाना 20 फीसदी की दूर से बढ़ रहा है।

भारत के पूर्वात्तर राज्य जैव विविधता के क्षेत्र में विश्व के गिने चुने 34 हॉट स्पोट्स में से एक माना जाता हैं। यह भारतीय भारत मलायी और इंडो चीनी जैव भैगोलिक क्षेत्रो ं के बीच एक ट्रांजिशनल क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। उत्तर पूर्वी भारत में मुख्य रूप से आठ राज्य शामिल किए जाते है जिनमें अरूणाचल प्रदेश असम मणिपुर मेघालय मिजोरम नागालैंड सिक्किम और त्रिपुरा प्रमुख है। यह सभी राज्य जो अपने आप में अद्वितीय इकोलाजिकल जैव विविधता का उदाहरण प्रस्तुत करते है। यह क्षेत्र उत्तरी अक्षॉश 21.57" से 29.3" और पूर्वी देशांतर 84.46" से 97.3" के बीच समुद्र तल से 200–900 मी की उचाई पर स्थित है। पूर्वोत्तर भारत के विभिन्न राज्यों के माध्यम से प्रमुख ब्रह्मपुत्र और बराक विशालकाय नदियां अपनी बहुत सी कई सहायक नदियों के साथ कई फ्लड पलेन्स वेट लैंडस झीलों, तालाबों तथा छोटे–छोटे नालों अैर नदियां के रूप में बहती है। इस क्षेत्र में लगभग 19,150 कि मी नदिया 23972 हेक्टेयर जलाशयों 1, 43,740 हैक्टेयर झीलों 40,809 हेक्टेयर तालाबों और 2,780 हेक्टेयर क्षेत्र चावल व मछली की खेती के रूप में विशाल जल संस्थान उपलब्ध है। यह सम्पूर्ण क्षेत्र जैविक संपदा का अपूर्व घरोहर माना जाता हैं। इन विशाल जलीय संसाधनों से ओतप्रोत पूर्वोत्तर राज्य में विभिन्न प्रकार की अमूल्य रंगीन मछलियां का विशाल भंडार उपस्थित है।

हमारे देश की मीठे पानी मे पायी जाने वाली मछलियों की कुल प्रजातियां का 33% हिस्सा भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में ही पाया जाता है। यहा पर लगभग (267) प्रजातियों की मछलियाँ पायी जाती है जो (114) जेनरा (38) फॅमिली और (10) आडर्स का प्रतिनिधित्व करती है। असम राज्य में सबसे अधिक (217) अरूणाचल प्रदेश (167) मेघालय (165) त्रिपुरा (134) मणिपुर (121) नागालैंड (68) मिजोरम (48) तथा सिक्किम में (29) प्रजातियों की मछलिया पायी जाती है। हमारे देश में 85% एक्वेरियम मछलियां का निर्यात अधिकांशत उत्तरी पूर्वी राज्यों के प्राकतिक सोत्रों से पकडी गयी रंगीन मछलियों द्वारा होता है और कुछ मात्रा में दक्षिणी राज्यों में से संग्रहित की जाती है। प्राकृतिक सोत्रों से पकडी गयी रंगीन मछलियों का

लगातार दोहन स्थायी नहीं है और यह एक चिंता का विषय है। इस क्षेत्र की स्थानिक प्रजातियों के संरक्षण तथा जैव विविधता को बनाए रखने के लिए शीर्ष प्राथमिकता दिया जाना चाहिए। इससे यहॉ के छोटे मछुआरों के हितों की रक्षा करने के प्रयास करने की जरूरत है। हाल के समय में विश्व में रंगीन मछलियों का

व्यापार बहुत तेजी से बढ रहा है। आज इसमें कई मत्स्य किसान और उद्यमी इस व्यापार में शामिल हो चुके है। आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों का प्रयोग कर के तथा हवाई परिवहन सुविधा में सुधार करके भारत सहित कई देशों में इस रंगीन मछलियों के व्यापार को एक आकर्षक जैव व्यापार उघोग के रूप में बदला जा सकता है।

संरक्षण के आशय

हांलाकि उत्तर पूर्वी राज्यों से रंगीन सजावटी मछलियों का अधिकतम निर्यात होता है, परंतु अभी भी इस क्षेत्र में विकास की बहुत अधिक संभावनाए है। अभी भी इन राज्यों से अधिकांश मछलियों को इनके प्राकृतिक जल निकायों से दोहन किया जाता है। कुछ विशेष प्रजातियां की मछलियों के अंधाधुंध दोहन से इन प्रजातियों के विलुप्त होने की गंभीर समभावनाए उत्पन्न हो गयी है। यह आवश्यक हो गया है कि इन जलीय समुदायों और परिस्थितिकी प्रणालियों की अखंडता का उपयुक्त तकनीकी के द्वारा संरक्षण तथा उचित प्रबंधन के प्रयास किए जाने चाहिए। विशेष रूप से, इन जल निकायों से अधिक मछली पकडने के हानिकारक प्रभाव को कम करने के लिए विशेष प्रयास किए जाने चाहिए। यहॉ के जलीय वातावरण की वहन क्षमता का विशेष अध्ययन करने की आवश्यकता है। जिससे स्थानीय प्रजातियों की मछलियों पर होने वाले प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकें। इस संदर्भ में यहां के जल निकायों की पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण को बनाए रखने के साथ साथ मछुआरों की स्थायी आय बनाए रखने के लिए एक दीर्घकालिक समाधान खोजने आवश्यकता है।

इस क्षेत्र में व्यापाक पैमाने पर रंगीन मछलियों के पालन व प्रजनन से कई फायदे है जैसे विलुप्त होती हुई प्रजातियों के प्राकृतिक वातावरण से दोहन में कमी आएगी और दुर्लभ तथा जिन प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा बना हुआ है उनके संरक्षण में सहायता मिलेगी। इस तरह प्रजातियों के संरक्षण के साथ साथ स्थानीय पर्यावरण के पारिस्थितिकी में संतुलन बना रहेगा।

यदि मछलियों के पालन व प्रजनन की तकनीकों पर ध्यान केन्द्रित कर के इनका व्यापक पैमाने पर उत्पादन करना होगा। इससे प्राकृतिक वातावरण से संग्रहीत की जाने वाली मछलियों के कम लागत वाले उद्यम प्रजनन तथा बिक्री केन्द्रो के खोले जाने से इन पिछडे क्षेत्रों में रोजगार के नए आयामक के अवसर भी प्रदान हो सकते है तथा निर्यात से विदेश मुद्रा अर्जित की जा सकती है। भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र में रंगान मछलियों के प्रजनन एवं पालन पर तथा इनके व्यापक पैमाने पर व्यापार की दिशा में नियोजित ढंग से कार्य नहीं किया गया है। इसलिए सरकारी संगठनों और कुछ गैर सरकारी संगठन इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकतें है। इस प्रयास में स्थानीय जागरूक किसानों की भागीदारी और विभिन्न संस्थाओं का एक साथ योगदान बहुत आवश्यक है। यदि सब मिलकर इस प्रयोजन में भाग लेंगे तो पूर्वोत्तर राज्य में नीली क्रांति की ओर ले जाना काफी आसान हो सकेगा।

भारत के पूर्वोत्तर राज्यों में पायी जाने वाली कुछ महत्वपूर्ण रंगीन मछलिया जो बहुताया से पायी जाती है उनमें से प्रमुख प्रजातियॉ इस प्रकार है जैसे क्लाइम्बिंग पर्च (Anabas testudineus), रेड ब्लू पञचेक्स (Aplocheiludpanchax), रानीलोच (Botiadario), एशियाटिक स्नेकहेड (Channa gachua), चेकर्ड स्नेकहेड (Chenna punctatus), इस्ट्रिपटड स्नेकहेड (Channastriatus), इंडियन ग्लासफिश (Chanda nama), चेकर्ड स्नेकहेड (Chenna Puncatus),

एक्वेरियम में रंगीन मछलियाँ

जाइण्ट गौरामी (Colisa Çciatus), थिकलिप्ड गोरामी (colisa labiosus), हनी गोरामी (Colisaota), फोकोलर डेनियों (Danio regina), इंडियन फ्लाइंग बार्ब (Esomus स्लीपर गोबी dandricus), (Glosogobiusgiuris), पैनथर लोच (Lapidocephalusguntia), पैजामा स्ट्रीप्डलोच (Mystusvittatus), इंडियन ग्लासफिश (Pseudambsais ranga), फायर फिनबार्ब (Puntus ticto), सिल्वर निडिलफिश (Xenodoncancila) इत्यादि।

कुछ महत्वपूर्ण रंगीन मछलिया जो इन राज्यों में पायी जाती है तथा इनकी घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इनकी बहुत मॉग है परंतु इनकी उपलब्धता कम होती जा रही है जैसे लियोपर्ड लोच (Acanthocobitis botia) शावेल माउथ कैट फिश (Aorichthys aor), डार्फ केमलियान फिश (Badisbadis badis), रेडकेमलियान फिश (Badisbadis burmanicus), गोलीथ हिल हिलट्राउट (Barilius Bola), स्ट्रीप्ड हिल हिलट्राउट (Barilius sacra), पिकाक स्नेकहेड; (Channa marulius), जाईटडेनियों; (Danioaequipinnatus), मोस्टेच्ड डेनिओ; (Danio Dangila), क्लाउन केटफिश; (Gagata Cenia), स्ट्राइप्ड स्पाइनी ग्रीनईल (Msatocembelus armatus), गिनी कैटफिश (Mystus tengra), लीफ फिश (Nandus nandus), इण्डियन टाइगर शार्क (Pangsaius pangsaius), बैडेड टोरेंट (Psilorhycch balitora), टेरी बार्ब (Puntius terio), इंडियन रोजीबार्ब (Puntiusconchonius), यलोटेल ब्लेक टिप रसबोरा (Rsabora rsabora), ऑरेंज लोच (Schistura sikmaiensis) आदि प्रमुख है।

इसी प्रकार यहॉ पर बहुत सी दुर्लभ प्रजातियों की मछलियॉ पायी जाती है जिनकी घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार में इनकी बहुत अधिक मांग है परंतु इनकी उपलब्धता ही कम होती जा रही है और विलुप्त प्रजातियां की श्रेणी में आ चुकी है जिनका संरक्षण बहुत ही आवश्यक हो गया है। बेलिटोरा लोच (Balitora brucel), ब्लिथ लोच (Botia bermorel) रेटिकुलटेड बैंडेड लोच (Botiarostorata), रिंग लोच (Schistura denisonidayl), विक्टी लोच (Schistura scaturigina), डेविल कैटफिंश (Chaca chaca), गोल्डन हेडस्ट्रेडर कैटफिंश (Chandramara Chandramara), व्हाइट कैटफिंश (Ritarita), थ्रेंडटेल कैटफिंश (Contaconta), बैंडेड टोरेंट कैटफिंश (Glyptothorax cavia), वोइलेट स्नेकहेड (Channa barka), गोरेट्टी स्नेकहेड (Channa stewartil), नोबेल गोरामी (Ctenops nobilis), सिल्वर डेनियो (Danio devario), स्टोन फिंश (Gara gotyla gotyla), बटरफ्लाइ कैटफिंश (Harahara), रिबेरोज कैटफिंश (Laguvia ribeiroi), गोल्डन बार्ब (Puntiusgelius) आदि प्रमुख हैं।

यघपि हमारे देश से पूर्वोत्तर राज्यों द्वारा अधिकांश रंगीन मछलियों का निर्यात व्यापार होता है परंतु इस क्षेत्र में इन मछलियों के पालन एवं प्रजनन तथा आर्नामेंटल फिंशरीज के विकास के लिए कोई भी ठोस कदम नहीं उठाए गए है। आज विश्व में भारतीय रंगीन मछलियों की मांग बढती जा रही है और इसकी आपूर्ति पूर्णतया प्राकतिक संपदा की स्थिरता को बनाए रखना एक चिंता का विषय है।

एक अक्षय स्त्रोत्र होने के बावजूद प्राकतिक जल निकायों से इन रंगीन मछलियों की अंधाधुध दोहन से इनके स्टॉक में कमी हो सकती है तथा कुछ प्रजातियों के विलुप्त होने की संभावनाएं बढ जाती है जो पहले से ही विलुप्त होने के कगार पर है। इन मछलियों की जैव विविधता के पतन से रंगीन मछलियों के निर्यात तथा घरेलू व्यापार पर बहुत अधिक विपरीत प्रभाव पडने की संभावनाएं है। इसलिए रंगीन मछलियों के व्यापार से जुडे हुए सभी हितधारकों, संग्रहकर्ताओं, निर्यातकों, आयतकों, व्यापारियों, और उपभोक्ताओं का सामूहिक उत्तरदायित्व बन जाता है कि इस उघोग को बनाए रखने के लिए इसे पर्यावरण की दृष्टि से सदैव दीर्घकालीन और इसे टिकाऊ बनाए रखने का प्रयत्न करे। इन अमूल्य प्राकृतिक धरोहर की जैव विविधता को बनाए रखने के लिए वैज्ञानिक चिंतित है और इसके समुचित प्रंबधन की दिशा में कार्य करना शुरू कर दिया है। कई विशेषज्ञों के लिए इन सुंदर रंगीन मछलियों की बहुत अधिक मॉग बाजार में ऊचे दाम एक चिंता का विषय बने हुए है क्योंकि इन प्रजातियां के बहुत अधिक दोहन से केवल हमारे देश में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में रंगीन मछलियों की फिशरी संकट में है।

कार्प बीज के लिए नर्सरी तालाब-प्रबंधन

तरंग कुमार शाह, रितेश तंडेल, प्रज्ञा दास, राजा आदिल, परवेज अहमद गनी एवं शुभम वासने
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

परिचय

कार्प का बीज बहुत ही नाजुक होता है और उनका विकास और अस्तित्व काफी हद तक उसके आस–पास के पर्यावरण पर निर्भर करता है। कार्प की जैविक विशेषताओं जैसे खाद्य वरीयता और भोजन की आदत उनके प्रारंभिक जीवन चरण के दौरान लगभग समान होता है। इस प्रकार किसी भी विशेष अवस्था में लगभग समान प्रबंधन की आवश्यकता होती है। कार्प पालन प्रणाली में इनके बीजों का असतित्व और विकास मुख्य रूप से जलीय खरपतवार, जलीय कीड़े, जलीय मिकान मछलियां, पानी और मिट्टी की गुणवत्ता, प्राकृतिक भोजन की उपलब्धता, संख्या घनत्व, पूरक भोजन, पालन अवधि आदि की उपस्थिति या अनुपस्थिति पर निर्भर करता है। इस प्रकार, कार्प बीज पालन की सफलता के लिए इन पहलूओं का उचित प्रबंधन मार्गदर्शक, सिद्धांत है।

नर्सरी तालाब में भारतीय प्रमुख कार्प के 3–4 दिन पुराना स्पॉन फ्राइ अवस्था में लाने के लिए 15–20 दिन तक रखा जाता है। जबकि मध्ययम कार्प के लिए 20–25 दिन तक रखा जाता है। सामान्य रूप से कार्प नर्सरी के लिए औसत पानी की गहराई 1.0–1.5 मीटर के साथ 0.02–0.1 हैक्टेयर आकार के छोटे मौसमी मिट्टी के तालाब को पंसद किया जाता है क्योंकि इन तालाबों का आसानी से प्रबंधन किया जा सकता है।

नर्सरी तालाब प्रबंधन

सामान्य नर्सरी तालाब का प्रबंधन तीन तरह से किया जा सकता है जो इस प्रकार हैं

1. बीज संचयन से पूर्व प्रबंधन
2. बीज संचयन के समय प्रबंधन
3. बीज संचयन के बाद प्रबंधन

1. बीज संचयन से पूर्व प्रबंधन

बीज संचयन से पूर्व प्रबंधन का उदेश्य निर्बल उत्तरजीविता, असंतोषजनक विकास इत्यादि के कारणों को दूर करने के लिए तालाबों की उचित तैयारी करना है तथा प्राकृतिक भोजन की गुणवत्ता तथा मात्रा की उपलब्धता को सुनिश्चत करना है। बीज संचयन के प्रबंधन इस प्रकार हैं:

1.1 जलीय खरपतवारी का उन्मूलन और नियंत्रण

जलीय खरपतवार अबाधित पौधा है जो पानी के मध्य में तथा किनारे पर बढ़ते है। जलीय खरपतवार के पानी में पाये जाने से कई समस्या पैदा होती है जैसे पानी से बड़ी मात्रा में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। यहां तक कि यह खरपतवार पानी से मछली को निकालने में भी प्रभावित करते हैं। दिन और रात के विघटित ऑक्सीजन मूल्यों के बीच ऑक्सीजन की कमी और व्यापक उतार–चढाव के कारण मछलियों को तनाव के अधीन करता है। मृत जलीय खरपतवारी का विघटन ऑक्सीजन की समस्या पैदा करता है। डूबे हुए खरपतवार मछली के चलन में गतिरोध पैदा करते है। तैरने वाला खरपतवार जैसे वाटर हाइरिंथ, पिस्तियां आदि पूरी तरह से पानी की सतह को पूरी तरह से काटते हुए कवर करते है, जिसके परिणामस्वरूप तालाब की प्राथमिक उत्पादकता में महत्वपूर्ण कमी आती है। मछली तालाबों में समस्याएं पैदा करने वाली आम जलीय खरपतवारों की व्यापक रूप से चार प्रमुख समूहों में बांटा गया है। तैरते खरपतवार, उभरती खरपतवार, डुबे हुए खरपतवार और किनारे के खरपतवार।

चार प्रमुख श्रेणियों में खरपतवारों को नियंत्रित करने के उपायों को वर्गीकृत किया गया हैः 1. निवारक 2. मैनुअल और यांत्रिक 3. रासायनिक 4. जैविक

1. **निवारक नियंत्रणः** निवारक उपायों को पहले से ही अच्छी तरह से लिया जाना चाहिए। उपायों में जैसे तालाब के किनारे पर काट–छांट, पानी को निकालना और गर्मी के दौरान सीमान्त खरपतवारां को उखाड़ फेकने या जलाने और क्लोटिंग खरपतवार के प्रवेश को रोकने के लिए बाधांए शामिल है।
2. **मैनुअल और यांत्रिक**

नियंत्रण: मैनुअल तरीके से जलीय खरपतवारां को हटाना एक पुरानी प्रथा है और आज भी ग्रामीण इलाकों में अच्छी हैं। तैरती हुए खरपतवारी को हाथ से हटाकर, रस्सी के द्वारा मजबूत बॉयर रस्सी जाल द्वारा निकाला जाता है।

3. **रासायनिक नियंत्रण:** कभी–कभी जलीय खरपतवार के नियंत्रण के लिए रसायनों का उपयोग भी किया जा सकता है। थाइका और सारपरस जैसे मार्जिनल और उभरते खरपतवारों को 2 सप्ताह के भीतर उपयुक्त खरपतवार नाशक को छिड़ककर नियंत्रित किया जाता है। 20 पी.पी.एम. पर निर्जलीय अमोनिया का उपयोग न केवल डूबे हुए खरपतवार को नियंत्रित करने में भी प्रभावी है, बल्कि हिंसक और खरपतवार मछली के उन्मूलन में भी मदद करता है।

4. **जैविक नियंत्रण:** जैविक एक और महत्वपूर्ण नियंत्रण विधि जिसमें खरपतवार खाने वाली मछलियों का प्रयोग किया जाता है। सामान्यतया ग्रास कार्प कॉमन कार्प, गौरामि, तिलापिया, पर्ल स्पाट आदि है।

2. मिट्टी में सुधार

मछली की उत्पादकता तालाब की मिट्टी के भौतिक, रसायनिक और जैविक गुणों पर निर्भर करता है। मिट्टी के भौतिक गुण जैसे बनावट और जल प्रतिधारण एवं रसायनिक गुण जैसेः पीएच, जैविक कार्बन, उपलब्ध नाइट्रोजन और उपलब्ध फास्फोरस महत्वपूर्ण पैरामीटर है। प्रभावी तालाब प्रबंधन के लिए इन सभी गुणों की पर्याप्त उपस्थिति की आवश्यकता होती है। पीएच सुधार की जरूरत है जो आमतौर चूने के अविदन के माध्यम से किया जाता है। हांलाकि, एसिड सल्फेट मिट्टी का सुधार चूने के अविदन से पर्याप्त नही होता।

3. अवांछित मछली का उन्मूलन

अवांछित मछली स्पॉन, काई और कार्प की अंगुलिकाओं का शिकार करती है और मछली भोजन स्थल तथा ऑक्सीजन के लिए कार्प के साथ प्रतिस्पर्धा करती है। दो प्रमुख श्रेणियों से अवांछित मछली के नियंत्रित के उपायों को वर्गीकृत किया गया है। 1. यांत्रिक 2. रसायनिक

I. **यांत्रिक नियंत्रण:** इस विधि के अन्तर्गत अवांछित मछली का उन्मूलन करने के लिए जाल चलाकर किया जा सकता है। यह विधि बहुत आसान है तथा सस्ती भी है।

II. **रसायनिक नियंत्रण** : इसके अन्तर्गत बहुत सारे रसायनों का उपयोग कर अवांछित मछलियां का उन्मूलन किया जा सकता है। जैसे महुआ की खली का उपयोग करके अवांछित मछलियों का उन्मूलन किया जा सकता है। दूसरा डेंरिस रूट पाउडर का 15–20 कि.ग्रा/है. का उपयोग कर अवाछित मछली का उन्मूलन किया जा सकता है।

2. तालाब उर्वरक

कार्प अपनी प्रथम अवस्था में जन्तु प्लवक पर निर्भर रहती है। तालाब में जन्तु प्लवक पूरी तरह से पादप प्लवक पर निर्भर करते है। तालाब के पानी में कार्बन, नाइट्रोजन और फास्फोरस देने के लिए जैविक और अजैविक खाद की जरूरत पड़ती है। तालाब के तल में उत्पादकता को बनाए रखने के लिए नाइट्रोजन और फास्फोरस का अनुपात 2:1 ये 4:1 तथा कार्बन और फास्फोरस का अनुपात 10:1 से 20:1 रखा जाता है।

गोबर की खाद का उपयोग भी उत्पादकता बढाने में किया जाता है। गोबर की खाद की 10 टन/है. की मछली को तालाब में डालने से 15 दिन पहले दिया जाता है। इसे हम ही दो भागों में भी देख सकते है। 2/3 भाग मछली को तालाब में डालने के सप्ताह बाद डालते है।

3. जलीय कीट का उन्मूलन

जलीय कीट और उनके लार्वा/वयस्क जो कि मछली के फ्राइ का शिकार करते है और साथ ही भोजन के लिए उनके साथ प्रतिस्पर्था भी करते है। आम कीट जैसे बीटल, बग और ड्रैगन फ्लाई है। मूल विधि तालाब की सतह पर पतली तेल की किस्म लागू करना है जो जलीय कीट के श्वसन ट्यूबों को हानि पहुचाता है।

बीज संचय के समय प्रबंधन

मत्स्य बीज को हैचरी से नर्सरी तालाब में स्थानांतरण किया जाता है तथा इन बीज को जलवायु के अनुकूल बनाया जाता है। इन बीजों को सुबह व शाम के समय ही तालाब में डाला जाता है। स्पॉन की स्टॉकिंग घनत्व तालाब उत्पादकता

और प्रबंधन उपायों के प्रकार के आधार पर निर्धारित की जाती है। कच्चे तालाब में स्टाकिंग घनत्व 3–5 मिलियन/है. रखा जा सकता है। अगर हम स्टाकिंग घनत्व 10 मिलियन/है. से अधिक करते है तो यह अच्छा प्रबंधन उपायों के अर्न्तगत आता है। पक्के तालाब में स्टाकिंग घनत्व 20 मिलियन/है. तक रख सकते है। कच्चे तालाब के अन्दर 30–40% उत्तरजीविता रहती है जबकि पक्के तालाब में यही 50–60% रहती है।

बीज संचय के बाद प्रबंधन

1. नर्सरी पारिस्थितिकी तंत्र में मछली खाद्य जीवों का प्राकृतिक उत्पादन यहां तक कि नियमित प्रंबधन और प्रबंधन के साथ भण्डारित स्पान की कुल खाद्य पुनः मूल्यांकन का पूरा नही करता है। पिछले कुछ वर्षों में कार्प स्पान के पोषक तत्वों की आवश्यकता इस प्रकार है: 35–40% प्रोटीन, 4–6% वसा, 22–26% विटामिन बी परिसर का 0.1%, विटामीन बी2 600 मिली.ग्रा./किग्रा. और 200 आई यू/किग्रा. विटामिन ए की आवश्यकता होती है। मूंगफली तेल का केक और चावल की चरी का 1:1 में बीज को देना बहुत लाभदायक होता है।
2. फ्राई को तालाब से निकालने के लिए उपयुक्त समय सुबह व शाम को अच्छा माना जाता है। पैकेजिंग से पहले कार्प की कंडीशनिंग परिवहन के दौरान तनाव और मृत्यु दर को कम करने के लिए एक आवश्यक कदम है। बीज को पालीथीन बैग में पैक किया जाता है। जो प्रभावी मात्रा के एक तिहाई तक पानी से भरा जाता है जबकि शेष दो तिहाई आक्सीजन होता है। इस तरह के पैकेज के साथ बीज 20–24 घंटे से भी लंबी दूरी तक की यात्रा तक पहुंचा जा सकता है।

नर्सरी तालाब

नर्सरी तालाब से उत्पादित मत्स्य

उत्तराखण्ड क्षेत्र में त्रि-स्तरीय मत्स्य पालन : एक अनुभव

रविन्द्र सिंह पतियाल एवं *ममता जोशी
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल
*सूरजमल महाविद्यालय, किच्छा, (उधमसिंह नगर)

हमारे हिमालयी क्षेत्र में घटती कृषि व पशुपालन से खाद्य और पौष्टिक खाद्य उपलब्ध करना वर्तमान की एक महत्वपूर्ण चुनौती बनती जा रही है। कृषि, पशुपालन बागवानी के साथ – साथ मत्स्य पालन भी इसमें एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। मछली पालन की दिनों–दिन बढ़ती लोकप्रियता, बढ़ता उत्पादन, नई–नई मत्स्य प्रजातियों की बाजार में उपलब्धता, सकल उत्पादन क्षेत्र में तीव्र वृद्धि, जल कृषि का विविधीकरण एवं व्यवसायीकरण आदि इस ओर इंगित करते हैं कि आने वाले वर्षो में यह मत्स्य कृषि अधिक सशक्त व्यवसाय के रूप में स्थापित होगा और गांव में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के साथ – साथ गांवों की आर्थिक उन्नति का मार्ग भी प्रशस्त करेगा।

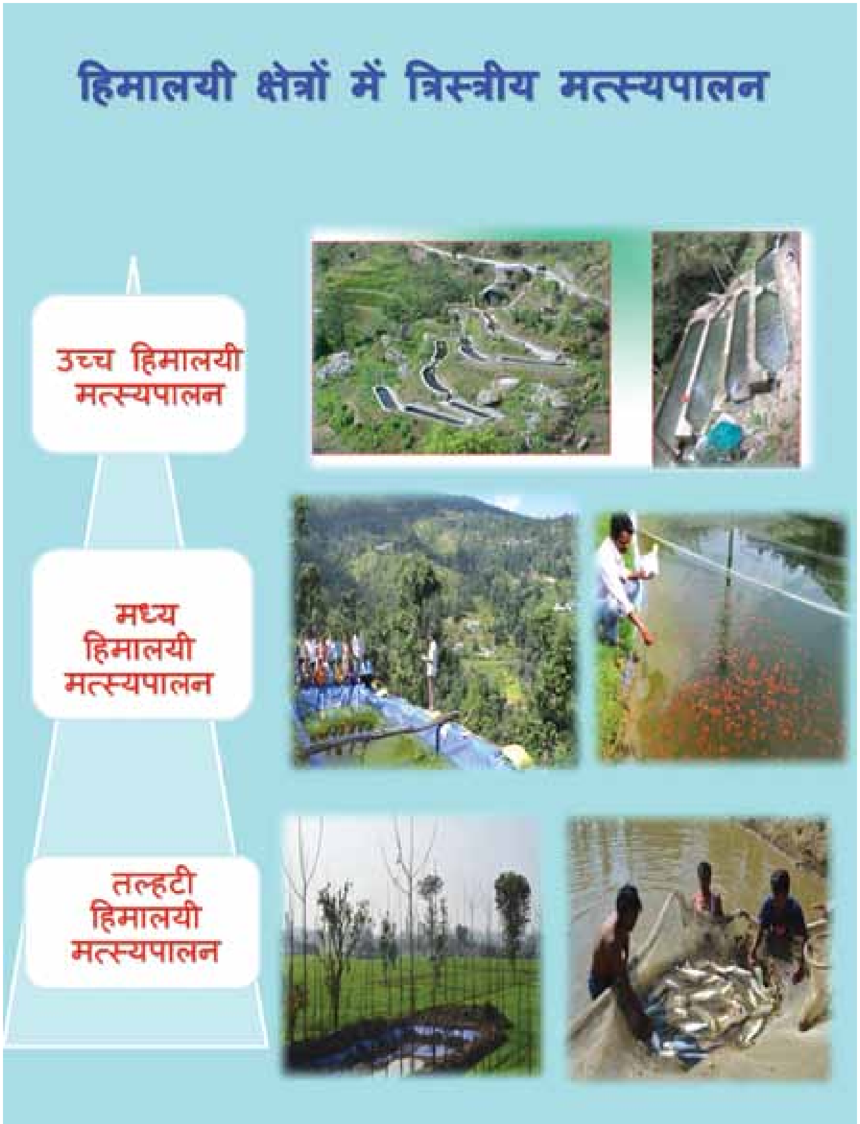

इसी तरह विश्व खाद्य संस्था ''फूड एन्ड एग्रीकल्चर आरगानाइजेशन'' ने भी अपने अनुमानों में दर्शाया है कि आने वाले दशक में भारतीय मीठे व शीतजल पानी से मत्स्य पालन पूरे विश्व में सबसे तीव्र वृद्धि प्राप्त करेगा।

हिमालयी क्षेत्र में उपलब्ध विविध तरह के अर्न्तस्थलीय जल संसाधनो के विवेकपूर्ण दोहन की अपार सम्भावनायें हैं। नदियां, तालाब जलाशय झील अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ इन जलीय स्रोतों का उपयोग मत्स्य पालन के लिये करने से प्रोटीन युक्त आहार सुगमता से गांवों, कस्वों, सभी जगह सुलभ हो सकता है। पहाड़ी के अनेक जगहों पर विशेषकर गर्मी के मौसम में भू–जल का स्तर नीचे चला जाता है जिससे पानी की समस्या पैदा हो जाती है। ऐसे क्षेत्रां में इस संकट को कम करने के लियें बरसात के मौसम में पुराने जलाशयों पोखरां आदि के बन्धे व मेंड़ ऊंचा कर अधिक से अधिक पानी संचय कर इनमें वर्ष भर पानी रह सकता है। इससे भूजल का स्तर भी ठीक रहता है और इनका उपयोग आवश्यकतानुसार पर्यावरण अनूकुल मत्स्य पालन

के लियें भी किया जा सकता है। अनेक शोध कार्यो के परिणाम स्वरूप जलीय स्रोतों की स्थिति, मत्स्य पालक की आर्थिक परिस्थिति, जगह विशेष में आवश्यक उपलब्ध संसाधन जैसे उर्वरक, खादें, मत्स्य आहार, मत्स्य बीज, बाजार में मांग आदि के आधार पर लाभकारी सरल मत्स्य पालन तकनीकियां विकसित की गयी हैं। इसके साथ–साथ मत्स्य पर्यटन इकोटूरिज्म का होम स्टे के साथ संचालन एक नये आयाम प्रस्तुत कर रहा है। इनका उपयोग कर मत्स्य पालक/उद्यमी अपनी आय में बढ़ोत्तरी कर सकते हैं।

इस तरह गांवों के तालाबों में पानी को संचित कर बहुआयामि लाभ के साथ मत्स्य पालन की निम्न उपयोगिता प्राप्त कर सकता है:

1. सस्ती सुपाच्य जीव प्रोटीन भोजन की उपलब्धता
2. कृषि, पशुपालन से प्राप्त कार्बनिक अवशेषों का उपयोग
3. बिना उपयोग की भूमि का मत्स्यपालन द्वारा सदुपयोग
4. खाली पड़े तालाबों, पोखरों गड्डो का मत्स्य पालन में उपयोग
5. मत्स्य पालन द्वारा घरेलू उपवर्ज्य पदार्थो का उपचार
6. भूमिगत जल स्तर बनायें रखने में मदद
7. रोजगारपरक गांवों, पंचायतों के लिये अतिरिक्त आय का साधन।
8. पर्यटन के विकास की सम्भावना।
9. नदियों नालों झीलों एवं रेजर्वायर में मत्स्य संचय से आय के संसाधन।

क्र.	खाद्य पदार्थ	प्रोटीन (प्रतिशत)
1.	मछली के मांस	15.2–25.0
2.	मूर्गी	20.8
3.	अण्डा	13.3
4.	दुध	3.8
5.	चावल	6.4
6.	आटा	12.1

उत्तराखण्ड में भोगोलिक संरचना तथा वातावरण के अनुसार तीन प्रकार से मछली पालन किया जा सकता है। इन क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के मत्स्य प्रजातियों के पालन हेतु भिन्न प्रकार के तालाबों का निर्माण किया जा सकता है। ट्राउट पालन के लिए सीमेंट रेस्वे, तथा कार्प पालन के लिए विभिन्न प्रकार के पॉलिथीन का प्रयोग किया जा सकता है इसके साथ बीज तैयार करने हेतु छोटे–छोटे ओवा हाउस तैयार किये जा सकते हैं।

उच्च हिमालयी क्षेत्र में मत्स्य पालन

मुख्य रूप से ब्योस, दरमा और चोंदास के ऊपरी भाग इस कैटेगरी में आते हैं चूंकि ऐसे क्षेत्र में जलवायु तथा पानी का तापक्रम कम है अतः इस क्षेत्र में बिदेशी ट्राउट रेन्बो ट्राउट और ब्राउन ट्राउट पाली जा सकती है और कॉमन कार्प भी पाली जा सकती है। तालाबों में पालन के साथ–साथ मछली उपयुक्त नदियों झीलों में भी इस ट्राउट मछली का संचय किया जा सकता है अत्यधिक उच्च क्षेत्रों में जहां बर्फ ज्यादा पड़ती है वहां ब्राउन ट्राउट का संचय कर सकते हैं ब्राउन ट्राउट एंगलिंग की दृष्टी में विदेशी पर्यटको के लिए एक आकर्शक मछली है विदेशी और देशी एंगलर इसका आखेट करने के लिए वर्ष पर्याप्त हिमाचल जम्मू कश्मीर के सुदूर सीमांत क्षेत्रों में पर्यटन करते है। ट्राउट मछली पोस्टिक होने के साथ कम कांटे वाली तथा औषधीय गुणों से परी पूर्ण होती है और दिल्ली बाजार में इसका मूल्य 1500 रू./किलो तथा स्थानीय जगह में मूल्य 500 रू. तक है।

ट्राउट पालन क्यों ?

- ट्राउट आसान सुपाच्य प्रोटीन है जो आपको ऊर्जा प्रदान करता है तथा मशल्स का निर्माण करता है।
- ट्राउट आवश्यकीय मिनरल्स प्रदान करता है।
- ट्राउट कैल्शियम तथा विटामिन डी प्रदान करता है जिससे हड्डी तथा दांतो को मजबूती मिलती हैं।
- ट्राउट आयरन प्रदान करता है जो ब्लड कोशिकाओं को मजबूत करता है।
- ट्राउट सेलेनियम प्रदान करता है जो दिल को स्वस्थ रखता है।
- ट्राउट विटामिन ए प्रदान करता है जो त्वचा को स्वस्थ तथा प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है।
- ट्राउट ओमेगा 3 फैटी एसिड प्रदान करता है जो दिल को स्वस्थ रखता है।
- ट्राउट ओमेगा 2 सैचुरेटेड फैट प्रदान करता है।

उच्च हिमालय क्षेत्र मुन्स्यारी में ट्राउट मत्स्य पालन का प्रर्दशन

ट्राउट पालन के लिए आधारभूत आवश्यकता

- ठण्डा व साफ एवं कम तापक्रम (18 डिग्री तक) वाला बहता हुआ पर्याप्त पानी।
- आयताकार पक्का जल–प्रवाही तालाब (रेस–वे) कम से कम 30 वर्ग मी0 होना चाहिए।
- 5–10 ग्राम आकार की स्वस्थ अंगुलिकाएं।
- अधिक प्रोटीन युक्त पाचक गुटिका, मत्स्य आहार, नियमित आहार एवं देखरेख।

मध्य हिमालयी क्षेत्र में मत्स्य पालन

इस भाग में मुख्य रूप से, हिमालय के निचले मध्य भाग आते हैं जहां कार्प मछली के साथ–साथ कुछ रंगीन मछलियां भी पाली जा सकती हैं। कार्प मछलियों में ग्रास कार्प सिल्वर कार्प कॉमन कार्प तथा रंगीन मछलियों में कोई कार्प तथा गोल्ड फिश पाली जा सकती है, इसके साथ–साथ कुछ उपयुक्त स्थानों में ट्राउट भी पाली जा सकती है।

चोंदास के कुछ क्षेत्रों में पहली बार मत्स्य पालन की शुरूवात की गयी थी जहां ग्रास कार्प एक वर्ष में लगभग 700 ग्राम तक वृद्धि पायी गयी। यह मछली प्रतिदिन अपने बजन के बराबर जलीय घास खा सकती है, और जलीय घास के नियन्त्रण में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

सिल्वर कार्प

शरीर के ऊपर सिल्वरी चांदी जैसे छोटे–छोटे शल्क (स्केल) होते है। आरम्भ में यह मुख्यतः जन्तु प्लवकों का भक्षण करती है। लेकिन उसके बाद वनस्पति प्लवकों को खाती है। यह सतह भोजी मछली है। तालाबों में यह तेज बढ़ने वाली प्रजाति है। चोंदास में एक साल में यह 600 ग्रा. वजन तक प्राप्त हुई है।

कौमन कार्प

यह लगभग पूरे विश्व में पायी जाती है। अधिक सहनशील एवं आसानी से तालाबों में पाली जाती है तथा स्वतः ही दो बार प्रजनन कर अण्डे देती है इस कारण यह मछली काफी प्रचलित है। यह सर्व भक्षी मछली है एवं उपलब्ध जीवाणु तथा सड़े गले वनस्पतियों एवं मलवों का भी भक्षण करती है। चोंदास में एक साल में यह 0.5 किग्रा. वजन तक बढ़त पायी गयी। ट्राउट पहली बार मुंश्यारी में पालन शुरू की गयी जहां एक वर्ष में 300 ग्राम से लेकर 500 ग्राम तक बढ़त पायी गयी।

तलहटी हिमालयी क्षेत्र में मत्स्य पालन

इस भाग में मुख्य रूप से हिमालय के निचले घाटी वाले भाग आते हैं जहां विदेशी कार्प, स्वदेशी कार्प मछली कुछ रंगीन मछलियों के साथ–साथ अन्य महाशीर आदि भी पाली जा सकती है। इन क्षेत्रों में कार्प मछलियों की बढ़त मध्य हिमालय की अपेक्षा ज्यादा पायी गयी ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प, कॉमन कार्प के साथ रोहू, कतला की बढ़त क्रमशः 1 किलो से लेकर 700 ग्रा. तक पायी गयी।

इस प्रकार विभिन्न स्थानों में वातावरण के अनुसार मछली का चुनाव कर मत्स्य पालन करने से अपनी आजिविका को सुनिश्चित किया जा सकता है। मत्स्य पालन के साथ–साथ एकीकृत रूप से अन्य सब्जी, मुर्गी, बकरी आदि का पालन करने से लाभ हो और अधिक बढाया जा सकता है।

पूंजीगत लागत (जल क्षेत्र 30 घन मी0)	रुपये
1. रेश वे का निर्माण	2,00,000/–
2. जल वाहिका	50,000/–
कुल पूंजीगत लागत	2,50,000/–
चालू खर्च	
1. अगुंलिकाओं पर व्यय (संख्या 2,000)	20,000/–
2. मत्स्य आहार (1 टन) पर व्यय (रुपया 100 प्रति किलोग्राम)	1,00,000/–
3. अवमूल्यन पूंजीगत लागत का 10 प्रतिशत	25,000/–
4 मजदूरी व्यय, 40 मानव– दिवस	12,000/–
5. प्रक्षेत्र उपकरण एवं मिश्रित खर्च	15,000/–
कुल चालू खर्च	1,72,000/–
कुल खर्च (पूंजीगत + चालू खर्च)	4,22,000/–
1. कुल खर्च पर 12% ब्याज प्रति वर्ष	50,600/–
कुल वार्षिक व्यय (चालू खर्च+ब्याज)	2,22,600/–
मत्स्य विक्रय 700 किलोग्राम	
(दर रुपया 500 प्रति किलोग्राम)	3,50,000/–

मध्य हिमालय क्षेत्र ग्राम पांगु एवं भीमताल में विभिन्न प्रकार के मत्स्य पालन का प्रर्दशन

तराइ क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के मत्स्य पालन का प्रर्दशन

पोषण

मछली का पौषणिक महत्व

देबाजीत शर्मा, पार्था दास, प्रकाश शर्मा, मोहम्मद शहबाज अख्तर एवं सीजी एलैकजेंडर
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

एशिया में घनी आबादी वाले नदी घाटी क्षेत्रों के लिए आजीविका और खाद्य सुरक्षा के लिए मछली महत्वपूर्ण है। भारत की लगभग 56% आबादी मछली खाती है। मछली मानव आहार का एक महत्वपूर्ण घटक है और भारत की आधे से अधिक आबादी ज्यादा मछली खाती है। कुछ राज्यों में, जैसे असम और अन्य उत्तर–पूर्वी राज्यों, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश, गोवा और केरल राज्य में 90% से अधिक मछली की खपत होती है। हमारे देश के गरीब वर्गों की प्रोटीन आवश्यकताओं की पूर्ति करने में मछली सबसे सस्ती एवं बेहतर स्रोत है, जो कि देश में भरपूर मात्रा में उपलब्ध है। भारतीय जल स्त्रोतों में मौजूद 1300 समुद्री और 720 अंतर्देशीय मत्स्य प्रजातियों में से अधिकांश खाद्य हैं। मछलियों में लगभग 70 से 80 प्रतिशत पानी, 13 से 22 प्रतिशत प्रोटीन, 1 से 3.5 प्रतिशत खनिज पदार्थ एवं 0.5 से 20 प्रतिशत चर्बी पायी जाती है। कैल्शियम, पोटैशियम, फास्फोरस, लोहा, सल्फर, मैग्नीशियम, तांबा, जस्ता, मैग्नीज, आयोडीन आदि खनिज पदार्थ मछलियों में उपलब्ध होते हैं जिनके फलस्वरूप मछली का आहार काफी पौष्टिक माना गया है। इनके अतिरिक्त राइबोफ्लोविन, नियासिन, पेन्टोथेनिक एसिड, बायोटीन, थाइमिन, विटामिन बी 12, बी 6 आदि भी पाये जाते हैं जोकि स्वास्थ्य के लिए काफी लाभकारी होते हैं। विश्व के सभी देशों में मछली के विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनाकर उपयोग में लाये जाते हैं। मछली के मांस की उपयोगिता सर्वत्र देखी जा सकती है। मीठे पानी की मछली में वसा बहुत कम पायी जाती है व इसमें शीघ्र पचने वाला प्रोटीन होता है। आवश्यक अमीनो एसिड, खनिज, ट्रेस तत्व और कम वसा वाले पदार्थों में अपनी प्रचुरता के कारण मछली को स्वस्थ्य–भोजन के रूप में व्यापक रूप से पहचान मिली है। मछली कैल्शियम, फास्फोरस और अन्य सूक्ष्म खनिजों का एक समृद्ध स्रोत है। यह कई अन्य पोषक तत्वों का भी प्रसिद्ध स्रोत है और इसलिए, स्वस्थ्य भोजन के रूप में मछली को स्वीकार किया जा रहा है।

प्रोटीन (Protein) एक सूक्ष्म पोषक तत्व है जो कि मानव शरीर की सही वृद्धि, विकास और जीर्णोद्धार के लिए काफी आवश्यक है। अतिरिक्त प्रोटीन शरीर के द्वारा ऊर्जा में बदल दिया जाता है। प्रोटीन की कमी से मांसपेशियां कमजोर हो जाती हैं तथा मानव शरीर ठीक से काम नहीं कर पाता। हमारे शरीर को कार्बोहाइड्रेट, फैट के अलावा प्रोटीन की बहुत आवश्यकता होती है। प्रोटीन हमारे शरीर के विकास लिए बहुत आवश्यक है। शरीर के हर हिस्से जैसे बाल, रक्त, मांसपेशियों, त्वचा और नाखूनों में प्रोटीन होता है। पानी के बाद यह दूसरा महत्वपूर्ण पोषक तत्व है जो हमारे शरीर में पाया जाता है। प्रोटीन छोटे यौगिकों जिन्हें अमीनों एसिड्स कहते है से बना होता है। जब प्रोटीन हमारे शरीर के अन्दर जाकर पच कर टूटते है तब अमीनो एसिड्स बचते है। हमारी प्रकृति में सौ अमीनों एसिड्स मौजूद है लेकिन हमारा शरीर उनमे से केवल 22 अमीनो एसिड्स का ही प्रयोग कर सकता है। मानव का शरीर इनमे से 9 आवश्यक अमीनो एसिड्स को छोड़ कर सभी अमिनो एसिड्स खुद बना सकता है। 9 आवश्यक अमीनो एसिड्स को भोजन द्वारा प्राप्त किया जाता है। वर्तमान में, उपभोक्ता अपने आहार और खाने वाले भोजन के बारे में बहुत चिंतित है।

मछली गुणवत्ता वाले प्रोटीन और एमिनो एसिड का एक महत्वपूर्ण आहार स्रोत है और मानव पोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। प्रोटीन, ओमेगा–3, फैटी एसिड, विटामिन कम्पलैक्स, लाइसीस, कैल्शियम, थ्रियोनियन जैसे बहु गुण मछली में मौजूद हैं। मछली निम्न वसा युक्त विशिष्ट पौष्टिक स्वास्थ्यवर्धक सेचुरेटेड फूड है। मछली प्रजातियां टुना, हेलिबट, सर्डीनीज, ट्राउट, सलमन, सार्डाइन, हिलिबट, मेकेरल शरीर को स्वस्थ और रोगमुक्त बनाये रखने में खास सक्षम है। आयरन, जिंक, आयोडीन, पोटैशियम, कैल्शियम और सेलेनियम आदि कुछ ऐसे खनिज हैं, जो शरीर को मछली खाने से प्राप्त हो सकते हैं। मछली में काफी मात्रा विटामिन सी भी होता है जिससे स्वास्थ्य से

संबन्धित बीमारियां तथा कफ–सर्दी आदि दूर होती हैं । मछली एक स्वास्थ्यवर्धक भोजन है। यह निम्न संतृप्त, उच्च प्रोटिन और ओमेगा –3 फैटी एसिड का एक बहुत अच्छा स्रोत भी है। इसको भोजन के रुप में शामिल करने से शरीर को विटामिन, खनिज और कई प्रकार के पोषक तत्व मिलते है जिनकी हमारे शरीर को आवश्यकता होती है। मछली को प्रोटीन का सबसे सस्ता स्त्रोत माना जाता है। 100 ग्राम मछली में आमतौर पर 22 ग्राम प्रोटीन होता है।

मछली में खनिज और विटामिन

पर्याप्त मात्रा में पाये जाने वाले खनिजों को 'मैक्रो तत्व' कहा जाता है और जो सूक्ष्म मात्रा में पाए जाते हैं उन्हें 'ट्रेस तत्व' या 'माइक्रोएलेट' कहा जाता है। मछलियों के विभिन्न समूह में कैल्शियम, फास्फोरस, सोडियम, पोटेशियम, सल्फर, क्लोरीन, मैग्नीशियम और आयरन पर्याप्त मात्रा में पाए जाते है। तांबा, आयोडीन, मैंगनीज, कोबाल्ट, जस्ता, फ्लोरिन, सेलेनियम बहुत अल्प मात्रा में पाए जाते हैं तथा कैडमियम, बोरान, आर्सेनिक, एल्यूमीनियम, सीसा, निकल 'ट्रेस मात्रा' में पाए जाते हैं जो शरीर को मछली खाने से प्राप्त हो सकते हैं।

मछली कम वसा वाली, उच्च प्रोटीन का स्त्रोत है जिसमें विभिन्न प्रकार के द्रव्य और घुलनशील वसा एवं विटामिन शामिल हैं। विभिन्न प्रकार की मछलियों में विटामिन के प्रकार और मात्रा भी भिन्न–भिन्न होती हैं। मछली विटामिन बी 12, विटामिन बी 1 (थियामीन), विटामिन बी 3 (नियासिन), विटामिन बी 6, विटामिन बी 5 (पैंटोफेनट), विटामिन डी, विटामिन ई आदि का स्रोत है। मछली में पाए जाने वाले विटामिन मानव शरीर के कई कार्यों में सहायता करते हैं, जिसमें स्वस्थ प्रतिरक्षा प्रणाली को बनाए रखना और नए कोशिकाओं और प्रोटीन का निर्माण होता है। मछली में काफी सारा विटामिन सी होता है जिससे स्वास्थ्य से संबन्धित बीमारियां तथा कफ–सर्दी आदि दूर होती हैं। मछली एक स्वास्थ्यवर्धक भोजन है। यह लो सेचुरेटेड फैट, हाई प्रोटीन, और ओमेगा –3 फैटी एसिड का एक बहुत अच्छा स्रोत भी है। इसको भोजन के रुप में शामिल करने से शरीर को विटामिन, खनिज और कई प्रकार के पोषक तत्व मिलते है जिनकी हमारे शरीर को आवश्यकता होती है।

ठंडे पानी की मछलियों में पोषणिक गुणवत्ता

भारत में ग्रामीण और शहरी आबादी की ठंडे पानी की मछलियाँ अर्थात् रेन्बो ट्राउट, हिम ट्राउट, गोल्डन माहशीर, चॉकलेट माहशीर, लाबेओ डाइरो, लेबियो पंगुसिया, लेबिओ डायोचिलस आदि महत्वपूर्ण भोजन हैं। पहाड़ी इलाकों में रहने वाली अधिकांश आबादी मछली खाने वाली है। यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि मछली अमीनो एसिड, फैटी एसिड, विटामिन और खनिजों में इसकी समृद्धि के कारण एक स्वास्थ्यवर्धक भोजन है। ट्राउट और माहशीर जैसे ठंडे पानी की मछलियों में मीठे पानी की मछलियों की तुलना में उच्च पीयूएफए (PUFA) शामिल होता है। ठंडे पानी की मछलियों की पोषण सम्बन्धी स्थिति विभिन्न प्रजातियों में विभिन्न होती है।

पोषण की कमी को दूर करता है मछली का सेवन

हो सकता है कि आपके रोजाना लिए जाने वाले आहार में किसी तरह से पर्याप्त पोषक तत्वों की कमी रह जाए, ऐसा हम में से कई लोगों के साथ होता है कि, हम ये समझ नहीं पाते कि हमारे आहार में किन चीजों की कमी की वजह से कोई खास समस्या पैदा हो रही है। नियमित रूप से मछली का सेवन करने से इस तरह की छोटी छोटी समस्याएँ पूरी की जा सकती है। मछली में मौजूद अनेक तरह के पोषक तत्व मनुष्य के रोज के खाने में हो रही पोषण की कमी को पूरा करने में शरीर की मदद करते हैं क्योंकि इनमें बहुत से खनिज, प्रोटीन और विटामिन्स उपस्थित होते है। इनके अलावा अनेक तरह की मछलियाँ अपने खास गुणों या पोषक तत्वों की वजह से खास मानी जाती है। मनुष्य अपनी पसंद के अनुसार इनमें से बेहतर मछली का चुनाव विभिन्न व्यंजनों के लिए कर सकते हैं। कुछ समुद्री मछलियों जैसे बांगड़ा, सालमन और पेड़वे आदि में ओमेगा 3 और ओमेगा 6 फैटी एसिड प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। सर्दी, जुकाम, खांसी, वायरल से बचाने में मछली खाना फायदेमंद है। मछली खाने से शरीर में ऊर्जा पैदा होती है। मछली के सेवन से रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

मछली का सेवन DHA की पूर्ति में सहायक होता है जैसा कि हम सभी जानते हैं कि, दिमागी विकास में DHA घटक का विशेष महत्व होता है। यही कारण है कि, बच्चों को दिये जाने वाले खास आहार में DHA का प्रयोग होता है। मछली में दिमागी विकास के लिए जरूरी ओमेगा 3 और ओमेगा 6 फैटी एसिड भी उपयुक्त मात्रा में होते हैं जो मस्तिष्क के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं यहाँ तक कि माँ की सेहत के विकास में भी यह बहुत आवश्यक तत्व है इसीलिए प्रसव के पूर्व और उसके बाद भी माँ के स्वास्थ्य को बेहतर करने के लिए भी नियमित रूप से मछली का सेवन करना चाहिए। इस बात पर विशेष ध्यान देना जरूरी है कि कुछ मछलियों में मर्करी या पारा उच्च मात्रा में मौजूद होता है जो ब्रेन को क्षति पहुंचा सकता है, ऐसी मछलियों के सेवन से बचना चाहिए जिनमें पारे की अधिक मात्रा होती है।

मछली अवसाद के उपचार में सहायक

अनुसंधान के अनुसार मछली के तेल में ओमेगा–3 पाया जाता है। इस कारण यह व्यक्ति में अवसाद, उदासी, चिंता, व्याकुलता, मानसिक थकान, तनाव, आदि मानसिक रोगों को दूर करता है और व्यक्ति में सक्रियता का संचार करता है। आज के समय में लोग अपने 10 साल पहले के जीवन की अपेक्षा कम खुश रहते हैं। आज की जिंदगी इतनी भाग दौड़ भरी हो गयी है कि अपने और अपने परिवार को समय कम दे पाते हैं, साथ ही काम का बढ़ता दबाव हमारे तनाव को और भी बढ़ा देता है। लगातार सेवन तनाव की स्थिति से अवसाद का कारण बन जाती है। अगर मनुष्य नियमित रूप से मछली का सेवन भोजन के रूप में करते हैं तो यह अवसाद और तनाव में बचाने में मदद करता है। मछली में उपस्थित ओमेगा 3 इस तनाव को कम करता है जिससे मनुष्य मन भी प्रसन्न रहता है और आसानी से तनाव पर काबू पाया जा सकता हैं। इसके अलावा यह मानसिक ध्यान लगाने में भी मदद करता है। अगर मानव किसी काम में ध्यान नहीं लगा पाते, तो मछली तेल के सेवन से ध्यान लगाने की क्षमता बढ जाएगी। यह तनाव और अवसाद शरीर और मन पर बहुत बुरा प्रभाव डालता है इसके लिए आपको नियमित रूप से समुद्री मछली को अपने आहार में शामिल करना चाहिए।

मछली का सेवन स्वप्रतिरक्षित रोगों के खतरे को कम करता है

हमारे शरीर में कई तरह की समस्याएँ भीतरी रूप से पैदा हो सकती हैं जिन पर कई बार हमारा ध्यान नहीं जाता। स्वप्रतिरक्षित रोग ऐसी ही एक समस्या है जिसमें हमारे शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली हमारे शरीर के उत्तकों या अन्य पदार्थों को गलती से हानिकारक समझकर उन्हें नष्ट करने का प्रयास करती है। इस तरह की अनियमितता का एक उदाहरण 'डायबिटीज' है। इसमें उन कोशिकाओं पर हमला हो जाता है जो पेनक्रियाज में इंसुलिन का निर्माण करते हैं। कुछ अध्ययनों में इस बात का दावा किया गया है कि, ओमेगा–3 फैटी एसिड या मछली का तेल इन स्वप्रतिरक्षित रोगों को रोकने का प्रयास करते हैं।

मछली का सेवन दृष्टि क्षमता को बढ़ाता है

मोतियाबिंद, आंखों में सूखापन, दूर दृष्टिदोष, निकटदृष्टि, मोतियाबिन्द, आंखों में जलन, दर्द जैसी समस्याओं को मछली खा कर दूर किया जा सकता है। हफ्ते में दो बार मछली खाने से ओमेगा–3 फैटी एसिड की मात्रा भली प्रकार से मिल जाती है जिससे आंखों की सूजन कम होती है और मासपेशियां मजबूत होती हैं।

भोजन में कुछ पोषण की कमी की वजह से आँखों में भी कई तरह की समस्या पैदा हो जाती है। भोजन में ओमेगा–3 की कमी की वजह से भी दृष्टि दोष या देखने में परेशानी आदि का सामना करना पड़ता है। ओमेगा–3 की पर्याप्त मात्रा प्राप्त करने के लिए नियमित रूप से मछली का सेवन करना फायदेमंद होता है। खासकर माता पिता को मछली से होने वाले लाभ की जानकारी के बारे में सतर्क रहना चाहिए और अपने बच्चों को रोज मछली खाने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

उच्च रक्त चाप एवं हृदयघात को कम करता हैं

मछली के तेल में पाया जाने वाला ओमेगा–3 फैटी एसिड स्वास्थ्य में सुधार करता है। यह अचानक कार्डियक अटैक और पहली बार पड़ने वाले दिल का दौरा की संभावना को भी कम करता है। मछली दिल व धमनियों को स्वस्थ्य और सुचारू बनाये रखने के साथ ही मजबूत

रखने में खास सहायक हैं। मछली सेवन से कोलस्ट्राल लेवल को कम करने में सहायता मिलती है। मछली खाने से एच.डी.एल. स्तर नियत्रंण सुचारू रहाता है। यह एचडीएल यानी की अच्छेह कोलस्ट्राल को बढाता है और धमनियों में खून के प्रवाह को बढ़ाता है। मछली तेल में उपलब्ध ओमेगा–3 हृदय को स्वस्थ्य और रोगों से दूर रखता है। हाई ब्लडप्रेशर तथा हार्ट पेशेंट के लिए मछली सेवन हृदय घात होने से बचाने में सक्षम है। मछली खाने से रक्त पतला करने और हार्ट ब्लोकेज रोकने में खास सहायता मिलती है। मछली के तेल का नियमित उपयोग में रक्त ट्राइग्लिसराइड के स्तर को कम करता है, खासकर उन लोगों में जिनके ट्रायग्लिसराइड्स सामान्य स्तर से ऊपर हैं। मछली में अच्छा कोलेस्ट्रॉल होता है जिससे हृदय रोग का खतरा कम होता है।

यदि किसी के परिवार में पहले से ही किसी को हृदय रोगों की समस्या रही है तो उसको भी सावधान हो जाना चाहिए क्योंकि ये वंशानुगत होते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होते रहते हैं। मछली के सेवन से कई तरह की दिल के रोगों से बचा जा सकता है। डाक्टरों के अनुसार मछली में ऐसे तत्व पाये जाते हैं जो दिल को लंबे समय तक रोगों से सुरक्षित रखने में मदद करते हैं। एक शोध के अनुसार जो लोग हफ्ते में दो बार मछली खाते हैं उनकी मौत हृदय रोग से तीन गुना कम होती है। मछली के लाभ लेने के लिए मनुष्य को नियमित रूप से अपने भोजन में मछली को शामिल करना चाहिए।

मछली का सेवन मस्तिष्क विकार (भूलने की बीमारी) (Alzheimer's) को दूर करने में सहायक

मछली दिमाग को तेज करने में सहायक होती है साथ ही यह याददाश्त से जुड़ी परेशानियों को भी कम करने में मदद करती है। यदि किसी के परिवार में किसी सदस्य को भूलने की बिमारी है तो उसे नियमित रूप से मछली का सेवन कराएं। मछली से याददाश्त कि समस्या को कम करने में लाभ मिलता है। प्राप्त प्रमाणां से पता चलता है कि मछली से ओमेगा –3 की नियमित खपत अल्जाइमर रोग, अवसाद जैसे कई मानसिक स्थितियों की गंभीरता को कम करने में फायदेमंद हो सकती है। मछली में पाए जाने वाले ओमेगा 3 से तनाव और चिंता जैसी बीमारियों को दूर करने में लाभ मिलता है। साथ ही इसको खाने से बच्चों और बड़ों दोनों का दिमाग तेज होता है। मछली का सेवन भूलने की बीमारी भी ठीक करता है।

आज की प्रतियोगी और भाग दौड़ की जिंदगी में मछली, दिमाग को स्वस्थ्य और स्फूर्तिवान बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मछली के इन्ही गुणों के कारण इसको 'ब्रेन फूड' यानी की "मष्तिस्क भोजन" का नाम दिया गया है। आधुनिक अनुसंधान में मछली और दिमाग के बीच एक वैज्ञानिक संबंध का पता चलता है।

जन्म के समय मनुष्य का दिमाग अल्पविकसित होता है। मष्तिस्क की लगभग 75% कोशिकाएं गर्भावस्था में विकसित होती हैं। शेष 25% का विकास जन्म के एक वर्ष के बाद शुरू होता है। डीएचए युक्त ओमेगा–3 की लगभग 60% वसा मनुष्य के दिमाग में पाया जाता है। अगर प्राकितिक स्त्रोत की बात करे तो, मछली ही एक ऐसा खाद्य है जिसके वसा में ओमेगा–3 भरपूर्ण मात्रा में पाया जाता है। अतः बच्चो के मानसिक और शारीरिक विकास में ये वसा संजीवनी का काम करती है। मस्तिष्क विकार, चिन्ता, तनाव से बचाने में मछली का सेवन फायदेमंद होता है। मछली एक विशेष प्रकार के विटामिन्स एवं खनिजों के मिश्रण का श्रोत है तथा मछली में विशेष प्रकार का डी.एच.ए. अम्ल मौजूद होता है जोकि मस्तिक को स्वस्थ रखने और खास कर बच्चों की स्मरण शक्ति को बढ़ाने में सहायक है।

मछली का सेवन बाल झड़ने, टूटने से रोके

आज के समय में अधिकांश लोग बालों से जुड़ी समस्या से जूझ रहे हैं। बालों का गिरना और टूटना आजकल एक आम समस्या बन चुकी हैं। मछली को रोज अपने आहार में शामिल कर के बालों की सेहत को बेहतर किया जा सकता है। अगर आपके पास मछली है तो आप इसका सेवन कर अपने बालों की सेहत को मजबूती प्रदान कर सकते हैं। इसके लिए आपको किसी भी तरह के महंगे शैंपू या कंडीशनर की जरूरत भी नहीं पड़ेगी। भोजन में फ्राई फिश या तली हुई मछली के सेवन से बचें, इसमें पोषक तत्वों की कमी होती है, इसके जगह आपको उबली या बेक्ड

फिश का इस्तेमाल करना चाहिए। मछली में ओमेगा 3 की भरपूर मात्रा पाई जाती है जो बालों और त्वचा के लिए बहुत अधिक फायदेमंद हैं। बालों की समस्या रोकने में मछली सेवन फायदेमंद है। मछली सेवन बालों को जड़ से मजबूत और काला बनाने में सहायक है। समय–समय पर मछली सेवन करने से बालों की हर तरह की समस्या से निजात पायी जा सकती है।

त्वचा रखे सदाबहार

मछली खाने से झुर्रियां देर से पडती हैं जिससे उम्र कम लगने लगती है। इसके साथ ही इससे सूरज की धूप से होने वाले नुकसान में भी राहत मिलती है। मछली का तेल बालों की अच्छी चमक बनाए रखने में मदद करता है। ओमेगा 3 में बालों की वृद्धि करने का भी गुण हैं क्योंकि यह रोम को पोषण प्रदान करता है। यह बाल के तेजी से विकास और बालों के झड़ने को रोकने में सहायता करता है। बालो में वृद्धि के लिए प्रोटीन की अच्छी आपूर्ति भी आवश्यक है। मछली के तेलों में ओमेगा –3 फैटी एसिड में कई स्वास्थ्य स्थितियों के लक्षणों पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है जिनमें प्रतिरक्षा और सूजन प्रणाली, आंत्र पथ और मस्तिष्क शामिल है।

त्वचा पर झुर्रियां तथा रूखापन, दाग, धब्बे पडना आदि, मछली के तेल के सेवन से दूर होता है जिससे व्यक्ति का सौन्दर्य और आकर्षण बढ़ता है। मछली का सेवन कोमल त्वचा को अल्ट्रावायलेट किरणों के दुष्प्रभावों से बचाये रखने में सहायक है। इसमें डीएचए और इपीए एसिड पाए जाते हैं, जो कि जरुरी फैटी एसिड होते हैं और यह सीधे ही त्वैचा के सौन्दर्य से जुड़े होते हैं। यह त्वचा के अनेक रोगों जैसे दाद, खाज, खुजली आदि के उपचार में भी उपयोगी सिद्ध होता है जिसके लिए इसकी मालिश भी की जा सकती है।

महिलाओं में 35 की उम्र के बाद महीन रेखाएँ और झुर्रियां आदि दिखाई देने लगती हैं। त्वचा में रूखापन, प्रदूषण और तनाव आदि की वजह से त्वचा की सेहत पर बुरा प्रभाव पड़ता है। रोजाना मछली के सेवन से आप अपनी त्वचा की सेहत को बेहतर बना सकते हैं। रोज मछली खाने से त्वचा से कई तरह की समस्याएँ दूर हो जाती हैं। इसमें मौजूद ओमेगा 3 ऑइल त्वचा पर असरकारक होता है यह त्वचा को उम्र के साथ बढने वाली परेशानियों से भी बचाता है। उम्र बढने की वजह से भी चेहरे पर जो महीन लाइन और झुर्रियां आदि दिखने लगती हैं, नियमित रूप से मछली खाने से यह समस्या जल्दी ही दूर हो जाती है। मछली सम्पूर्ण सेहत के लिए एक बहुत ही लाभकारी आहार है जिसका सेवन नियमित रूप से किया जाना चाहिए। मछली में मौजूद ओमेगा 3 तत्व त्वचा की सेहत पर प्रभाव डालता है और त्वचा को इन सभी समस्याओं से लंबे समय तक बचाए रखता है।

मोटापा/डायबिटीज/कैंसर रोकथाम/थायराइड के नियंत्रण में सहायक

वजन घटाने के लिए रोज फिश ऑयल के साथ–साथ रोजाना व्यायाम करेंगे और अपने आहार में बदलाव लाएंगे, तो आपका वजन जरुर कम होगा। दैनिक दिनचर्या में लंच, डिनर के वक्त एक मछली तेल का कैप्सूल का सेवन करना फायदेमंद होता है। मछली का तेल शरीर पर जमी फालतू चर्बी घटाने का अच्छा माध्यम है। मछली शरीर के अंदर वसा को जमने से रोकती है। वजन नियत्रंण करने में मछली खाना फायदेमंद हैं। मछली सेचुरेटेड फूड और फैट लेस सुपर फूड है। डायबिटीज मरीज के लिए मछली खाना मीट से ज्यादा फायदेमंद है। मछली शर्करा लेवल और कोलेस्ट्राल लेवल को नियत्रंण करने में खास सहायक है।

एंटीऑक्सीडेंट ऑक्सीकरण की प्रक्रिया को बंद करने वाला एक अणु है। ऑक्सीकरण कोशिकाओं में होने वाला रिएक्शन है जो अंततः कोशिकाओं को क्षति या अंत की तरफ ले जाता है। हमारा शरीर कोशिकाओं से बना है, किसी भी कोशिका की क्षति से पूरे शरीर के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। लेकिन एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर खाद्य पदार्थ ऑक्सीकरण की प्रक्रिया को समाप्त करने में मदद करते हैं जिससे कोशिकाओं को स्वस्थ रख जा सकता हैं। अमीनो एसिड में महत्वपूर्ण एंटीऑक्सिडेंट गुण हैं जो मछलियों की मांसपेशियों में पाया जाता हैं। मछली में सेलेनियम की उच्च मात्रा और केमिकल पाया जाता है, यह शरीर की कोशिकाओं को किसी भी रूप में क्षतिग्रस्त होने से बचाने में मदद करती है। मछली की तरह शरीर में एंटीऑक्सीडेंट की पर्याप्त राशि बनाये रखने के

लिए विभिन्न प्रकार की मछलियों का उपभोग भी कर सकते हैं। मछली में मौजूद ओमेगा–3 फैट, डीसीए (डोकोसै–हेक्सानियॉक एसिड) और ईपीए (इकोसै–पेन्टैनियॉक एसिड) महिलाओं के शरीर के लिए लाभदायक होते हैं। महिलाएं अपनी डाइट में मछली को शामिल करें तो ब्रेस्ट और सर्वाइकल कैंसर का खतरा काफी हद तक कम हो सकता है। कैंसर रोकथाम में मछली सेवन फायदेमंद है। टुना, हेलिबट, ट्राउट, सलमन, सार्डाइन, हिलिबट, मेकेरल प्रजाति मछलियां खाने से प्रोस्टेट कैंसर, ब्रेस्ट कैंसर, अंडाशय के कैंसर रोकथाम में सहायक है। समय समय पर मछली सेवन हर तरह के कैंसर से बचाने में खास सहायक है।

थायराइड मरीज के लिए जहां गला दर्द और सूजन घटाने में मछली सेवन लाभदायक है। शरीर में सूजन भले ही थायरायड की वजह से हो या फिर सिरोसिस की वजह से, मछली का तेल उसको कम करने में पूरा सहायक है। रोज दिन में 3 ग्राम मछली का तेल लेने से सूजन कम हो जाती है।

गर्भावस्था में सहायक

जीवविज्ञान में हो रहे शोध की माने तो, गर्भावस्था के दौरान मछली जच्चा और बच्चा दोनों के लिए रिच विटामिनस मिनरल पोषण पूर्ति का अच्छा माध्यम है। मछली खाने से गर्भ में पल रहे बच्चे के मस्तिष्क विकास और शरीर के विकास में आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति आसानी से हो जाती है। गर्भावस्था में स्त्री द्वारा मछली के तेल के सेवन से गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क और आँखों के विकास में सुधार होता है जो इसमें उपस्थित डी एच ए की उपस्थिति के कारण होता है। इससे गर्भस्थ शिशु के शारीरिक विकास में भी सहायता मिलती है। तुलनात्मक दृष्टि से देखे तो वो संतान जिनकी माताओं ने गर्भावस्था के दौरान भोजन में मछली का प्रयोग किया था, जन्म के समय दुसरे बच्चों से स्वस्थ होते हैं। मछली के प्रयोग से गर्भवती स्त्री भी आंतरिक तौर पर खुद को स्वस्थ महसूस करती है।

गर्भावस्था के दौरान, विकासशील बच्चे को मां से ओमेगा –3 फैटी एसिड प्राप्त होता है। जन्म के बाद, शिशु को स्तनपान या आवश्यक फैटी एसिड के साथ पूरक फार्मूलों से उन्हें प्राप्त करना चाहिए। प्रारंभिक मानव विकास में, मछली के तेल ओमेगा –3 फैटी एसिड फायदेमंद होते हैं। ओमेगा –3 का उपयोग खासकर डीएचए – गर्भावस्था में, पहले त्रैमासिक में, समय से पहले और कम वजन के बच्चों के जोखिम को कम करता है। मछली का सेवन करने से प्रतिरक्षा में वृद्धि होती है साथ ही यह ठंड, खाँसी और फ्लू आदि रोगों की घटनाओं का विरोध करने में भी सक्षम होता है। मछली के तेल में मौजूद ओमेगा 3 फैटी एसिड हमारे शरीर में मौजूद साइटोकिन्स और एइकोसनोड्स को प्रभावित करके प्रतिरक्षा प्रणाली को लाभ पहुंचाते हैं। इस प्रकार मनुष्यों की प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाने की क्षमता मछली के तेल में है।

मछली में पाए जाने वाली वसा कई खतरनाक बीमारियों से भी बचाती है, उदाहरण के तौर पर ओमेगा–3 (वसा) के प्रयोग से अल्जाइमर, अवसाद और डिमेंशिया जैसी बीमारियों से बचाव होता है। गर्भ के समय तो मां को भोजन में मछली का प्रयोग करना ही चाहिए, बच्चे के जन्म के बाद भी मछली का सेवन आवाश्यक है और यह सेवन बच्चे को दुग्धपान कराने तक करते रहना चाहिए। इससे बच्चा डिस्लेक्सिया और एडीएचडी जैसी बीमारियों से दूर रहता है। सरकारी आकड़ों की माने तो औसतन 100 में 5 बच्चे इन बीमारियों का शिकार होते हैं। पोषक तत्वों की कमी ही इसका कारण होती है। अविकसित मष्तिस्क होने के कारण ऐसे बच्चे सामान्य जीवन नहीं जी पाते और कई बार मानसिक विकलांगता का शिकार भी हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में खाने के रूप में मछली का उपयोग अनिवार्य हो जाता है।

ओमेगा–3 में मौजूद इपीए और डीएचए कारक तकनीकी रूप से दिमाग को विकसित करते हैं। व्यावहारिक दृष्टि से देखे तो, बच्चों की ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता,पढने की क्षमता, भावनात्मक अभिव्यक्ति की कार्यप्रणाली मनुष्य के दिमाग के जिस हिस्से में कार्य करती है ये वसा उस हिस्से को विकसित करती है। महत्वपूर्ण ये है की इस समयवधि में मछली का प्रयोग माँ के स्वस्थ्य का भी पूरक होता है। सप्ताह में एक मछली का प्रयोग माँ को आंतरिक तौर पर मजबूत रखता है। विश्व का वैज्ञानिक इतिहास हो या पौराणिक इतिहास, एक प्राकृतिक श्रोत के रूप में मछली का

प्रयोग आवश्यक और अतुलनीय रहा है।

जोड़ों के दर्द और घुटने का दर्द तथा शरीर सूजन दर्द निर्वारण में मछली का तेल

तीव्र जोड़ों एवं घुटनों के दर्द में मछली के तेल में लहसुन पका कर रगड़कर मालिश करने से गठिया, जोड़ों, घुटनों का दर्द ठीक करने में सहायक होता है। जोड़ों के दर्द में मछली का तेल निवारण में खास सहायक है। जिन लोगों को घुटने की समस्या है, यानी की गठिया आदि उसमें यह मछली का तेल बहुत फायदेमंद होता है। लेकिन मछली का तेल बिल्कुंल शुद्ध तथा सिंथटिक रहित होना चाहिये, जिससे दर्द निवारण में मदद हो जाए। हाथ–पैर की उगलियों में सूजन/दर्द होने पर मछली के तेल से मालिश करना फायदेमंद होता है। छोटे बच्चों के लिए फिस ऑयल से मसाज करना खास फायदेमंद है। बच्चों के कोमल शरीर, अंगों को मजबूत और रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में फिस ऑयल सहायक होता है।

ट्राउट मछली से अण्डदोहन *(ओंकोरिंकस माइकिस)*

सालमोनिडी वर्ग की रेनबो ट्राउट मूलतः उत्तर अटलांटिक एवं उत्तरी पैसिफिक की यह शीतजल प्रजाती भारत में 19वी सदी के प्रारम्भ में आखेट गतिविधियों के लिये लायी गयी। इसके शरीर के बीच में इन्द्रधनुषी रंग दिखाई देता है, इसी के चलते इसे रेनबो ट्राउट के नाम से पुकारा जाता है। उच्च आक्सीजन युक्त बहता हुआ साफ जल जिसका तापमान 0-21°C तक रहता है में यह प्रजाती पाली जा सकती है। यह मछली मांसाहारी प्रकृति की है, अतः दिये जाने वाले आहार में प्रोटीन की 40–45 प्रतिशत तक मात्रा दी जाती है। इसकी बढ़वार सामान्य रूप में पहले वर्ष में 200–300 ग्राम तक, द्वितीय वर्ष में 500–600 ग्राम तक तथा तृतीय वर्ष में 1000 ग्राम तक हो जाती है। नर दूसरे साल में परिपक्वता प्राप्त कर लेता है। जबकि मादा मछली तीन साल के बाद ही अण्डे देती है।

रेन्बो ट्राउट का पोषण एवं आहार

राजेश माची, सीजी अलैक्जैंडर, बीजू सैम कमलम, प्रकाश शर्मा एवं मौहम्मद शहबाज़ अख्तर
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

- रेन्बो ट्राउट (ओन्कोरिकस माइकिस) एक विदेशी साल्मोनिड मछली है तथा भारतीय हिमालयी क्षेत्र में शीतजल की प्रमुख पालन योग्य मत्स्य प्रजाति है।
- यह एक विशिष्ट प्रकार की मांसाहारी मछली है जो अपने प्राकृतिक वास स्थलों में छोटी–छोटी मछलियों एवं अकशेरूकियों को खाती है।
- इसके लिए संतुलित अमीनो अम्ल मिश्रण के साथ–साथ उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन की आवश्यकता होती है।
- इस मछली की खुराक में प्रोटीन तथा लिपिड की आवश्यकता क्रमशः 40–50% एवं 16–20% आंकी गयी है।
- उच्च गुणवत्ता वाले प्रोटीन स्त्रोत जैसे–फिश मील एवं सोयाबीन मील एवं लिपिड स्त्रोत जैसे फिश ऑयल मछली के लिए खुराक के आधारभूत आवश्यकता है।

सामान्य रूप से रेन्बो ट्राउट की वृद्धि के लिए आहार का निर्माण

अवयव	समावेश स्तर	10 किग्रा. आहार में
फिश मील (क्रूड प्रोटीन : 60%, क्रूड लिपिडः 7%)	54	5.4 कि. ग्रा.
सोयाबीन मील (क्रूड प्रोटीनः 44%)	15	1.5 कि.ग्रा.
गेहूँ का आटा (क्रूड प्रोटीनः 10%)	20–21	2.0–2.1 कि.ग्रा.
फिश आयल	5	0.5 कि.ग्रा.
सोयाबीन आयल	5	0.5 कि.ग्रा.
विटामिन खनिज मिश्रण	1.2	0.1–0.2 कि.ग्रा.

*यदि विटामिन खनिज मिश्रण के रूप में एग्रीमिन का प्रयोग किया जाता है तो बी–कॉम्प्लैक्स विटामिन्स का प्रयोग किया जाए

विभिन्न आकार हेतु भोजन के तत्व/गोली का आकार

मछली का भार (ग्रा.)	छोटी/गोली का आकार (मि.मी)
<0.3	<0.5
0.3-0.5	0.5—0.8
0.5-0.9	0.8
0.9-2.0	1.0
2.0-4.0	1.5
4.0-8.0	2.5
8.0-20	3.0
20-50	3.5
50-125	4.0
125-500	4.5
500-1000	6.0
1000-2000	9.0

आहार योजना

- ट्राउट पालन में आहार की लागत बहुत अधिक आती है, इसलिए लाभ को सुनिश्चित करने के लिए तथा पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने हेतु उचित भोजन योजनाए महत्वपूर्ण है।

विभिन्न स्तरों पर रेन्बो ट्राउट के लिए आहार

0.8 मि.मी.

1 मि.मी.

2.0 मि.मी.

4.0 मि.मी.

- ट्राउट का भोजन स्तर पानी के तापक्रम से प्रभावित होता है अर्थात आहार ग्रहण करने की क्षमता बढ़ती है साथ ही मछली की अधिक वृद्धि होती है।
- आहार अनुपात का निर्धारण करने के लिए निम्न खाद्य सारण ीियों का उपयोग गाइड के रूप में किया जा सकता है आहार व्यवस्था के लिए सारणी का उपयोग करके दैनिक भोजन दर निर्धारित की जा सकती है।
- जल के विभिन्न तापक्रम पर विभिन्न आकार वर्गों की रेन्बो ट्राउट का (शरीर का भार) प्रति दिन /ग्राम आहार में मान
- कोष्ठक में मछली का अनुमानित आकार इंच में इंगित करता है।

प्रत्येक रेसवे (तालाब) के लिए आहार व्यवस्था

15 x 2 x 1.5 मी. आकार वाले रेसवे (तालाब) जिसमें 2000 अंगुलिकाऐं जिनका आकार 2–3 इंच रहता हैं उसकी आहार व्यवस्था निम्न है :

- 2–3 इंच की रेन्बो ट्राउट जिसका भार लगभग 1.5–3 ग्रा. तथा कुल वजन 4.5 कि.ग्रा. होता हैं उस के लिए तालिका के अनुसार रेसवे में 3.3 डिग्री. से. ग्रे. तापक्रम पर 39 ग्रा./कि.ग्रा. की दर से भोजन की संस्तुति की गयी है। इस प्रकार रेसवे में 4.5 कि.ग्रा. भार वाली मछली के लिए 175.5 ग्रा. आहार/दिन देना सुनिश्चित कर सकते है।
- मछली की बढ़वार के साथ प्रत्येक 15–20 दिन के अंतराल पर पानी के तापमान के अनुसार आहार की मात्रा को पुनः सुनिश्चित करना आवश्यक है।

एक ही आकार की रेन्बो ट्राउट प्राप्त करने के लिए पानी की 70% से अधिक सतह पर अधिकतम आहार वितरित किया जाना चाहिए तथा यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि तालाब की सतह पर बैठने से पूर्व ही प्रत्येक आहार–गोली का सेवन हो जाए। पूर्व प्रारम्भिक स्तर पर आहार की आवृत्ति 3–4 बार प्रति दिन होनी चाहिए तथा बड़ी अवस्था में कम से कम दिन में 2 बार आहार आवृत्ति देना आवश्यक है।

इण्डियन हिल ट्राउट

बेरेलियस बेंडेलिसिज को आमतौर पर “इण्डियन हिल ट्राउट” के नाम से भी जाना जाता है। इसका विस्तार पूरे भारत, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, बंग्लादेश, श्रीलंका, मयान्मार तथा थाइलैण्ड तक है। यह पूर्वी हिमालय, गंगा क्षेत्र तथा अरूणाचल प्रदेश की अधिकाशं नदियों एवं धाराओं की प्रमुख व्यापारिक पर्वतीय नदियों की मुख्य मछली के रूप में मानी जाती है।

रोग

जलीय कृषि में क्रिस्पर कास की उपयोगिता

आनन्द कुमार एवं अमित पांडे
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

मछली कई प्रजातियों के साथ कशेरूकियों के सबसे बड़े समूह का प्रतिनिधित्व करती है जो जलीय कृषि उद्योग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। दुनियां में सम्पूर्ण समुद्री खाद्य पदार्थों का लगभग आधा भाग जलीय कृषि से आता है। जलीय पशुओं में आवश्यक पोषक तत्व जैसे आयोडीन, ओमेगा–3 लाँग चेन पाली अन सैचुरेटेड फैटी एसिड (एल.सी.पी.यू.एफ.एस) की मात्रा अन्य पशु खाद्य पदार्थो की अपेक्षा अधिक होती है। 2011 के आंकड़ों के अनुसार वैश्विक मत्स्य पालन उत्पादन का आधा भाग मानव के द्वारा उपभोग किया जाता है। वैश्विक मत्स्य पालन उत्पादन प्रतिवर्ष 6% की दर से बढ़ रहा है। वैश्विक स्तर पर 66633252 मैट्रिक टन का उत्पादन होता हैं, जिसमें चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान होता है। क्योंकि चीन अकेले 61.7% और भारत 6.3% के उत्पादन में अपनी भूमिका निभाते है (FAO 2012)।

मत्स्य पालन को बढ़ाने के कई उपाय हैं। पंसदीदा प्रजातियों के विकास को प्रोत्साहित करने या पानी में नई प्रजातियों को लाने के लिए स्टाकिंग भी किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में किशोर या छोटी व्यस्क मछली को उनके प्राकृतिक पानी से बाहर निकाला जाता है और मछली के तालाबों मे रखा जाता है जिसमें पोषक तत्व और मछली के भोजन् दिया जाता है।

बेहतर विकास और बीमारी प्रतिरोध को बढ़ावा देने के लिए मछली को आनुवांशिक रूप से बदलना आवश्यक है। अच्छी नस्ल के लिए सबसे अच्छी मछली को चुनकर या गुणसूत्रों में परिवर्तन करके इसको किया जा सकता है। वर्तमान में बहुत सारी तकनीकी उपलब्ध है जिनका उपयोग करके जीन स्तर पर परिवर्तन करके हम अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। इसी प्रकार जीनोम सम्पादन में क्रिस्पर/कास तकनीकी ने अनुसंधान के क्षेत्र में अहम भूमिका निभायी है।

बैक्टीरिया में अनुकूली प्रतिरक्षा में क्रिस्पर/कास (CRISPR/Cas) जीन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह बैक्टीरिया को बाहरी डी.एन.ए. को समाप्त करने में सक्षम बनाता है। प्रारम्भ में क्रिस्पर (CRISPR) 1980 में ई. कोलाई में खोजा गया था। इसका पूरा नाम क्लसटर्ड रेगुलरली इंटरस्पशर्ड पेलिन्ड्रोमिक सीक्वेंस है। इसका कार्य 2007 तक स्पष्ट नही था। बरेंगों और उनके साथियों ने बताया कि स्टीरियो थर्मोफिलस (बैक्टीरिया) बैक्टीरियोफाज (विषाणु) के लिए प्रतिरोध उत्पन्न करता है। लगातार खोज के दौरान क्रिस्पर की तीन जीनोम संपादन तकनीकी की विधियाँ खोजी जा चुकी हैं जिसमें द्वितीय विधि पर सबसे अधिक खोज हुयी है। जीनोम इंजीनियरिंग के क्षेत्र में क्रिस्पर/कास नवीनतम तकनीकी है। इससे पहले भी जीनोम इंजीनियरिंग के क्षेत्र में ZFN (जिंक फिंगर न्युक्लिज) एवं टालेन (ट्रांस्क्रिप्सन–एक्टिबेटर लाइक इफेक्टर न्युक्लिज) का भी प्रयोग किया जाता था। समकालीन जीनोम संम्पादन में न्यूक्लियेज का प्रयोग डी.एन.ए. सम्मिलन, लक्षित उत्परिवर्तन या गुणसूत्र पुर्नगठन के लिए किया जाता है। इस प्रकार जीनोंम संपादन तकनीकी का प्रयोग रोग प्रतिरोध पोषक तत्व समृद्ध फसलों और पशुधन, विभिन्न पशु मॉडल और मानव प्लूरिपोटेंट स्टेम सेल मॉडल में किया जाता है। जिसका उपयोग प्रीक्लिनिकल औषधि अध्ययनों के लिए भी किया जा सकता है। क्रिस्पर/कास तकनीकी का पहला उदाहरण 2012 में प्रकाशित हुआ। मात्स्यिकी अनुसंधान के लिए जेबरा मछली को आदर्श माना गया है। जेबरा मछली को कार्यात्मक जीनोमिक्स विश्लेषण, मानव रोग के जनक के अध्ययन और औषधियों की खोज और विकास के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण माना गया है।

जेबरा मछली के आदर्श होने का मुख्य कारण जैव विकास में मध्यवर्गीय होना है यह एक तरफ चूहों और दूसरी अकशेरूकी जैसे– ड्रोसोफिला और सी.एलीगन्स के बीच की कड़ी

जीनोम इंजीनिरिंग उपकरणों का तुलनात्मक अध्ययन

क्र. सं.		जेड.एफ.एन.	टालेन	क्रिसपर
1	संरचना	जिंक फिंगर डी.एन.ए. का संलयन डी.एन.ए. के साथ वाध्यकारी डोमेन–फोक–। एण्डोन्युक्लियेज के क्लिवेज डोमेन	डी.एन.ए. के साथ टेल रिपीट का संलयन–फोक–। एण्डोन्युक्लियेज के क्लिवेज डोमेन	कास–9 एण्डोन्युक्लियेज और जी. आर.एन. एस.
2	पहचान साइट का आकार	डी.एन.ए. 9–18 वेस	डी.एन.ए. 30–36 बेस	डी.एन.ए. 23वेस
3	डिजाइनिंग में आसानी	टालेन और क्रिसपर से कठिन	जेड.एफ.ए. से आसान	दोनों से आसान
4	प्रभावी	++	++	+++
5	लक्ष्य हीनता	टालेन के समान	जेड.एफ.एन.	दोनो से अधिक
6	कीमत	क्रिसपर से ज्यादा	क्रिसपर से ज्यादा	दोनो से कम

का कार्य करती है। जेबरा मछली में बाहरी निषेचन द्वारा पुनुरूत्पादन होता है और स्तनधारियों से अलग इसमें भ्रुण की सभी अवस्थाओं का अध्ययन करना शोधार्थियों के लिए आसान होता है। क्रिस्पर/कास प्लेटफार्म का प्रयोग जेबरा–मछली में साइट–स्पेसिफिक इंसरसन हटाने के दौरान उत्परिवर्तन आवृत्ति 24% से 59% तक 10 में से 8 जीन में पाई गयी। इसमें कुछ साइट ऐसी भी पाई गयी जो कि टालेन के द्वारा लक्षित नही की गयी थी। इसलिये क्रिस्पर/कास प्लेटफार्म जीनोम संपादन में जेबरा मछली के लिए अधिक उपयोगी है। इससे भी अधिक यह है कि क्रिस्पर/कास के द्वारा उत्पन्न किये गये उत्परिवर्तनों की 100% नयी पीढ़ी में आवृत्ति होती है।

क्रिस्पर/कास के एक आदर्श प्लेटफार्म होने के साथ–साथ इसके अन्य फायदे भी है।

यह अन्य जीनोम संपादन तकनीकी जैसे जेड.एफ.एन और टालेन से अधिक आसान है जिससे कि ये आसानी से रचा और कार्यान्वित किया जा सकता है। दूसरा फायदा यह जेड.एफ.एन और टालेन से अधिक दक्ष है। सामान्यतः क्रिस्पर/कास का कार्य जेड.एफ.एन. की तुलना में अधिक सुसंगत, प्रभावकारी और कम विषात्त है। यह टालेन की तुलना में मिथाइलेटेड जीनोमिक साइट को लक्षित करने में अधिक प्रभावी है। क्रिस्पर/कास, टालेन से बहुत ज्यादा श्रेष्ठ है क्योंकि बहुभागी जीनोम संपादन में यह उच्च दक्षता रखता है।

उपयोगिता

पिग्मेंटेशन, मिलेनोसाइट में मिलेनिन उत्पादन से सबंधित है। जल्द ही पिग्मेंटेशन से सबंधित जीन मछली में जेड.एफ.एन., टालेन और क्रिस्पर/कास के द्वारा कई बार लक्षित किया गया है।

गोल्डन जीन (S/c 24a5) पिग्मेंटेशन के लिए आवश्यक कशेरूकियों में अत्यधिक संरक्षित है। गोल्डन जीन को जेबरा मछली में जीनोंम इंजीनियरिंग उपकरणों जेड.एफ. एन., टालेन और क्रिस्पर/कास की सहायता से बाधित किया गया। विकास और वृद्धि से संबन्धित जीन का क्रियात्मक मूल्यांकन टीलियोस्ट में जेड.एफ.एन.टालेन और क्रिस्पर/कास–9 की सहायता से किया गया है। टालेन और क्रिसपर/कास–9 की खोज के बाद कई जीन विकास और वृद्धि से सम्बन्धित मछलियां में क्रियात्मक अध्ययन के लिए बाधित किये गये है। जैसे कि चार मेस्प जीन्स (mespaa, mespab, mespba and mespbb) एंटरोपोस्टेरियर स्पेशिफिकेशन से सम्बन्धित है और

Stat3 स्पाइन के विकास और प्रतिरक्षा कार्य में प्रयोग किया गया है।

मत्स्य कृषि में बीमारी की घटनाओं को रोककर उत्पादकता, लाभ प्रदता और दक्षता में वृद्धि तथा मछली का कल्याण किया जा सकता है। जेनेटिक दृष्टिकोण जैसे कि मार्कर असिसटेंड सलेक्सन, इंट्रास्पेसिफिक क्रास ब्रीडिंग, इंट्रास्पोसिफिक हाइब्रिडाइजेशन और ट्रांसजनेसिस का प्रयोग रोग–प्रतिरोध में करके रोग की घटनाओं को कम किया जा सकता है। जीनोम संपादन में जेड.एफ.एन., टालेन और क्रिस्पर/कास–9 तकनीकी लक्षित जीनोम के लिए मार्ग खोलता है। इन तकनीकी का प्रयोग जलीय कृषि में रोग–प्रतिरोध को बढाने के लिए जीन–नाक–इन, जीन–नाक–आउट और जीन–एक्सप्रेशन के नियंत्रण के द्वारा किया जा सकता है। रोग के कारण हानि को वैक्सीनेशन और जैव सुरक्षा उपयों के द्वारा कम किया जा सकता हैं जो कि लघु अवधि के लिए या फिर जब तक इन उपायों को अच्छी तरह से लागू किया जाये इसकी सुरक्षा करते है। लेकिन जेनेटिक सुधार के द्वारा रोग–प्रतिरोध भविष्य भविष्य की पीढ़ियों में वंशानुगत होता है।

दोष

क्रिस्पर/कास तकनीकी के प्रयोग से अनुसंधान के क्षेत्र में नयी क्रांति आयी है लेकिन इस तकनीकी का लक्ष्य–विहीन होना हमारे लिए सबसे चिन्ता का विषय है इसके प्रयोग से उत्परिवर्तन होने की संभावना बढ़ जाती है। अन्य दो तकनीकी जेड.एफ.एन. और टालेन से भी अधिक क्रिसपर/कास तकनीकी को लक्ष्य–विहीन माना गया है। उत्परिवर्त कैंसर को जन्म देते है। इस प्रकार इस तकनीकी का प्रयोग हमारे लिए हानिकारक भी हो सकता है। आज सबसे ज्यादा आवश्यक क्रिसपर/कास की लक्षित–दक्षता को बढ़ाना है जिस पर कई अनुसंधान संस्थानों में कार्य हो रहा है।

क्रियाविधि

क्रिस्पर (CRISPR)

क्रिस्पर सही स्थान की तलाश में जीनोम को स्कैन करता हैं और तब कास 9 प्रोटीन को आवविक कैंची के रूप में प्रयोग करके डी.एन.ए. को काटने का कार्य करता हैं।

कास 9 एण्डोन्युक्लिज (Csa 9 Endonuclsae)

गाइड आर.एन.ए. एक विशेष अनुक्रम में संम्पादित करने के लिए मार्गदर्शन करता है। जब CAS 9 टारगेट अनुक्रम को काटता है तो कोशिका मूल अनुक्रम के बदलाव के समय हुयी क्षति की मरम्मत करती है।

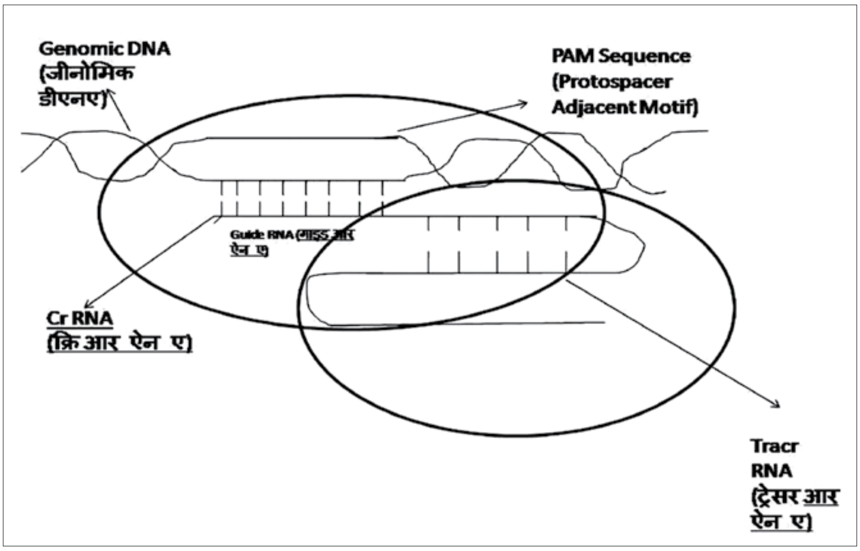

शीतजल मात्स्यिकी के परजीवी रोग

मृदुला बिष्ट एवं अमित पाण्डे
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

प्रस्तावना

शीतजल मात्स्यिकी उत्पादन के क्षेत्र में भारत की मुख्य भूमिका रही है। शीतजल मात्स्यिकी में मुख्यतः कम तापमान (प्रायः 20 डिग्री से.ग्रे. से कम) तापमान में जीवन निर्वाह करने वाली मछलियाँ सम्मिलित हैं। यह मछलियाँ प्रायः मध्यम गति से अपना विकास करती हैं। शीतजल मत्स्यों में अनेक परिवार सम्मिलित हैं। जैसे–सालमोनिड्स (रेन्बो ट्राउट, ब्राउन ट्राउट) साइप्रिनिड (स्नो ट्राउट, कॉमन कार्प, माहशीर, बैरिलियस) तथा कोबिटिडी (लोच) से सम्बंधित है। मनुष्यों और जानवरों के तरह ही मछलियां भी परजीवियों के संक्रमण से प्रभावित होती हैं। मछलियों में इन संक्रमणों से बचने की क्षमता उनकी रोग–प्रतिरोधक क्षमता कहलाती है। यह रोग–प्रतिरोधक क्षमता दो भागों में विभाजित होती है– विशिष्ट क्षमता एवं अविशिष्ट क्षमता।

विशिष्ट रोग प्रतिरोधक क्षमता, मछलियों की विशेष रोगजनक के प्रति विशेष प्रतिक्रिया को कहते हैं, जो कि अनुकूली प्रतिरक्षा प्रणाली के अन्तर्गत आती है। जबकि अविशिष्ट रोग प्रतिरोधक क्षमता, ऐसी प्रतिरक्षा प्रणाली है जो कि अर्जित न होकर जातियों में वंशानुगत होती है, यह सहज प्रतिरक्षा भी कहलाती है।

मुख्यतः रोगों की समस्या बसंत ऋतु के समय देखी जाती है जब मछलियां इम्युनोलोजिकली कॉम्परोमाइज्ड अवस्था में होती हैं तथा तनावग्रस्त स्थिति में होती हैं। बसंत ऋतु में जल के तापमान में वृद्वि होने के साथ–साथ रोगजनकों के लिए अनुकूल वातावरण स्थापित होने लगता है जो मछलियों में संक्रमण का कारण बनता है। रोगजनकों को विषाणु, जीवाणु, कवक एवं परजीवीयों में वर्गीकृत किया जाता है। इनसे होने वाले क्रमशः विषाणु जनित रोग, जीवाणु जनित रोग, कवक जनित रोग एवं परजीवी जनित रोग कहलाते हैं। इस लेख में हम मुख्यतः शीतजल मत्सयकों के परजीवी तथा उनसे जनित रोगों पर चर्चा करेंगे।

परजीवी

परजीवी अपने निर्वाहन के लिये दूसरे जीव पर निर्भर होते है। मछलियों के शरीर पर परजीवी प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं। सामान्य रूप से परीजीवी मत्स्यों को हानि से बचाने का प्रयास करते हैं क्योंकि परजीवी उन पर निर्भर करते हैं। परंतु सारे परजीवी ऐसा नही कर पाते हैं, क्योंकि उनका जीवन चक्र बहुत सारे चरणों से होकर गुजरता है, जिसमें से एक चरण परजीवी जनित रोगों का भी होता है। परजीवी दो प्रकार के होते हैं।

बाहय परजीवी– यह गलफड़ों, पंखों तथा शरीर की बाहरी सतह पर पायें जाते हैं। जैसे इचथायोफथिरियस, कॉस्टिया, आरगुलस, डेक्टाइलोगाइरस, ट्राइकोडिना आदि।

आंतरिक परजीवी– यह शरीरा के अन्दर– अंगो तथा ऊतकों में अपना जीवनयापन करते हैं। जैसे–हैक्सामिटा, स्पाइरोन्यूकलियस, आदि।

शीतजल की मछलियों में परजीवी जनित रोग

सफेद दाग की बीमारी

इचथायोफथिरियस मल्टीफिलिस एक रोमक प्रोटोजोअन परजीवी है जो मुख्यतः साफ पानी की मछलियों को संक्रमित करता है। शीतजल की मछलियों में इस परजीवी के कारण सफेद दाग की बीमारी होती है। जिसे प्रायः इचथायोफथिरियस अथवा इच डिजीज के नाम से जाना जाता है। यह छोटी मछलियों को अधिक प्रभावित करता है।

इस रोग से संक्रमित मछलियों के कुछ व्यवहारिक लक्षण, जैसे– तेज गति से तालाब के किनारों पर आना, छटपटाहट, बेचैनी होना, अपने शरीर को किसी ठोस सतह पर रगड़ना, श्वसन प्रक्रिया की गति का तेज होना, आदि हैं।

इचथायोफथिरियस एक बाह्य परजीवी होता है, जो कि शारीरिक सतह तथा गलफड़ों की सतह पर पाया जाता है तथा उन सतहों पर पाया जाता है तथा उन सतहों पर सफेद दाने जैसी ग्रन्थियाँ उत्पन्न

कर देता है। इस बीमारी को मछली की खुजली की बीमारी के नाम से भी जाना जाता हैं।

इस परजीवी के जीवन में चार चक्र होते हैं। उनमें से एक चक्र में यह मछली की बाहरी सतह पर छोटी–छोटी सफेद ग्रन्थियों का निर्माण कर उनकी रक्त कोशिकाओं को खाकर अपना जीवन निर्वाह करता है।

इसके कारण मछलियों में रक्त एवं हिमोग्लोबिन की कमी हो जाती है, जिस कारण उनको श्वसन प्रक्रिया में समस्या होती है और उनकी श्वसन की गति तेज हो जाती है। इस रोग से बचने के लिए मछलियों को (2–3 प्रतिशत नमक के घोल) या (फॉर्मलिन 1मिली/10गैलन पानी) का प्रयोग करना लाभदायक होता है। इसके अतिरिक्त (मैलकाइट ग्रीन 0.1–0.15 पी.पी.डब्लू 12–24 घंटों के लिए) भी प्रयोग किया जाता था परन्तु अब यह रसायन प्रतिबंधित है।

इचथायोबोडोसिस

यह रोग इचथायोबोडो परजीवी के कारण होता है। यह एक सामान्य तथा अविशिष्ट रोग है। यह शीतजल मछलियों में होता है। इचथायोबोडो को कॉस्टिया के नाम से भी जाना जाता है। इस रोग के प्रमुख कारण– मछलियों की एक ही स्थान पर अधिकता, पानी की गुणवत्ता में कमी, मछलियों की सही प्रकार से देखभाल न होना, बाह्य सतह की क्षति होना, इसके अतिरिक्त पोषक तत्वों की कमी, भोज्य पदार्थो की कमी, जलाशयों में हानिकारक तत्वों का पाया जाना भी इसके कारण होते हैं।

दो प्रकार की प्रजातियां इचथायोबोडोसिस के लिए उत्तरदायी हैं– इचथायोबोडो नेकाटोर तथा इचथायोबोडो पाएरफोरमिस। यह परजीवी छोटा तथा बीन के आकार का होता है। यह परजीवी मछली के शरीर की बाहरी सतह व गलफड़ों की सतह से चिपक कार, मछलियों को संक्रमित करता है। इस रोग से संक्रमित मछलियों के कुछ व्यवहारिक लक्षण इस प्रकार हैं– कम मात्रा में संक्रमण वाली शीतजल मत्स्यों में इनके प्रभाव मुख्यतः, तीव्र गति से जलाशयों के किनारों पर जाना, छटपटाहट एवं बेचैनी होना, शरीर की सतह को तल पर रगड़ना, जलन होना, आदि।

इसके अलावा बाहरी त्वचा में म्यूकस का अधिक मात्रा में एकत्रित होना, गलफड़ों में सूजन का होना, जो कि श्वसन प्रक्रिया को प्रभावित करता है। मछलियों के जल की ऊपरी सतह पर तैरने की असमर्थता भी इस रोग का लक्षण होता है। अत्यधिक स्तर पर मछलियां की मृत्यु दर (40–75 प्रतिशत), अधिक मात्रा में संक्रमण का लक्षण है। संक्रमित मछलियों के बचाव हेतु (नमक के घोल का प्रयोग 2–3 प्रतिशत) या (फार्मलिन .25–1 पी.पी.एम.), 1 घंटे के लिए,) एक्रिफ्लेविन (.2–.5 पी.पी.एम., 1–2 घंटे के लिए) लाभदायी होता है। इसके अलावा शुद्ध वातावरण तथा प्रचुर मात्रा में पोषक तत्वों युक्त भोजन लाभदायक होता है।

डेक्टाइलोगाइरस

यह रोग शीतजल मत्स्यों में गाइरोडेक्टाइलस सेलेरिस परजीवी के कारण होता है। इस परजीवी को ''सालमन फ्लूक'' के नाम से भी जाना जाता है। यह छोटे आकार का परजीवी फाइलम प्लेटीहैलमेंन्थिस के मोनोजिनिया वर्ग में आता है।

यह एक बाह्य परजीवी (एक्टोपैरासाइट) होता है जो कि ठंडे पानी की मछलियों की शारीरिक त्वचा पर पाया जाता है। यह रेन्बो ट्राउट को अधिक मात्रा में संक्रमित करता है। यह परजीवी 0.5 मिमी. लंबा होता है, जिसे नग्न आँखों से देख पाना असंभव होता है। इसकी निचली सतह पर एक सूक्ष्म ''हैप्टर'' पाया जाता है जो कि एक महत्वपूर्ण अंग होता है क्योंकि इस हैप्टर की सहायता से यह परजीवी, मछली से चिपक जाता है। यह एक पदार्थ उत्पन्न करता है जो कि प्रोटियोलिटिक एंजाइम से भरपूर होता है। यह पदार्थ सालमोनिड्स की त्वचा को विघटित करता है। इस रोग से प्रभावित, संक्रमित मछलियों के लक्षण इस प्रकार हैं– प्रभावित मछलियों की शारीरिक सतह पर हल्के नीले रंग का म्यूकस पाया जाता है, मछलियों का रंग काला पड़ने लगता है, गलफड़ों की सतह पर सफेद–पीले रंग की धारियां दिखने लगती हैं तथा गलफड़ों का रंग भी पीले–लाल रंग का हो जाता है। छोटी बड़ी सारी मछलियां इससे प्रभावित रहती हैं। यह परजीवी मछली के गलफड़ों के तंतुओ को खाकर नष्ट कर देता है, जिससे मछलियों में श्वसन प्रक्रिया नहीं हो पाती और उनकी मृत्यु हो जाती है। संक्रमित मछलियों के बचाव हेतु (1–2 मिली. लीटर ग्लेशियल एसेटिक एसिड प्रति लीटर की दर

से, 1–10 मिनट के लिए), (2.5 प्रतिशत नमक का घोल, 1 घंटे के लिए), (मेबेंडाजोल 1मिली. ग्राम प्रति लीटर की दर से, 1 दिन के लिए) प्रयोग करना लाभकारी सिद्ध होता है।

ट्राइकोडिनोसिस

यह रोग ट्राइकोडिना नामक परजीवी के कारण होता है। यह एक रोमक प्रोटोजोअन होता है। यह तश्तरी के आकार तथा इसका व्यास 50 माइक्रॉन होता है। यह मछलियों की शारीरिक त्वचा, गलफड़ों तथा मुख्यतः उनकी म्यूकस झिल्ली पर पाया जाता है। कार्बनिक पदार्थो की अधिकता, प्रदूषित जल से उत्पन्न होने वाला तनाव, अधिक संख्या में मछलियों का एक स्थान पर एकत्रित होना, आहार में कमी इस रोग के उत्पन्न होने के प्रमुख कारण हैं। इस रोग से संक्रमित मछलियों के प्रमुख लक्षण इस प्रकार हैं– गलफड़ों में सूजन होना, पंखों का गिरना, भार में कमी आना तथा अत्यधिक मात्रा में शरीर का रंग काला पड़ जाना। अधिक मात्रा में ट्राइकोडिना के संक्रमण से मछली की रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित होती है, जिस कारण अल्सर, पंखों का सड़ना तथा मृत्यु दर तीव्र हो जाती है। ट्राइकोडिना से बचाव के लिए (1–2 मिली. लीटर एसेटिक एसिड प्रति लीटर की दर से, 1 से 10 मिनट के लिए), (0.25 मिली. ग्राम प्रति लीटर की दस से मेंलाथियॉन) का प्रयोग करना मछलियां के लिए लाभदायक होता है।

चिलोडोनेलोसिस

यह रोग चिलोडोनेला परजीवी के कारण होता है। यह छोटी से बड़ी हर प्रकार की शीतजल मत्स्यों को प्रभावित करता है। यह मुख्यतः त्वचा, गलफड़ों तथा पंखों पर पाया जाता है। चिलोडोनेला प्रजाति अन्य परजीवियों से भिन्न होती है, क्योंकि इसमें संचालन, ग्लाइडिंग (सरकने की विधि) के द्वारा होता है। इसकी संरचना अण्डाकार तथा निचला तल समतल होता है।

ऊपरी सतह पर रोमक पाये जाते हैं। यह 50–70 माइक्रोमीटर लम्बा होता है, जिसे सूक्ष्मदर्शी की सहायता से देखा जा सकता है।

इस रोग से संक्रमित मछलियों के कुछ व्यवहारिक लक्षण इस प्रकार हैं– संक्रमण से युक्त मछलियां भोजन लेना बंद कर देती हैं। श्वसन प्रणाली में अवरोध देखने को मिलता है। त्वचा में पीलापन तथा सफेदपन दिखने लगता है। इसके अतिरिक्त गलफड़ों तथा त्वचा के बाहर से अत्यधिक मात्रा में म्यूकस के एकत्रित हो जाने से, गलफड़े तथा त्वचा सूजन युक्त लगती है। इसके अलावा बाहरी त्वचा क्षय होने लगती है।

इसके संक्रमण से बचाव के लिए (2–3प्रतिशत नमक के घोल क प्रयोग, रोजाना 30 मिनट के लिए) करना लाभकारी होता है। इसके अतिरिक्त (5 से 10 मिलीग्राम प्रति लीटर की दर से प्रैजिक्वैण्टेल का प्रयोग) भी लाभकारी सिद्ध होता है। फॉर्मलिन, 2 से 2.5 पी.पी.एम. 12 से 24 घण्टों के लिए) का प्रयोग भी लाभदायक होता है। इसके अलावा उचित प्रबंधन कार्यो से इनका संक्रमण कम किया जा सकता है।

विरलिंग रोग

यह रोग मिक्सोस्पोरियन परजीवी के कारण होता है। मिक्सोबोलस सेरेब्रेलिस, सालमोनिडस में इस रोग का कारण है। रेन्बो ट्राउट में इसका असर देखने को मिलता है। यह परजीवी मछलियों के अक्षीय कंकाल की उपास्थि का क्षय करता है।

यह परजीवी बीजाणुओं का निर्माण करते हैं, जो कि अण्डाकार से गोलाकार संरचना रखते हैं। इन बीजाणुओं का व्यास 7–9 माइक्रोमीटर तथा लंबाई 6–7 माइक्रोमीटर तक होती है। विरलिंग रोग के परजीवी के जीवन के दो चक्र होते हैं। एक चक्र मछली के अन्दर तथा दूसरा चक्र टयूबिफैक्स कृमि के अन्दर पूरा होता है।

इस परजीवी के जीवन में तीन चरण होते है– ट्राइएक्टिनोमिक्सोन चरण, स्पोरोप्लास्म चरण तथा मिक्सोस्पोरियन चरण। मिक्सोस्पोरस, टयूबिफैक्स कृमि के आंतरिक सतह से चिपक कर अनेक बीजाणुओं का निर्माण करते हैं जो कि ट्राइएक्टिनोमिक्सोन स्पोरस में परिवर्तित होकर मछली को संक्रमित करते हैं। ट्राइएक्टिनोमिक्सोन स्पोर्स 150 माइक्रोमीटर लंबे तथा 3 हूक्स जो कि 200 माइक्रोमीटर लंबे होते हैं। कुछ समय के अन्तराल में ही यह ट्राइएक्टिनोमिक्सोन, स्पोरोप्लास्म में परिवर्तित होकर, विघटित होने लगते हैं। यह छोटे बीजाणु (स्पोर्स) मछली के शरीर में फैलने लगते हैं और विरलिंग रोग का कारण बनते हैं।

इस रोग से संक्रमित मछलियों के कुछ व्यवहारिक लक्षण इस प्रकार हैं– मछलियों का तीव्र गति से गोल–गोल चक्कर लगाना, बाहरी

सतह का रंग मुख्यतः पूँछ के रंग का काला हो जाना, मृत्यु दर का तीव्र गति से बढ़ना, अत्यधिक मात्रा में इस रोग के संक्रमण का सूचक होता है। इसके अतिरिक्त मछलियों का भोजन लेना, बंद कर देना भी इस रोग का लक्षण है। इसके संक्रमण से बचाव के लिए रेन्बो ट्राउट में एंटिबायोटिक – फ्यूमागिलिन का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त मछलियों का उचित प्रबंधन अत्यावश्यक है।

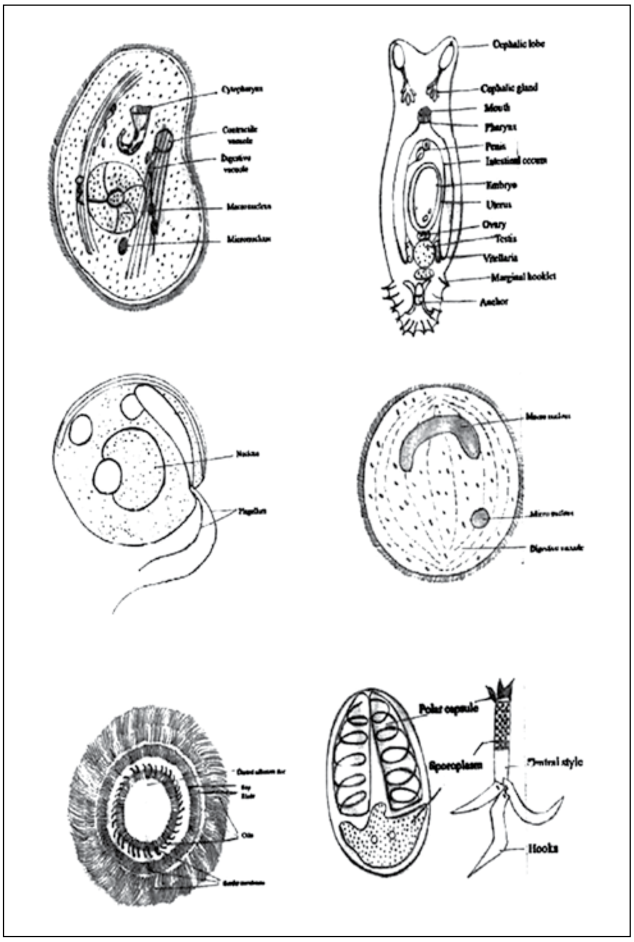

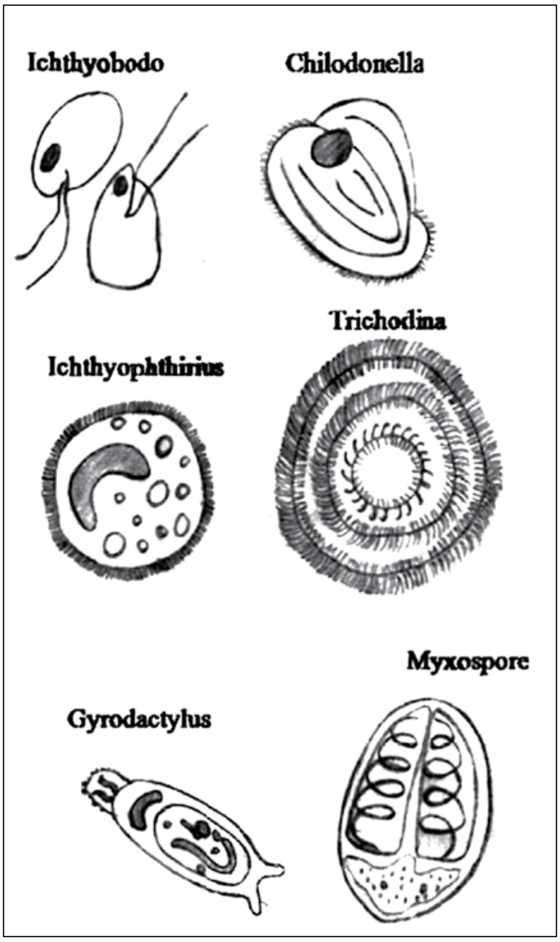

विभिन्न प्रकार की मछलियों में पाए जाने वाले परजीवी

घर के आँगन में जैसे तुलसी दल,
या सुहागन के भाल पर बिंदी।

देवता के मुकुट पे जैसे फूल,
वैसे ही भारत के भाल पर हिन्दी।।

– गोविंद प्रसाद श्रीवास्तव

कार्प मछलियों में होने वाली बीमारियाँ, लक्षण एवं उपचार

राजीव कुमार ब्रह्मचारी, अनिरूद्ध कुमार एवं शिवेन्द्र कुमार
मात्स्यिकी महाविद्यालय, (डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय), ढोली, मुजफ्फरपुर, बिहार

कार्प मछलियों का पालन एक लाभदायक व्यवसाय है लेकिन कभी–कभी बीमारियों को पालन के दौरान अनदेखा किया जाना उदेश्य को पूरा करने में व्यवधान पैदा करता है। अनुमानतः सिर्फ बीमारी के कारण 20–25 प्रतिशत उत्पादन में हानि हो सकती है। इसलिए रोग फैलने से रोकने के लिए तालाबों व कार्प मछलियों का ख्याल रखना आवश्यक है। मत्स्य कृषकों के दृष्टिकोण से रोगों के संकेतों, उपचार और नियंत्रण उपायों के आधार पर उनके निदान कार्यों का इस आलेख में चर्चा किया गया है।

रोग फैलते ही संचित मछलियों के स्वभाव में प्रत्यक्ष अंतर आ जाता हैं। रोगग्रस्त मछलियों की पहचान निम्नलिखित तरीके से कर सकते हैं:

(1) बीमार मछली का समूह में न रहकर किनारे पर अलग–थलग दिखना, शिथिलता या अनियंत्रित तैरना।

(2) भोजन कम करना या न करना।

(3) अपने शरीर को तालाब के किनारे या पानी में गड़े बाँस या अन्य कठोर वस्तुओं पे बार–बार रगड़ना।

(4) मुँह खोलकर बार–बार वायु अन्दर लेने का प्रयास करना।

(5) पानी में सीधा या उल्टी टंगे रहना।

(6) मछली के शरीर का रंग फीका पड़ जाना।

(7) कभी–कभी आँख, शरीर तथा गलफड़े फूल जाना।

(8) शरीर की त्वचा का फट जाना तथा उससे खून का रिसाव होना।

(9) गलफड़े (गिल्स) की लाली कम हो जाना और उनमें सफेद धब्बों का बनना।

रोगों के कारण

तालाबों के खराब प्रबंधन के कारण मछलियों कि मृत्यु अक्सर देखी जाती है। तालाब पर्यावरण, विशेष रूप से तालाबों के पानी की गुणवत्ता, मछलियों की मृत्यु दर और संक्रमण को बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसलिए, किसी भी बीमारी या मृत्यु को रोकने के लिए निम्नलिखित जल गुणवत्ता मानकों को निर्दिष्ट सीमा में बनाए रखा जाना चाहिए:

- पी0एच0: 7.5 से 8.5
- विधटित ऑक्सीजनः > 5.0 पी0पी0एम0
- तापमान : 25–30 डिग्री सेल्सियस

कार्प मछली पालन में होने वाली प्रमुख बीमारियाँ परजीवी, कवक और जिवाणु के कारण होती है। कार्प मछलियों की बीमारियाँ शायद ही कभी महामारी के स्तर तक पहुँचती हैं। इनके कारण मछली आमतौर पर धीरे–धीरे मरती है – अर्थात प्रत्येक दिन कुछ मछली। केवल गंभीर मामलों में, जब मछली कई दिनों से भूखी रही हो, घायल हो या जलीय गुणवत्ता खराब हो (कम ऑक्सीजन स्तर, उच्च तापमान या रासायनिक विषाक्तता) मछलियों में तनाव उत्पन्न होता है और बीमारियों के ये कारक गंभीर समस्या बन जाते हैं। जब तालाब में किसी भी बीमारी के संकेत या किसी भी प्रकार की मृत्यु दर्ज की जाती है तो मछलीपालकों को मछली के स्वास्थ विशेषज्ञों से संपर्क करने की सलाह दी जाती है।

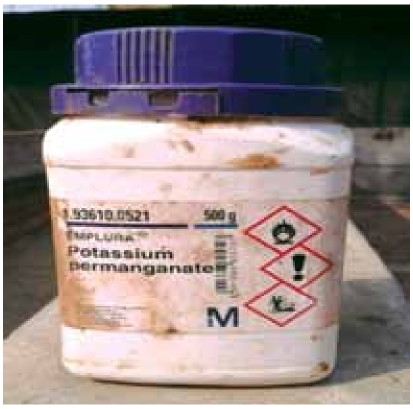

मत्स्य पालन के क्षेत्र में प्रयोग होने वाले सामान्य प्रतिकारक

कार्प मछलियों के प्रमुख रोग

1. सैपरोलेगनियोसिस

लक्षणः— शरीर पर रूई के गोले की भांति सफेदी लिए भूरे रंग के गुच्छे उग जाना।

उपचार— छोटे तालाबों में कॉपर सल्फेट का 0.2—0.5 पी0पी0एम0 की दर से छिड़काव (एक से दो बार छः दिनों के अंतराल पर)। मछलियों को कॉपर सल्फेट के 1:2000 सान्द्रता वाले घोल या 1:1000 पोटेशियम के धोल में 1—5 मिनट तक स्नान।

2. ब्रैंकियोमाइकोसिस

लक्षणः— गलफड़ों का सड़ना। दम घुटने के कारण रोगग्रस्त मछली उपर सतह पर हवा पीने का प्रयत्न करती है।

उपचार— तालाब में पानी के स्तर को बढाना या 100—150 कि0ग्रा0/हे0 चूने का प्रयोग या 1 मीटर गहराई वाले तालाबों में 15 कि0ग्रा0/हे0 की दर से कॉपर सलॅ्फेट का प्रयोग। मछलियों को 3—5 प्रतिशत नमक के घोल में स्नान।

3. लाल धाव या ईयूएस (ऐपिजुटिक अल्सरेटिव सिन्ड्रोम)

लक्षणः— प्रारम्भिक अवस्था में छोटे—छोटे लाल दाग का मछली के शरीर पर दिखना जिनका बाद गहरे होकर सड़ने लगना।

उपचारः— 600 कि0ग्रा0 चूना/हे0 (200 कि0ग्रा0 हर सात दिनों के अंतराल पर) या सीफाक्स 1 लीटर प्रति हेक्टेयर/मीटर पानी के लिए प्रभावकारी।

4. फिन तथा टेल रॉट रोग

लक्षणः— आरम्भिक अवस्था में पंखों तथा पूँछों के किनारों का सफेद होना एवं बाद में सड़ कर टूट जाना।

उपचारः— 2—3 पी0पी0एम0 पोटैशीयम परमैगनेट से तालाब का उपचार। मछलियों को 8 ग्राम/100 कि0ग्रा0 मछली/दिन की दर से आहार में आक्सीटेट्रासाईक्लिन 10 दिनों के लिए।

5. अल्सर (धाव)

लक्षणः— सिर, शरीर तथा पूँछ पर बड़ी घावों का पाया जाना।

उपचारः— तालाब में 2—3 पी0पी0एम0 पोटैशीयम परमैगनेट का प्रयोग। 600 कि0ग्रा0 चूना/हे0 (200 कि0ग्रा0 हर सात दिनों के अंतराल पर) या सीफाक्स 1 लीटर प्रति हेक्टेयर/मीटर पानी के लिए प्रभावकारी।

6. ड्राप्सी (जलोदर)

लक्षणः— आन्तरिक अंगो तथा उदर में पानी का जमाव।

उपचारः— मछलियों के लिए स्वच्छ जल व भोजन की उचित व्यवस्था, चूना 100 कि0ग्रा0/हे0 की दर से 15 दिनों के उपरान्त (2—3 बार) छिड़काव।

7. कतला का नेत्र रोग

लक्षणः— आरम्भिक अवस्था में आँखों का लाल होना और अन्त में गिर जाना।

उपचारः— तालाब में 2—3 पी0पी0एम0 पोटैशीयम परमैगनेट का प्रयोग। मछलियों को 8 ग्राम/100 कि0ग्रा0 मछली/दिन की दर से आहार में टेरामाइसिन (10 दिनों तक) का प्रयोग।

8. इकथियोपथिरिऑसिस (खुजली)

लक्षणः— अधिक श्लेश्मा का स्श्राव, शरीर पर छोटे—छोटे अनेक सफेद दाने दिखाई देना।

उपचारः— 7—10 दिनों तक हर दिन 50 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन के घोल में 10 मिनट स्नान या 2 प्रतिशत साधारण नमक के घोल में 7—10 दिनों तक स्नान। तालाब में 20—25 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन का प्रयोग।

9. ट्राइकोडिनिओसिस

लक्षणः— श्वास लेने में कठिनाई, बेचैन होकर तालाब के किनारे शरीर को रगड़ना, शरीर तथा गलफड़ों पर अत्याधिक श्लेष श्राव।

उपचारः— 2 प्रतिशत साधारण नमक के धोल में 7—10 दिनों तक स्नान। छोटे तालाबों में कॉपर सल्फेट का 0.2—0.5 पी0पी0एम0 की दर से छिड़काव (एक से दो बार छः दिनों के अंतराल पर) या 20—25 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन का प्रयोग।

10. मिक्सोस्पोरोडिऑसिस

लक्षणः— शरीर, पंखों और गलफड़े पर सरसों के दाने जैसा दिखना।

उपचारः—तालाब में 15—25 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन का प्रयोग हर दो दिन के अंतराल पर, रोग समाप्त होने तक। अधिक रोगी मछली को तालाब से निकाल देना चाहिए।

11. कोस्टिएसिस

लक्षणः— अत्याधिक श्लेषा स्त्राव, श्वसन में कठिनाई और बेचैनी।

मछली की सतह पर आरगुलस

मछली माएक्सोबेलस का संक्रमण

उपचारः— 2—3 प्रतिशत साधारण नमक या 50 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन के धोल में 10 मिनट या 1:500 ग्लेशियल एसिटिक एसिड के धोल में 10 मिनट स्नान। तालाब में 20—25 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन का प्रयोग।

12. ट्रेमैटोड्स

लक्षणः— गलफड़ों तथा शरीर पर ट्रेमैटोड परजीवियों का प्रकोप। अत्याधिक श्लेषा स्त्राव, श्वसन में कठिनाई।

उपचारः— 2 प्रतिशत साधारण नमक के धोल में 7—10 दिनों तक स्नान। छोटे तालाबों में कॉपर सल्फेट का 0.2—0.5 पी0पी0एम0 की दर से छिड़काव (एक से दो बार छः दिनों के अंतराल पर) या 20—25 पी0पी0एम0 फॉर्मीलिन का प्रयोग।

13. डिपलोस्टोमियेसिस या ब्लैक स्पाट रोग

लक्षणः— शरीर पर काले धब्बे दिखना।

उपचारः— परजीवी के जीवन चक्र को तोड़ना जैसेकि घोंघों को तालाब से पूरी तरह बाहर निकाल देना एवं पक्षीयों को तालाब में न आने देना।

14. आरगुलेसिस या जूं या अठगोड़वा

लक्षणः— शरीर पर लाल या काले छोटे—छोटे गोल धब्बे दिखना।

उपचारः— 50 एमएल/हे0 साइपरमेथ्रिन 100 लीटर पानी में धोलकर तालाब में छिड़काव (दो से तीन बार छः दिनों के अंतराल पर)। ऐभरमेक्टीन दवा 5—10 ग्राम /100 कि0ग्रा0 मछली के लिए आहार में मिला कर (तीन बार दो दिनों के अंतराल पर प्रयोग एवं पुनः 21 दिनों बाद दोहरायें)।

15. लरनिएसिस (एंकर वर्म रोग)

लक्षणः— कार्प मछलियों के गलफड़ा के पास वाले पंख के पास शरीर से धागा की तरह लटकता दिखना। मछलियों में रक्तविहीनता, कमजोरी तथा शरीर पर धब्बे।

उपचारः— हल्का रोग संक्रमण होने से 1 पी0पी0एम0 गैमेक्सीन का तालाब में प्रयोग या 50 एमएल/हे0 साइपरमेथ्रिन 100 लीटर पानी में धोलकर तालाब में छिड़काव (दो से तीन बार छः दिनों के अंतराल पर)। ऐभरमेक्टीन दवा 5—10 ग्राम/100 कि0ग्रा0 मछली के लिए आहार में मिला कर (तीन बार दो दिनों के अंतराल पर प्रयोग एवं पुनः 21 दिनों बाद दोहरायें)।

इस आलेख के माध्यम से कार्प मछलियों के रोगां के संकेत व उनके उपचार को बतलाया गया है। इसका अध्ययन करके मत्स्य पालक मछलियों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को देख कर आने वाली समस्या को पहले ही समझ लेंगें तथा बताये गये समाधान को अपनाकर बड़े नुकसान से बचने में समर्थ होंगें। इस आलेख का मुख्य उद्देश्य मत्स्य पालकों के ज्ञान में वृद्धि कर उन्हें समृद्ध बनाना है जिससे उनका जीवन और अधिक खुशहाल हो सके। अगर मछलीपालकों को किसी भी प्रकार की दुविधा हो तो मछली के स्वास्थ विशेषज्ञों से संपर्क करने की पुनः सलाह दी जाती है।

मछली के शरीर में लर्निआ का संक्रमण

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधक-विश्व में कीटाणुओं में उभरती हुई एक गंभीर समस्या

नीतू शाही, सुमन्त कुमार मल्लिक, कुशाग्र पंत एवं मनीषा गुप्ता
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोध का अर्थ यह है कि एंटीबायोटिक पहले कीटाणुओं की रोकथाम में कारगर थी परन्तु अब यह निष्क्रिय है। इसका अर्थ यह हुआ कि अब इन दवाओ का इन कीटाणुओं पर किसी प्रकार का असर नही हो रहा है। अतः कीटाणुओं ने उस एंटीबायोटिक के प्रति प्रतिरोधकता स्थापित कर ली है ।

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधक क्षमता 3 प्रकार से उत्पन्न होती हैः

1. प्राकृतिक रुप से प्रतिरोध रखना। कुछ बैक्टीरिया प्राकृतिक रुप से आरम्भ में ही कुछ एंटीबायोटिक के प्रतिरोधक होते है। यह उनके जीन या पिलाजमिड में होती हैं।
2. म्यूटेशन के जरिए भी प्रतिरोध क्षमता उत्पन्न होती है जब एंटीबायोटिक लगातार अनावश्यक और अत्यधिक मा्त्रा इस्तेमाल होता है तो उनके अनुवांशिक स्तर में कुछ बदलाव आते है। जिन्हें म्यूटेशन कहा जाता है यह इन कीटाणुओं पर कोई असर न हो।
3. तीसरा तरीका, जिससे कि कीटाणु प्रतिरोध क्षमता स्थापित करते है वह यह है कि जिस कीटाणु के पास एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधकता वाली प्लाजमिड होती है वह दूसरे उन कीटाणुओं को दे देता है जिसके पास नही होती है। इसका परिणाम यह होता है कि जो कीटाणु पहले संवेदनशील था वह अब प्रतिरोधकता स्थापित कर चुका है।

एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधकता की समस्या बैक्टीरिया वायरस परजीवी एवं सभी कीटाणुओं में होती है। आजकल रोजर्मरा की जिंदगी में एंटीबायोटिक का इस्तेमाल हर चीज में हो रहा है जिससे यह समस्या और भी गंभीर बन जाती है। यही एंटीबायोटिक वातावरण में जाता है और समस्या बढ़ती जाती है। इसके फलस्वरुप अब हमें नये एंटीबायोटिक की खेज करनी होगी क्योंकी पुरानी एंटीबायोटिक अब बीमारी रोकने में कारगर नही है। इस वजह से आजकल एंटीबायोटिक को ज्यादा मात्रा में इस्तेमाल करना पड़ रहा है। बीमारियों के इलाज के परिणाम में ''मल्टीड्रग प्रतिरोधक ''कीटाणु उभर कर सामने आ रहे है जिनकों ''सुपर बग'' भी कहा जाता है। यह सुपर बग एक या दो एंटीबायोटिक को छोड़ कर अन्य किसी से नही मारे जा सकते है।सुपर बग का एक उदाहरण है– ''एन.डी.एम''। यह ''एन .डी .एम'' पहली बार दिल्ली में पाया गया था और अब यह पूरी दुनिया में फैल चुका है। कम विकसित देशों में एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधक की समस्या तुलनात्मक रूप में ज्यादा गभीर है क्यांकि इन देशों में एंटीबायोटिक बिना डाक्टर के परामर्श के दवाईयों को दुकानों से आसानी से खरीदी जा सकती है। इसके अलावा यह भी पाया है 70–80 प्रतिशत एंटीबायोटिक पशुपालन के क्षेत्र में उपयोग होती है। जहॉ इनको 'ग्रोथप्रमोटर' की तरह इस्तेमाल किया जाता है जो कि गलत है। मनुष्य जब इन पशुओं का सेवन करता है तो यह एंटीबायोटिक उनके शरीर में भी प्रवेश कर जाती है।

एक आकड़े के अनुसार विश्व भर में हर वर्ष 700.000 लोग एंटीमाइक्रोबियल प्रतिरोधक वाले कीटाणुओं की वजह से मर जाते है जो की 2050 में 10 मिलियन होने की संभावना है। अतः एंटीबायोटिक का उचित इस्तेमाल अत्यंत ही आवश्यक है।

एंटीबायोटिक प्रतिरोधक का परिणाम यह होगा कि भविष्य में कोई भी एंटीबायोटिक कीटाणुओं को मारने मे कारगर नही होगी जिसके परिणाम स्वरुप पशु प्राणी छोटी से छोटी कीटाणुओं से होने वाली बीमारी से भी मर जाएगे।

कुछ तरीके जिससे की एंटीबायोटिक प्रतिरोधक पर कुछ हद तक काबू पाया जा सकता है इस प्रकार हैः

1. ऐसी बीमारी जो अपने आप ठीक

हो सकती है उनमें एंटीबायोटिक न ले। उदाहरण के लिए सर्दी जुकाम में एंटीबायोटिक न खाएं।

2. डाक्टर के बताए अनुसार एंटीबायोटिक का कोर्स पूरा करें।

3. बिना डाक्टर कि परामर्श के एंटीबायोटिक कभी न खाए और न खिलाएं।

4. एंटीबायोंटक दवाओं के कोर्स के बारे में जानकारी रखें ।

5. हर तरह की साफ सफाई का ख्याल रखें ताकि संक्रमण न हो।

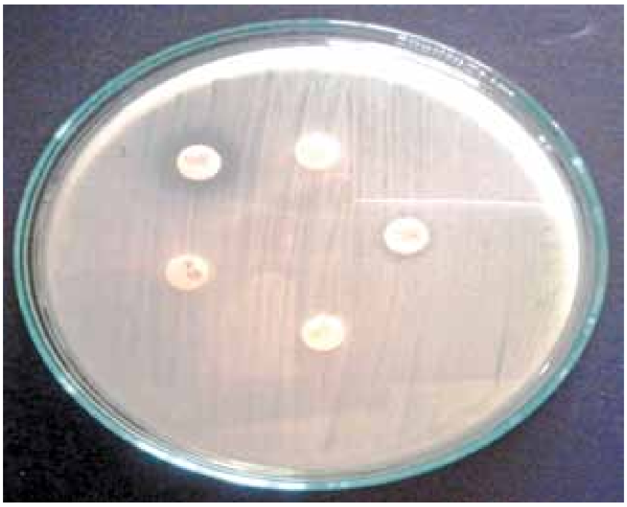

जीवाणु की रोग–रोधी संवेदनशीलता का परीक्षण

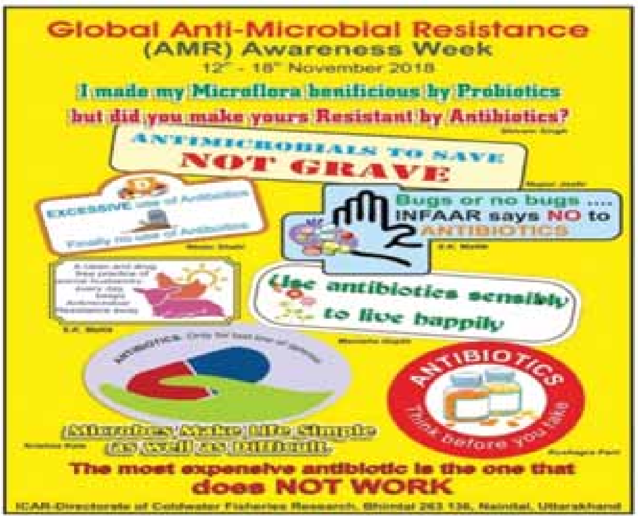

रोगाणुरोधी जागरूकता सप्ताह

मत्स्य पालन में प्रयुक्त होने वाले माइक्रोबायल रोगों के एंटीमाइक्रोबियल

रेन्बो ट्राउट की आँख और मुँह की बीमारी, लक्षण, कारण और उपचार

सुरेश चन्द्रा
भा.कृ.अनु.प–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशाल, भीमताल

हमारे देश के पर्वतीय जल क्षेत्रों में पाई जाने वाली रेन्बो ट्राउट बहते हुए शीतजल में तीव्र बढ़वार प्राप्त करने वाली सालमानिडी वर्ग की अभ्यागत मत्स्य प्रजाति, मूलतः उत्तर अटलांटिक एवं उत्तर पैसिफिक की है। भारत में 19 वीं सदी के प्रारम्भ में यह क्रीड़ा गतिविधियों के लिए लायी गयी थी। शरीर के बीच में इन्द्रधनुषी रंग के चलते इसे रेन्बो ट्राउट के नाम से जाना जाता है। उच्च ऑक्सीजन युक्त बहता हुआ साफ जल जिसका तापमान वर्ष पर्यन्त 0-21^{0}C तक रहता हो, में यह प्रजाती पालन योग्य है।

मांसाहारी प्रकृति की यह मछली को दिये जाने वाले आहार में प्रोटीन की 40–45 प्रतिशत तक मात्रा होती है। इसकी बढ़वार सामान्य रूप में प्रथम वर्ष में 200–300 ग्राम तक द्वितीय वर्ष 500–600 ग्राम तक तथा तृतीय वर्ष में 1000 ग्राम तक हो जाती है। नर दूसरे साल में परिपक्वता प्राप्त कर लेता है। जबकि मादा मछली तीन साल के बाद ही अण्डे देती है। अण्डे 3–5 मिमी आकार एवं 40–60 मिग्रा बजन तक के पीलापन लिए हुए होते है। एक मादा मछली से सामान्यतः लगभग 1500–2000 प्रति किग्रा के हिसाब से अण्डे प्राप्त हो जाते है। निषेचित अण्डों से हैचरी में लार्वी निकलने के लिए कुल 310–370 डिग्री डेज तापमान की जरूरत होती है। सामान्यतः हैचरी में 4-12^{0} C पानी के तापमान में हैचिंग 35–48 दिन में हो जाती है। रेसवे जहां पानी का वर्ष भर तापमान 2-23^{0}C के बीच देखा जाता हैं में इसका प्रजनन काल दिसम्बर–फरवरी तक होता है। इस दौरान अण्डे समान आकार एवं पीलापन लिए होते है। थोड़ा सा उदर में दबाव देने से अण्डें बाहर निकल जाते है।

देश में ट्राउट पालन का विस्तार हो रहा है, और अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए मत्स्य कृषक सघनीकरण पालन विधियां अपनाने लगे है। जहां एक ओर रेसवे से उत्पादन अधिक प्राप्त होता है वहीं दूसरी ओर विपरीत परिस्थितियों में अनेक बिमारियों का संक्रमण भी देखा जाता है।

आँख की बीमारी के लक्षण

- यह बीमारी मुख्य रूप् से बड़े आकार की मछलियों में देखी जाती है। छोटी 1–2 साल की रेन्बों ट्राउट में यह बीमारी बहुत कम देखी गयी है।
- प्रभावित मछलियों की आंखों में शुरूआत में हल्की एक लाल लाइन दिखती है। धीरे–धीरे पूरी आंख सफेद हो जाती है और एक सफेद परत से ढक जाती है।
- रंग अधिक काला हो जाना, पूरी आंख का बाहर निकलना, आंख के लैंस का सिकुड़ना, मछलियों का कमजोर दिखना, प्रभावित मछलियों का पूरी तरह से अन्धा हो जाना और अन्त में मछलियों की मृत्यु होने लगती है।

आँख की बीमारी

- ऐसा पाया गया है कि अधिक संक्रमण की अवस्था में लगभग 35–60 प्रतिशत तक ट्राउट मछलियां की जनसंख्या इस बीमारी से प्रभावित हो जाती है।

आँख की बीमारी के मुख्य कारण

डाईजनिक ट्रिंमोटोड, डिप्लोस्टोमियम स्पैथिकम अथवा वैक्टिरिया में फ्लेवोवैक्टिरियम विसिला लेक्टोकोकस गारवी या आवश्यक खाद्य तत्वों की कमी या अत्याधिक यूवी रैडिऐसन आदि में भी आंख की बीमारी देखी गयी है।

समस्त कारकों एंव स्थानीय परिवेश को दृष्टिगत रखते हुये आंख की बीमारी पर नियन्त्रण किया जाता है। डिप्लोस्टोमियम स्पैमिकम नामक डाइजैनिक ट्रिमाटोड अपना जीवन चक्र तीन जीवों: चिड़िया, घोंघा और मछली में पूरा करते हैं।

लाल बीमारी

यह संक्रमण मुख्यतः यारसिनिया बैक्टिरिया द्वारा होता है। जिसका अधिकतम फैलाव 15-18^0 C के बीच होता है इसी तरह के तापमान में यह संक्रमण अधिक पाया जाता है। रेसवे में प्रयोग किये जाने वाले पानी की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। अनेक ट्राउट प्रक्षेत्रों में गर्मियों के महिनों में पानी की उपलब्धता बहुत कम हो जाती हैं। इसके साथ वातावरणीय तापमान भी बढ़ता है। वर्ष 2013–18 में मई से अगस्त के अन्तिम सप्ताह तक उत्तराखण्ड एवं हिमाचल के कुछ ट्राउट फार्मों से बहुत अधिक ट्राउट मरी हुयी पायी गयी। सभी तरह के संक्रमणां में इस रोग द्वारा लगभग 6 से 49 प्रतिशत तक ट्राउट मछलियों की हानि दर्ज की गई है।

लाल बीमारी

यह एक अत्यन्त घातक बीमारी है रेसवे के नियमित सफाई, सही जल आपूर्ति एवं बीमारी होने की दशा में दवा का प्रयोग लाभदायक होता है जिनके चलते इस संक्रमण का फैलाव अधिक होता है। ऐसा पाया गया है कि बैक्टिरिया अन्तः आतों में कुछ महिनों तक बिना बीमारी के लक्षण पैदा किये हुए भी रह सकता है जैसे ही बैक्टिरिया के लिए उपयुक्त वातावरण ट्राउट रेसवे में स्थापित होते ही इनकी संख्या बढ़ती हैं और लाल मुँह की बीमारी के लक्षण पैदा होते है।

उपचार

- क्लोरोटैट्रासाइक्लीन 70 मिग्रा./किग्रा. मछलियों को 7 दिन तक खाने में देने से इस बीमारी पर पूर्ण रोकथाम पायी गई।
- इसके साथ पानी के तापमान में सितम्बर माह में गिरावट भी इसकी रोकथाम में सहायक सिद्ध हुयी। सितम्बर माह के बाद इस बीमारी का प्रकोप नही देखा गया।

ट्राउट मछलियों में अंधेपन के प्रभाव

- अंधेपन की वजह से मछलियों दिया हुआ खाद्य ठीक तरह से ग्रहण नही कर पाती है और धीरे–धीरे कमजोर होकर मरने लगती है। कमजोर अंधेपन से ग्रस्त मछलियों को बड़े जलीय पक्षी भी आसानी से अपना ग्रास बना लेते है। संक्रमित ट्राउट की मृत्यु दर 30–40 प्रतिशत तक देखी गयी है।
- गर्मियों में इसके प्रभाव से ज्यादा मृत्युदर देखी जाती है। जबकि सर्दियों में इन प्रभावित मछलियों की हानि कम रिकार्ड की गयी। प्रभावित मादा ट्राउट प्रजनक ब्रुडर में शारीरिक वनज की औसत गिरावट लगभग 30–44 प्रतिशत तक एवं नर में यह गिरावट 43 से 55 प्रतिशत तक पायी गयी है।
- जहां स्वस्थ्य तीन वर्ष की मछलियों का औसत वनज 611 ग्राम था एवं अण्ड उत्पादन दर 0.159 ग्राम अण्डे/ग्राम मछली के वजन के बराबर थी। जबकि आंख की बीमारी से ग्रस्त मादा ट्राउट का औसत वजन लगभग 426 ग्राम एवं अण्ड उत्पादन दर 0.108 ग्राम अण्डे/ग्राम मछली के वजन के बराबर दर्ज किया गया।
- प्रभावित मादा मछलियों से प्राप्त अण्डों का आकार छोटा एवं हैचरी में निषेचन दर एवं उत्तरजीविता भी अपेक्षाकृत कम पायी जाती हैं। जो इंगित करता है कि रेन्बो ट्राउट मछलियों में आंख का संक्रमण आर्थिक रूप से अत्यन्त नुकसानदायक है।
- आंख संक्रमित मछलियों के बाजार भाव में भी कमी देखने को मिलती है। यद्यपि लम्बाई में विशेष गिरावट नही देखी गयी, परन्तु वजन में उल्लेखनीय गिरावट देखी जाती है। मछलियां में सामान्य स्वस्थ्यता स्तर (फैक्टर) का अध्ययन किया गया और ज्ञात हुआ कि प्रक्षेत्र की पालन अवस्थाओं में बीमार मछलियों में यह 0.62–1.00 था जबकि स्वस्थ्य मछलियों में यह 1.2 से अधिक पाया गया।

उपचार

- रोग के लिए जिम्मेदार कारक की उचित पहचान कर निदान किया जा सकता है।
- समय–समय पर मछलियों के

टैंकों की सफाई।

- क्लोरोटैट्रासाइक्लीन 70 मि. ग्रा./किग्रा. मछलियों को 7 दिन तक खाद्य में मिलाकर देने से इस बीमारी पर पूर्ण रोकथाम पायी जा सकती है।
- इसके साथ पानी के तापमान में सितम्बर माह में गिरावट भी इसकी रोकथाम में सहायक सिद्ध होती हैं। सितम्बर माह के बाद इस बीमारी का प्रकोप मत्स्य क्षेत्रों में कम देखा गया है।
- नमक के 3% घोल अथवा पोटेशियम परमैग्नेट (400–500 ppm) के घोल में डिप ट्रिटमेंट से लाभ मिलता है।
- कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की कमी से भी इस तरह की बीमारी के लक्षण पैदा होते है। अतः संतुलित विटामिन, मिनरल्स एवं ट्रेस एलिमेंट युक्त खाद्य की आपूर्ति सुनिश्चित करनी चाहिए।

लक्षण प्रभावित मछलियों के नीचे और ऊपर के जबड़ों और मुँह के अन्दर लालिमा लिये हुये सतही घाव दिखाई देते है। गलफड़ों के ऊपर भी लाल एवं गम्भीर अवस्था में पश्च भाग में मलद्वार के पास भी बड़े–बड़े घाव पैदा हो जाते हैं। इस संक्रमण से ग्रसित ट्राउट मछलियाँ मरने लगती हैं।

चॉकलेट महाशीर

चॉकलेट महाशीर (*निओलिस्सोचिलस हैक्सागोनोलिपिज*) खाने में स्वादिष्ट तथा आखेट हेतु प्रसिद्ध मछली है। यह केवल उत्तर-पूर्वी हिमालयी क्षेत्रों विशेषकर मेघालय में पायी जाती है। यह एक संकटग्रस्त मत्स्य प्रजाति की श्रेणी में आती है। अतः प्राकृतिक जल स्त्रोतों में इसके संरक्षण एवं वृद्धि करने हेतु इसकी ओर विशेष ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। (आई यू.सी.एन. 2016). यह मछली समूह में प्रजनन करती हैं। इसके प्रजनन का समय जनवरी-फरवरी, मई-जून तथा जुलाई-सितम्बर है।

संरक्षण

देवभूमि में मछलियों का संरक्षण

शिवम सिंह, नुपूर जोशी, मनीषा गुप्ता, कुशाग्र पन्त एवं कृष्णा काला
भा.कृ.अनु.प–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशाल, भीमताल

देवभूमि उत्तराखण्ड की खूबसूरत वादियों में बसा एक छोटा सा जिला बागेश्वर जो भगवान बागनाथ की नगरी व सरयू नदि के तट पर बसा हुआ है। इस के उत्तर दिशा में सफेद चादर ओढ़े खड़ा हिमालय व तलहटियों में बसे गाँव रात में ऐसे प्रतीत होते है कि मानो पूर्णिमा की चाँदनी को सैकडों तारे एक साथ हो। यहाँ के सदाबहार जंगलो में अनेक प्रकार के जीवों व विभिन्न प्रकार के पेड़ व औषधि पायी जाती है, तो यहाँ की नदियों में अनेक प्रकार की मछलियां निवास करती है। जीवों में यहाँ कस्तूरी मृग, हिम तेदुआ, बाघ व पक्षियों में मोनाल, हिलास व नदियों में पायी जाने वाली सुनहरी महाशीर जिसे स्वच्छ जल की सार्क भी कहा जाता है। उत्तराखण्ड की सुन्दरता को और बड़ाती है। कुछ प्राकृतिक आपदाओं जैसे भू स्खलन, वर्षा की अनियमिता, जंगलों में लगने वाली आग, डायनामाइट, करंट द्वारा मछलियों को मारना, रसायनों का प्रयोग, कुछ लोगों के पैसों के लालच एवं तामसिक प्रवृति के कारण आज ये जीव न केवल अपने प्राकृतिक आवास स्थलों में विचरण कर सकते है और ना ही सदाबहार बहती रहने वाली नदियों की धाराओं में ही स्वत्रंत होकर दूर तक तैर सकते है। सरकार की कई परियोजनाओं जैसे राष्ट्रीय उद्यानों, वन्य जीव विहारों व बायो स्फेयर रिर्जव के निर्माण की वजह से आज ये जीव कुछ निर्धारित क्षेत्र तक सुरक्षित व स्वत्रंत होकर रह रहें हैं तो कही भगवान में आस्था होने के कारण इनका संरक्षण कई वर्षो से होता आ रहा हैं। ऐसे ही कुछ उदाहरण इस प्रकार हैः

- बैजनाथ बाबा भोलेनाथ का मन्दिर जो जिला बागेश्वर से 25 किमी0 पहले व भारत का स्वीजरलैड कहे जाने वाले कौसानी से 20 किमी0 बाद गोमती नदी के तट पर बसा है।
- मन्दिर के द्वार के सम्मुख मन्दिर परिसर की सीड़ियाँ उतरते ही

बैजनाथ मन्दिर के समीप कृतिम झील

गोमती नदी बहती है।

- बरसात में जब जल का स्तर बहुत बढ़ जाता है जल के प्रवाह की वजह से नदी के तट पर स्थित तटबंध व नदी मिलकर छोटे से गहरे जल के क्षेत्र का निर्माण करती है। जहाँ पर सुनहरी माहाशीर की बहुत बडी संख्या निवास करती है।
- इन महाशीर का आकार 2–3 फीट लम्बा व वजन 7–15 किलोग्राम था। मार्च से जून तक इन नदियों का जल स्तर कम होते हुये भी इनका संरक्षण यहां के लोगों की भगवान में आस्था होने के कारण सम्भव होता चला आ रहा है। 15–16 दिसम्बर 2014 को अत्यधिक (1–2 फिट 20–25 वर्ष बाद) बर्फबारी होने के कारण उस वर्ष

बैजनाथ मन्दिर में संरक्षित महासीर मछलियां

मन्दिर परिसर के समीप संरक्षित सभी बच्चे व वयस्क सुनहरी महाशीर की मृत्यु हो गई थी। 14 जनवरी 2016 में वैजनाथ मन्दिर के समीप बैराज के तैयार होने के बाद DCFR के वैज्ञानिकों द्वारा महाशीर के बच्चों को मन्दिर परिसर के समीप बनी झील में छोड़ा गया और स्वतः ही नदियों जुड़ी हुई धाराओं में निवास करने वाली महाशिर की वजह से आज मन्दिर परिसर में पुनः सुनहरी महाशीर की संख्या में वृद्वि हुई है।

- यहाँ की सामान्य लोक कथाओं के अनुसार मन्दिर परिसर के समीप जलाशय में रहने वाली महाशिर मछलियों को भगवान भोलेनाथ के गणों के रुप में पूजा जाता हैं व श्रावण मास के प्रत्येक सोमवार को लोग व्रत लेते हैं और भगवान भोले नाथ के दर्शन के लिए जाते है। दर्शन करने के बाद वो लोग मछलियों को चावल, खिले व चने खिलाते हैं।
- महाशिवरात्री हो या फिर श्रावण मास का प्रत्येक सोमवार जो भी लोग मन्दिर में भोलेनाथ के दर्शनों के लिए आते हैं चावल या खिले मछलियों के लिए अवश्य लाते है और उन्हें खिलाते हैं।
- भगवान भोलेनाथ पर आस्था होने के कारण मन्दिर परिसर के समीप पाये जाने वाले जलाशय में महाशीर को संरक्षण प्राप्त है और उस क्षेत्र में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति मन्दिर परिसर के जलाशय में और जलाशय के समीप वर्ष में कभी भी मछलियों को कोई भी क्षति नही पहुंचाता है।
- दूसरा उदाहरण भी बागेश्वर जनपद के मैगडी स्टेट गाँव के पास स्थित भगवान नरसिंह देवता के मन्दिर के समीप स्थित है। यह मन्दिर गरुड़ तहसील से 15 से 20 किमी0 की दूरी पर स्थित है। यह स्थान जनपद बागेश्वर व जनपद चमोली के मध्य स्थित है। नरसिंह देवता को यहाँ के लोग बहुत मानते है और लोगों का यह विश्वास है कि उन से मांगी गयी मनोकामना हमेशा पूरी होती है। मन्दिर परिसर से करीब 200 मी0 की दूरी पर गोमती नदी बहती है। गोमती नदी के बहाव से पहाड़ के किनारे एक छोटे गहरे जलाशय निर्मित है। जिस पर महाशीर निवास करती है। यहाँ पर भी भगवान पर लोगों की आस्था होने के कारण इनका संरक्षण कई वर्षा से होता आ रहा है इस स्थान पर भी लोग उन्हे खाना देते है और वहाँ स्थित मछलियों को कोई भी हानि नही पहुचाते हैं।

भारत में पारिस्थितिकी-पर्यटन एवं मनोरंजनात्मक मात्स्यिकी

दीपज्योति बरूआ, टमल भट्टाचार्या, मनीष दुबे, प्रकाश शर्मा, पार्था दास एवं देबाजीत शर्मा

भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

प्रकृति–पूजा, संरक्षण एवं नैतिकता भारतीय परंपराओं का एक अविभाज्य हिस्सा रहा है। जिससे लोगो के जीवन में एकता के दर्शन होते है। सौभाग्य से अब दुनिया में प्रकृति के प्रति मानव जिम्मेदारी के बारे में नई शुरुआत के लिए कुछ करने की जरूरत है। अतीत में राजाओं द्वारा कई वन्य जीव क्षेत्रों और राष्ट्रीय पार्कों की घोषणा की गयी जोकी वन्य जीवों का शिकार कम करने और वन्य जीवन संसाधन के विकास के लिये प्रोत्साहित किया गया। भारत में अनेक वानस्पतिक और प्राणी उद्यान है जो कि पारिस्थितिक तंत्र की वृद्धि की दिशा में काम कर रहे है और अवैध शिकार को काफी हद तक बंद कर पाये है।

भारत में मत्स्य विकास हेतु जल सम्पदा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, जिसमें मत्स्य विकास का इस सम्पदा के समुचित उपयोग से मत्स्य उत्पादन में वृद्धि, ग्रामीण आँचल में प्रोटीनयुक्त आहार की उपलब्धता, रोजगार एवं अतिरिक्त आय के साधनों का सृजन तथा निर्बल एवं पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों का आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान किया जा सकता है। वर्तमान समय में मत्स्य पालन का व्यवसाय तथा मनोरंजन में शिकार के प्रति जनता की आकांक्षाये प्रबलता से बढ़ रही हैं, इस कार्य के प्रति अशिक्षित वर्ग के साथ–साथ शिक्षित वर्ग भी आगे बढ़ कर मत्स्य पालन और संरक्षण हेतु प्रोत्साहित हुआ है। भारत में मनोरंजनात्मक मात्स्यिकी अर्थात शिकारमाही के लिए सबसे अच्छा समय अक्टूबर से नवम्बर का और फरवरी के मध्य से मई तक होता है, जबकि नदियों में हर तरह की मछलियां भर–पूर रहती हैं। मछली पकड़ने वालों की सबसे पहली पसंद महासीर का शिकार करने में होती है जो कि मछुवारों के भी पसीने छुटा देती है। दक्षिण भारत में मत्स्य–आखेट के लिए अप्रैल से सितम्बर का समय उपयुक्त होता है। विभिन्न प्रकार की मछलियों के प्रजनन काल की जानकारी होना आवश्यक है क्योंकि इस काल में मछली मारने की अनुमति नहीं होती। हिमालय क्षेत्र में दिसम्बर से मार्च के बीच बेहद ठंड होने के कारण मौसम ठीक नहीं कहा जा सकता है। उत्तरकाशी में डोडीताल में प्रायः हर मौसम में मछली पकड़ना संभव होता है। विकल्प के तौर पर ऋषिकेश क्षेत्र, जिम कार्बेट पार्क क्षेत्र में रामगंगा और शारदा नदियाँ भी हैं।

ताल के किनारे मछली मारने वालों को देखना कई बार गहन अनुभूति देता है जबकि मछली पकड़ना अब उच्च वर्ग के पर्यटकों के शौक में शामिल हो चुका है। गर्मियों का सीजन शुरू होने के साथ ही पर्यटक उत्तरी भारत के पर्यटन स्थलों और पहाड़ों की तरफ रुख करने लगते हैं। पर्यटकों का एक खास वर्ग शहरों की गहमागहमी से दूर झील और नदियों के तट पर मछलियों की हलचल के बीच उन्हें पकड़ने का रोमाँच महसूस करना चाहता है। यही वजह है कि पर्यटन और मछली पकड़ना एक नए किस्म के रिश्तों में जुड़ने लगे हैं। पर्यटन व्यवसाय से जुड़े कुछ आयोजक एंगलिंग के लिए आठ–दस दिन के पैकेज टूर भी चला रहे हैं। गर्मियों का सीजन शुरू होने के साथ ही हिमालय क्षेत्र की नदियों में मछली पकड़ने के शौकीनों की हलचल दिखाई देने लगती है। देश के कई भागों से मछलियों को पकड़ने के रोमांचक खेल में रुचि रखने वाले लोग प्रकृति की गोद में बैठ कर साफ पानी में मछलियों की गतिविधियों के बीच अपनी इच्छा के अनुरूप मछलियों को पकड़ने की चुनौती से निबटने के लिए पहुंचते हैं। सुनहरी महाशीर और ट्राउट मछलियों को अपने काँटे में फँसाने व कब्जे में करने का रोमांचक खेल में उनके कई घंटे कब बीत जाते है पता ही नहीं चलता। कई स्थानीय लोग भी अपने भोजन के लिए मछलियाँ पकड़ने में व्यस्त देखे जा सकते हैं। ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में ठंडे पानी में रहने वाली मछलियों के खास ठिकानों तक पहुँचने के लिए टूर आयोजकों या स्थानीय लोगों की मदद लेना एक आवश्यकता बन जाता है।

भारत में आखेटक एवं पारिस्थितिकी पर्यटन

पर्यटन में मछलियों के संरक्षण के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अनेक सकारात्मक पहलू है। यह समुदाय विशेष की उत्पत्ति तथा पर्यटकों के बीच आवासी सम्बन्धों को प्रगाढ़ बनाता है। मनोरंजनात्मक खेलों में भारत में साहसिक पर्यटन गतिविधियों के अन्तर्गत मनोरजनात्मक खेलों में सबसे अधिक मांग शिकारमाही की है। भारत में 31 मिलियन रोजगार प्रदान करता है। विदेशी पर्यटकों के आगमन से 2015 में औसतन 1,35,193 करोड़ रूपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुयी जिससे राष्ट्रीय आय में 45% की औसत आय में वृद्धि हुयी। शिकारमाही तथा पारिस्थितिकी–पर्यटन से जुड़ी आर्थिक गतिविधियाँ विशेष रूप से ग्रामीण–पर्यटन के लिए लाभप्रद है। आई.एच.आर ने 8,243 किलोमीटर लम्बी धाराओं और नदियों, 20,500 हेक्टेयर प्राकृतिक झीलों, 50,000 हेक्टेयर प्राकृतिक और मानव निर्मित जलाशयों तथा 2500 हेक्टेयर खारे पानी के झीलों के रूप में उच्च जल क्षमता के साथ पर्वतीय क्षेत्रों में संपन्न जल संसाधनों को प्राप्त किया, जिनमें स्वदेशी और विदेशी ठंडे पानी की मछलियों की प्रजाति शामिल हैं। इनमें जीन टॉर (ग्रे), निओलिसोचिलस (मैकलेलैंड) और नाजीरीटर (मैकलेलैंड), ट्राउट सल्मो ट्रुटा फेरियो (ब्राउन ट्राउट) और ओकोरिहन्चस मायकेस (रेन्बो ट्राउट), स्वदेशी हिम ट्राउट (साइजोथोरेसिड) कोई कार्प और कैटफिश शमिल है। ऊर्ध्वाधर क्षेत्रों में ठंडे पानी के मत्स्य पालन पारिस्थितिक तंत्र और आर्थिक दृष्टि से दोनों महत्वपूर्ण हैं और ऊपरी क्षेत्रों के पोषण सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह क्षेत्र 65 प्रतिशत जंगल और पहाड़ी इलाकों को बढ़ावा देता है जिसमें कुछ बेहतरीन नदी प्रणाली का निर्माण होता है, जो उच्च हिमालयी क्षेत्र के ग्लेशियरों से उत्पन्न होता है, बसंत ऋतु वाले धाराओं और उप–उष्ण ाकटिबंधीय सदाबहार वनों की नदियां होती हैं।

मछली पकड़ने का खेल बहुत ही मनोरंजनपूर्ण है तथा यह एक शौक है। अधिकतर लोग अपने खाली समय में मछली पकड़ने का आनन्द लेते है। नदियों, बाढ़ के मैदानों, झीलों, जलाशयों, तालाबों और निम्न क्षेत्रों में स्थित विशाल और विविध मत्स्य संसाधन मछली पकड़ने के लिए जबरदस्त अवसर प्रदान करते है। मछली पकड़ने के लिए सामान्य रूप से एक छड़ी, रील, रेखा, हुक और किसी भी प्रकार का इस्तेमाल किया जाता हैं।

विश्व प्रसिद्ध आखेट–योग्य मछली के रूप में महाशीर का महत्व भली–भाति ज्ञात है। यह मछली अनेक रंगों में पायी जाती है जैसे तांबा, सुनहरा, चांदी के समान तथा गहरे काले रंग में। महासीर भारत, पाकिस्तान, म्यामार, बांगलादेश, श्रीलंका तथा थाईलैंड में पायी जाती है। सात विभिन्न पाई जाने वाली प्रजातियों में प्युटी टोरा (Putitora) अथवा गोल्डन (Golden) महाशीर सबसे अधिक पसंद की जाती है क्योंकि यह प्रजाति मुख्य मात्स्यिकी का पूरे हिमालयी क्षेत्र में उत्तम साधन है। इस प्रजाति को ग्रेहाऊंड (Greyhound) अथवा मोटे ओष्ठ वाली (Thick lipped) महाशीर भी कहा जाता है। इसका 70 से 80 किलो ग्राम का अधिकतम भार होता है। आखेटक सुनहरी महाशीर को आखेट योग्य मछलियों में से सबसे बेहतर समझते हैं। यह असंख्य भारतीय और विदेशी दोनों शिकारियों के लिए मनोरंजन का एक प्रमुख स्त्रोत है। थॉमस ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "द रौड इन इंडिया" में क्रीड़ा मात्स्यिकी के लिहाज से महाशीर को सालमन (Salmon) से कहीं बेहतर बताया है। स्थानीय मछुआरों के लिए भी महाशीर काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका बड़ा आकार, सुडौल शरीर, ऊंचा आर्थिक मूल्य सेल्फ लाइफ होती है।

महाशीर एशियाई नदियों के लिए 'पोटामॉड्रोमस'' मीठे पानी की मछली है यह आर्थिकीकि, मनोरंजन एंव संरक्षण की दृष्टि से प्रमुख प्रजातियां हैं। महाशीर तीन जीन से संबंधित हैं, अर्थात् टोर (ग्रे), नेओलिसोचिलस (मैकलेलैंड) और नाजिरीटोर (मैकलेलैंड)। महाशीर भारत में आखेटकों के बीच सबसे लोकप्रिय शिकारी मछली है इसे ताजे पानी की मछली के रूप में सबसे अधिक लड़ाकू होने के लिए जाना जाता है और भारत में ताजे पानी के पर्याप्त जल संसाधन है। भारतीय महाशीर ने ब्रिटिश तथा साथ ही साथ दुनिया की विभिन्न प्रकार के आखेटकों को भी आकर्षित किया हैं। विशाल ब्रह्मपुत्र नदी की कई सहायक नदियाँ इस खेल के लिए एक खजाना हैं। इनमें से कुछ नदियां जैसे– सियांग, कमला, सुबनसिरी, सियॉम, लुइट, दिगम,

बोरई, जिया भोरली, धनसिरी, डोयांग, दिखू, झांजी, तीस्ता और रांगित आदि मुख्य हैं।

हिमालय क्षेत्र की नदियों में ब्यास और इसकी सहायक नदियों व हिमाचल प्रदेश की गिरि नदी, हरियाणा के ताजेवाला, उत्तराखंड में डाक पत्थर के बीच यमुना, ऋषिकेश तथा टिहरी के बीच रामगंगा और इसकी सहायक नदियाँ, काली, सरयू, पूर्वी एवं पश्चिमी रामगंगा, पूर्वी एवं पश्चिमी नयार, सौंग एवं कोसी, जम्मू–कश्मीर में चेनाब एवं उसकी सहायक नदियाँ, तावी इखनी नाला पूर्वोत्तर क्षेत्र में जिया भोरेली, दिबांग, सुबांसिनी और मानस नदियाँ महाशीर की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इनके अलावा कुमाऊँ के तालाबों–भीमताल, नौकुचियाताल, खुर्पाताल, नल दमयंती ताल और सात ताल में पर्याप्त संख्या में महाशीर हैं।

उत्तराखंड में पंचेश्वर में काली और सरयू नदी के पास भी कुछ सबसे अच्छे स्थान हैं जहां पर ये मछली बहुतायत है। कर्नाटक में कावेरी नदी की सहायक नदी भीमेश्वरी पर बेंगलूर के पास डोडडमकाली और गैलिबोर में मछली पकड़ने के शिविर स्थापित किए गए थे। पूरे विश्व के अधिकतर आखेटक इन आरक्षित स्थलों में वर्ष भर आखेट का आनंद लेते है। महाशीर के वास स्थलों और जंगल के निकटवर्ती नदी के हिस्सों की रक्षा करने की आवश्यकता को महसूस करते हुए, दक्षिण भारत के वन्यजीव एसोसिएशन (वासी) ने उनका पुनर्वास किया और मछली पकड़ने के शिविरों में नदी के किनारे पर गश्त करने के लिए ज्यादातर शिकारियों को गाइड और गार्ड के रूप में नियुक्त किया गया है तथा 'कैच–एंड–रिलीज' अभ्यास को अपनाया गया है।

एक्सोटिक ट्राउट

ट्राउट जैसे सल्मो ट्रुटा फारियो (ब्राउन ट्राउट) और ओकोरहिन्चस मायकिस (रेन्बो ट्राउट), साल्मोनिडी (Salmonidae) परिवार की सदस्य है। पर्वतीय जल स्त्रोतो में मत्स्य पालन के साथ ही यह खाद्य मछलियों के लिए पूरे विश्व में पसंदीदा महत्वपूर्ण प्रजातियां हैं। जम्मू और कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश की कई नदियों, झरनों और बर्फली नदियाँ ट्राउट मछली पकड़ने, मनोरंजन पूर्ण शिकार करने एवं प्राकृतिक सुंदरता, आदि के लिए महत्वपूर्ण हैं। ट्राउट मछली का मनोरंजन शिकार करने के लिए जम्मू–कश्मीर की बर्फीली नदियाँ, हिमाचल प्रदेश में सतलुज और ब्यास के ऊपरी हिस्से उत्तराखंड की पिंडर व भागीरथी आदि नदियाँ तथा पूर्वात्तर की कुछ झीलें प्रमुख आकर्षण का केन्द्र हैं। देर से ही, अरुणाचल प्रदेश के दूरदराज के जिलों में ट्राउट का प्रचार प्रसार बहुत बाद में किया गया है जबकि कुछ बड़े ऊपरी जलाशयों (सेला झील, तांगट्सर झील, पीटीएसओ झील, नागला झील, थैम्पिसम झील, क्लेमटा) में अच्छी तरह से स्थापित किया गया है, जो कि आईसीएआर–शी.मा.अनु. निदेशालय के तत्वाधान में एवं राज्य मत्स्य विभाग के सहयोग से, अरुणाचल प्रदेश सरकार ने 1994–1995 के पश्चात शुरू की गई। इस प्रकार की झीलों को उनके नाम के आधार पर नही जाना जा सका साथ ही दुर्गम क्षेत्र एवं सड़क संपर्क न होने के कारण अन्य लोगों से संपर्क नहीं किया जा सका। अन्ततः यह महसूस किया जा सकता है कि ये झीलें आगंतुक पर्यटकों के लिए मनोरम है और ट्राउट का प्रमुख वास–स्थल है। मनोरंजकपूर्ण मत्स्य पालन कई विकल्प उपलब्ध कराता हैं और देश के दूरस्थ क्षेत्रों में संपन्न पर्वती जनता को पौषणिक सुरक्षा के अवसर प्रदान करता हैं। पश्चिम सियांग जिले में एक और प्रमुख नदी है, जो कि सिओम नदी (स्थानीय रूप से यर्गेप चू) के रूप में जानी जाती है। यह मेन्चुखा की बस्ती के मध्य से चीन की सीमा के ऊपर बहती है। यह नदी, घाटी में जाकर एक सुरम्य परिदृश्य प्रदान करती है। यह विदेशी ब्राउन और रेन्बो ट्राउट के वासस्थल के लिए जाना जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों के लोगो के साथ मिलकर, अरुणाचल प्रदेश राज्य में ट्राउट की तलाश में आखेटक सियुम नदी में आते है साथ ही आखेटको द्वारा इस नदी की बहुत प्रशंसा भी की गई है। अरुणाचल प्रदेश के मौजूदा ट्राउट हैचरियों को सुदृढ़ करने के लिए आईसीएआर–डीसीएफआर द्वारा प्रयास किए गए हैं और नगालैंड में एक बीज उत्पादन केन्द्र स्थापित किया है साथ ही मनोरंजक मात्स्यिकी के लिए संसाधनों को विकसित किा है तथा लोगो की आजीविका को भी सुरक्षित किया गया है।

स्नो ट्राउट

बर्फीले क्षेत्र में मनोरंजक मछली पकड़ने में स्नो ट्राउट (साइजोथौरेक्सिड्स) भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अरुणाचल प्रदेश के पश्चिम कामेंग जिले में

दिरांग चू नदी के किनारे नल और लाइनें सामग्री में मछली पकड़ना ''मोना समुदाय'' के सर्वाधिक प्रचलित मनोरंजक तरीको में से एक है। मछली पकड़ने की यह विधि चयनात्मक है और विशेष रूप से पूर्वी हिमालय के गहरे पूल और अशांत लोटिक पानी में रहती है।

मत्स्य अवलोकन

मछली खाना न केवल मानव स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद हो सकता है, बल्कि उन्हें मनोरंजन के लिए भी रखा जा सकता है। कई शोधकर्ताओं की रिपोर्टों के मुताबिक मछली को देखकर कई सकारात्मक शारीरिक लाभ होते हैं जैसे रक्तचाप में अधिक बूंदें, स्थिर हृदय की दर, बेहतर मूड और मानसिक विश्राम आदि मिलता है। कई ऊर्ध्वाधर झीलों, धार्मिक और संरक्षित टैंक, नदी की धारा और पूल मछली देखने वाले स्थल के उदाहरण हैं, जो न केवल पर्यटकों को आकर्षित करते हैं बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से कुछ लुप्तप्राय मछलियों जैसे महासीर के संरक्षण की सुविधा प्रदान करते हैं। देश के कई पर्यटक स्थलों में इस प्रकार के मछली देखे जाने वाले स्थल प्रदर्शित किऐ जाते हैं। महाशीर (टॉर टॉर, और टॉर प्यूटीटोरा) को कुमाऊं की झीलों यथा–नैनीताल, भीमताल, नौकुचीलाल और सातताल और नल दमयंती जैसे तालों में सबसे अधिक देखा जा सकता है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में एक पारिस्थितिकी–पर्यटन के महत्व की दृष्टि से वहां की झीलों और टैंकों को यथा अरुणाचल प्रदेश के मेहरो झील (1640 मी. एएसएल) और निचले दिबांग घाटी जिले में सैली झील (435 मी एएसएल), पश्चिम सियांग में झील मेचुका (1892 मी एएसएल), गेकर सिनीयध्गंगा झील (750 मीटर एएसएल) और शिलाँग के Papumpare जिले में वार्ड झील (1496 मीटर एएसएल) को महाशीर के लिए वरदान माना जाता है। आईसीएआर–डीसीएफआर असम के नॉगांव में जासिंगफा एक्वा टूरिज्म सेंटर में महाशीर के ब्रूड बैंक को विकासित करने में सफल रहा है। मछलियों और जल प्रबंधन के लिए पर्याप्त पोषण के साथ महाशीर मछली को बचाने के लिए विशेष ध्यान रखा गया है।

टैंकों और तालाबों में मछली पकड़ने का शुल्क

मछली पकड़ने का शुल्क मेघालय में विकसित एक अवधारणा है। मुख्य रूप से जनजातियां खासी, जैंतिया और गारो द्वारा बसे हुए राज्य, जो मनोरंजन और आजीविका सुरक्षा के लिए उनके परंपरागत मछली पकड़ने के साधन है वह बहुत व्यवहारिक और आकर्षक हैं। राज्य की कई प्राचीन नदियां, धाराऐं और झीलें चॉकलेट महाशीर (निओलिसोचिलस हेक्सागोनोलीपिज और एन हेक्सास्टिचस) और कैटफिश आदि मनोरंजन की दृष्टि से लिए एक्वा टूरिज्म स्पॉट को विकसित करने के लिए जबरदस्त अवसर प्रदान करते हैं। स्थानीय समुदाय के तालाबों और टैंकों में मछली पकड़ने के शुल्क दैनिक या साप्ताहिक भुगतान के आधार पर लिया जाता हैं। जो मई से अक्टूबर के महीने के दौरान संचालित किया जाता है। मत्स्य पालन प्रतियोगिताओं का भी एक वर्ष में एक या दो बार किया जाता है, जिसमें 15,000‰– से 1,000,000‰– के पुरस्कार राशि रखते हैं। खासी पहाड़ियों के माइलम, स्मिट, मारीग, उम्सनिंग और लाइटलींगकोट से मछली पकड़ना बहुत आम है।

मछली अभयारण्य

मेघालय राज्य एक्वाकल्चर मिशन (एमएसएएम) के तहत मेघालय राज्य में विकसित एक और मनोरंजक सुविधा मछली अभयारण्य हैं, जहां नदियों तथा नदियों में छोटे बांध का निर्माण करने का प्रस्ताव है। जाहिर है जहां किसी भी प्रकार की अवैध मछली दोहन को रोका जा सकता है। इस दिशा में कई स्थानीय समुदाय, समाज, स्वयं सहायता समूह आदि आगे आ गए हैं और इस सपने को वास्तविकता में बदलने के लिए विभाग के साथ हाथ मिलाते हैं। इनमें से आज 54 मछली अभयारण्य कार्यान्वयन की प्रक्रिया में हैं।

ये अभयारण्य जलीय जैव–विविधता को बनाए रखने उनमें वृद्धि करने, प्रजनन स्थलों को उपलब्ध कराते हैं, यह प्रजातियों की रक्षा करते हैं, खतरे वाली प्रजातियों की प्रचुरता में वृद्धि करते हैं, साथ ही समाप्त होते भण्डार में वृद्धि करते हैं तथा ग्रामीण लोगों को लाभान्वित करने एवं उनके जीवन स्तर में सुधार के लिए पर्यटन स्थल के रूप में सेवा भी करते हैं। इन अभयारण्यों से ग्रामीण लोगों को फायदा होता है और मछलियों को देखने एवं मछली पकड़ने शुल्क से उनकी आजीविका में सुधार होता है। राज्य के कुछ मछली अभयारण्य जैसे महाशीर मछली अभयारण्य, नोंगबरेह (पश्चिम जयंतिया हिल्स), असिम बिबरा मछली अभयारण्य (पूर्व गारो हिल्स), डेकु डोगैग मछली

अभयारण्य (दक्षिण गारो हिल्स), वाची वरी (वेस्ट गारो हिल्स), सांगल वारी (पश्चिम गारो हिल्स) इत्यादि प्रसिद्ध हैं।

निष्कर्ष

मछली की संख्या को बनाए रखना अथवा उनके भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों को पुर्नस्थापित करना इत्यादि के उद्देश्य से जलस्त्रोतों के प्रबंधन को जलीय संसाधनों का सरंक्षण कहा जाता है। इसे सहिष्णुता द्वारा या क्रियाशील होकर किया जा सकता है। पहली स्थिति में क्षेत्रों को सुरक्षित कर उनकी यथास्थिति बनाए रखना है जबकि दूसरी स्थिति में मछली पकड़ने से हुई हानि को कम करके मछली की पकड़ को बनाए रखने के लिए प्रयास किये जाते हैं। निर्धारित स्थानों की देखरेख, कुछ क्षेत्रों को सुरक्षित जल क्षेत्र घोषित करना, नदियों में मछली पकड़ने पर प्रतिबन्ध लगाना, कुछ क्षेत्रों को केवल कुण्डी–डोरी के लिए आरक्षित करना, प्रगहण और रिलीज अभ्यास अपनाना, प्रगहण लिमिट लागू करना भी सहिष्णुता से कार्य करने में आते हैं। किसी विशेष प्रकार की मछली की वृद्धि तथा पुनर्वास के लिए यह आवश्यक होता है। लोग डायनामाइट के प्रयोग, बिजली के करंट व ब्लीचिंग पाउडर आदि के इस्तेमाल से बड़ी मात्रा में मछलियाँ मारते हैं। अतएव अधिक संख्या में परमिट जारी कर पर्यटकों को आकर्षित किया जाना चाहिए, ताकि घातक तरीकों से महाशीर के शिकार की प्रवृत्ति को रोका जा सके।

यद्यपि कई स्थलों में मनोरंजक पर्यटन की बहुत संभावनाएं हैं, फिर भी अभी तक यह अपेक्षित स्तर तक विकसित नहीं हुआ है। आखेट योग्य (शिकार माही) क्षेत्रों की पहचान, देश के विकास सहित खेल मत्स्य पालन के लिए नीति तैयार करने की एक तत्काल आवश्यकता है। मछली पकड़ना एक आकर्षक पर्यटन है, इसको बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय प्रचार और जागरूकता जो इसके विकास के लिए आवश्यक है पर तत्काल ध्यान देने की जरूरत है। मनोरंजक मत्स्य पालन के लिए सहायता जारी रखने, पारिस्थितिकी और संरक्षण, उपयुक्त नीतियों और दिशा–निर्देशों के विकास के माध्यम से एक व्यवहारिक दृष्टिकोण दिखाई देता है। मछलियों के संरक्षण हेतु को लोगों में जागरूकता बढ़ाना है। मछलियों के जरिए पर्यावरण के साथ उन्हें आजीविका और अर्थव्यवस्था से जोड़ना है।

पकड़ी गयी विशालकाय सुनहरी महाशीर

विभिन्न स्थलों पर महाशीर का आखेट करते हुए पर्यटक

अरूणाचल प्रदेश के सुबनसीरि जिले में मछली अवलोकन हेतु प्लेटफार्म

प्रसंस्करण

मछलियों के मूल्य वर्धित उत्पाद

लक्ष्मी प्रसाद एवं जगपाल

मात्स्यिकी महाविद्यालय नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, फैजाबाद

मछली में उच्चगुणवत्ता युक्त प्रोटीन पाया जाता है, जो कि स्वादिष्ट होने के साथ – साथ सुपाच्य भी होता है। कुछ छोटे आकार की मछलियो से मूल्य वर्धित उत्पाद जैसे मछली सूप पाउडर, मछली का आचार, मछली के पकौडे, मछली के पापड़, मछली के कटलेट बनाये जा सकते हैं। मछली की तुलना में इन उत्पादों को अधिक समय तक खाने के लिये रखा जा सकता है साथ ही साथ इन मूल्य वर्धित उत्पादों से अच्छा लाभ भी प्राप्त किया जा सकता है।

मछली सूप पाउडर बनाने की विधि

मछली के मांस को उबलते हुये पानी में पका लेते हैं। मांस को हाथों से दबाकर पानी बाहर निकाल देते हैं। प्याज को तेल में भूनते हैं। इसके बाद मांस को एवं प्याज को मिक्सी में पीस लेते हैं। स्टार्च को इसमें मिलाते हैं एवं मिक्सी (ग्राइंडर) में फिर से पीसते हैं। अन्य अवयव भी मिलाकर पीसते हैं। पिसे हुये पेस्ट को एल्यूमीनियम की ट्रे में 0.5 सेमी0 मोटी परत में रखकर 70^{0}C से 80^{0}C तापमान पर रखकर सुखाते हैं, जब तक कि नमी घटकर 10 प्रतिशत न रह जाये। सूखे हुये पदार्थ को पुनः पीसकर पाउडर के रूप में बनाते हैं एवं जिसको छानकर सूखे कांच की बोतल में 1 वर्ष तक रख सकते हैं।

तैयार किये हुये 5 ग्रा0 पाउडर को 10 मिली0 ठंडे पानी में मिला देते हैं एवं इसमे 90 मिली0 गरम पानी डालते हैं। 1–2 मिनट तक खौलते हैं। यह सूप उपयोग के लिये तैयार हो जाता है।

मछली का मांस	750 ग्रा0
प्याज	750 ग्रा0
वसा/तेल	100 ग्रा0
नमक	170 ग्रा0
धनिया पाउडर	20 ग्रा0
स्टार्च	250 ग्रा0
दूध पाउडर	100 ग्रा0
चीनी	30 ग्रा0
काली मिर्च पाउडर	15 ग्रा0
लहसुन	05 ग्रा0
एसकोर्बिक एसिड	1.5 ग्रा0
कार्बोक्सी मिथाइल सेल्यूलोज	3 ग्रा0
मोनोसोडियम ग्लूटामेट	10 ग्रा0

मछली का अचार

मछली के टुकडों को 2% नमक व हल्दी के पाउडर में मिलाकर लगभग दो घंटे तक रखते हैं, फिर इसे कम तेल मे भूनकर रख लेते हैं। अन्य सामाग्री मिर्च, अदरक, सरसों आदि को भूनते हैं। इसमें मछली के टुकडों को अच्छी तरह मिला देते हैं। ठंडा होने पर सिरका, लौंग, इलाइची पाउडर, चीनी, बचा हुआ नमक आदि मिला देते हैं। इसको कांच के डिब्बे में रखकर एसिड प्रूफ ढक्कन से ढंक देते हैं। नमी से बचाने के लिये अचार के ऊपर तक तेल की एक पतली परत बना देते हैं।

मछली के पकौड़े

सबसे पहले मछली को साफ कर 20–30 मिनट तक पानी में उबाल लेते हैं।

मछली का मांस	1 किग्रा0
नमक	25 ग्रा0
तेल	125 मिली0
हरी मिर्च	15 ग्रा0
अदरक	15 ग्रा0
प्याज	250 ग्रा0
आलू उबला हुआ	500 ग्रा0
काली मिर्च	3 ग्रा0
लौंग पिसा	3 ग्रा0
सफेद इलाइची	2 ग्रा0
हल्दी	2 ग्रा0
अण्डा या बेसन	नग 4/20 ग्रा0
ब्रेड का चूरा	200 ग्रा0
सिरका	2 चम्मच
टमाटर सॉस	2 चम्मच

मछली के शल्क, हड्डी, खाल आदि को निकालकर अलग कर देते हैं। फिर उबले हुये मांस मे नमक व हल्दी पाउडर को अच्छी तरह मिलाते हैं। प्याज को तेल में भून लिया जाता है। फिर उसमें मिर्च और अदरक को भी भून लेते हैं। साथ ही पके हुये मांस को अच्छी तरह मिला लेते हैं। उसके बाद उबले एवं कुचले हुये आलू को मसाले के साथ मिलाकर मत्स्य मांस के साथ मिला देते हैं। इस मिक्स्चर के 35–40 ग्रा0 के गोले बनाकर फेंटे हुये अण्डों में डुबोकर ब्रेड के चूरे में लपेटकर तेल में फ्राई कर लेते हैं।

मछली के पापड़

मछली के कांटे रहित मांस को 0.75 लीटर पानी के साथ मिक्सी में 10 मिनट तक मिलाते हैं। इसमें मक्के का आटा व साबूदाना पाउडर, नमक तथा बचे हुये 1 ली0 पानी को अछी तरह मिला लेते हैं एवं 1 घंटे तक रख देते हैं। इसको थाली में 1–2 मिमी0 मोटाई की तह में अच्छी तरह से फैला लेते हैं। इसको भाप में 3–5 मिनट तक पकाते हैं। ठंडा करने के बाद 45-50^{0}C तक सुखा लेते हैं। इन पापडों को काटकर तलने के बाद खा सकते हैं।

मछली का मांस	1 किग्रा0
मक्के का आटा	500 ग्रा0
साबूदाना पाउडर	1 किग्रा0
नमक	25 ग्रा0
पानी	1.75 ली0

मछली का आचार

मछली के टुकडों को 2% नमक व हल्दी के पाउडर में मिलाकर लगभग दो घंटे तक रखते हैं। फिर इसे कम तेल मे भूनकर रख लेते हैं। अन्य सामाग्री मिर्च, अदरक, सरसों आदि को भूनते हैं। इसमें मछली के टुकडों को अच्छी तरह मिला देते हैं। ठंडा होने पर सिरका, लौंग, इलाइची पाउडर, चीनी, बचा हुआ नमक आदि मिला देते हैं। इसको कांच के डिब्बे में रखकर एसिड प्रूफ ढक्कन से ढंक देते हैं। नमी से बचाने के लिये अचार के ऊपर तक तेल की एक पतली परत बना देते हैं।

मछली के टुकडे	1 किग्रा0
स्रसों	10 ग्रा0
हरी मिर्च	50 ग्रा0
लहसुन	200 ग्रा0
हल्दी का पाउडर	2 ग्रा0
अदरक के टुकडे	150 ग्रा0
मिर्ची पाउडर	20 ग्रा0
एसीटिक एसिड	400 मिली0
नमक	60 ग्रा0
चीनी	10 ग्रा0
पिसी हुयी काली मिर्च	2.5 ग्रा0
वनस्पति तेल	210 ग्रा0

मछली का कटलेट:

1 किग्रा0 मछली को उबालकर उसका मीट निकालकर 500 ग्रा0 लहसुन, आलू के पेस्ट के साथ मिलाते हैं। अदरक, लहसुन, हरी मिर्च को पीसकर मिश्रण बना लेते हैं। इसमें सिरका, चिली सॉस, कतरी हुयी पुदीना, हरी धनिया एवं नमक को अच्छी तरह मिलाते हैं। दोनों मिश्रण को मिला लेते हैं। गूंथे हुये मिश्रण के आकार अनुसार लंबे

चपटे टुकडे बनाकर बेसन के घोल में डुबो लेते हैं। इसको रस्क/ब्रेड के पाउडर में लपेटकर तेल में तल लेते हैं। मछली के इन मूल्य वर्धित उत्पादों को बनाकर अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है।

मछली का मांस	1 किग्रा0
आलू	500 ग्रा0
रस्क पाउडर	50 ग्रा0
लहसुन	10 ग्रा0
अदरक	10 ग्रा0
हरी मिर्च	10 ग्रा0
नमक	स्वादानुसार

सिरका	1 चम्मच
अजीनो मोटो	1 चम्मच
चिली सॉस	2 चम्मच
पुदीना पत्ती	20 ग्रा0
हरी धनिया	20 ग्रा0
अण्डा	1 नग
बेसन	200 ग्रा0

चगुनियस चगुनियों

चगुनियस चगुनियों गंगा तथा उत्तरी तथा उत्तर-पूर्वी भारत में ब्रह्मपुत्र के सहायक नदियों, नेपाल तथा बंग्लादेश तक पायी जाती है। यह मछली आमतौर पर ऐसी बड़ी नदियों में पायी जाती है। जहां पर नदियों का नितल पथरीला, जल स्वच्छ एवं तेज बहाव वाला तथा कम अथवा न्यून वनस्पति वाला क्षेत्र हो।

भारत में मत्स्य पालन व मात्स्यिकी में महिलाओं की भूमिका

नीतू शाही
भा.कृ.अनु.प.—शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

कुछ समय पहले तक भारतीय महिलाओं की मछली पालन में भागीदारी सिर्फ खुदरा बिक्री व सरल प्रसंस्करण के तरीको तक सीमित रही है। आधुनिक मछली प्रसंस्करण उघोग के उदगमन ने असंख्य महिलाओं को रोजगार के नऐ आयाम दिये है। उघोग के रुप में मत्स्य पालन का हाल में ही विकास हुआ हैं, जिसमें महिलाओं का कोई भी महत्वपुर्ण योगदान अंकित नहीं हुआ हैं। हाल के दशक में शिक्षा में विकास के कारण महिलाओं ने सभी क्षेत्रों में अपना वर्चस्व कायम किया है, जिसमें विभिन्न मछली पालन क्षेत्र जैसे अनुसंधान, विकास, प्रशिक्षण, विस्तार व व्यवसाय सम्मिलित हैं। हालांकि महिलाओं की मात्स्यिकी में सहभागिता सराहनीय रही है, लेकिन फिर भी विकास के लिए पर्याप्त गुंजाइश है। मात्स्यिकी में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। वे मत्स्य पालन के विस्तृत कार्यकलापों में शामिल है जैसे मत्स्य पालन में मजदूर सवेतन व अद्त की तरह विभिन्न फसल के पूर्व व बाद की गतिविधियों में सहयोगिता साथ ही निरंतर विभिन्न संस्थानों व अभिकरणों के संग सहकारिता ज्यादातर देशों में अधिकांश महिलाऐं ही अंतर्देशीय मत्स्यिकी में संलग्न हैं। केरल, तमिलनाडु, आंध्रा प्रदेश, इत्यादि सीफूड प्रसंस्करण संयंत्रों में श्रमिकों के रुप महिलाऐं कार्यरत हैं। झीगें छीलने जैसे परिश्रमी कार्यों में भी महिलाओं का बोल—बाला हैं। महिला मछली विक्रेता के रुप में महिलाओं ने हमेशा तटीय गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिसमें की जाल बुनने के साथ—साथ मछली का संचालन, निमकाई, सूखाना व विपणन भी शामिल है। पिछले कुछ वर्षो में समुद्री तटों में मछली उत्पादन में गिरावट रही हैं। जिसके चलते विक्रेता को अपने उत्पाद थोक बाजार या किसी दूर दराज बंदरगाह ले जाना पडता है। इस तरह की व्यवस्था में मछली का लेन देन सिर्फ साख में आश्रित नही रहता है। अधिकांश महिला मछली विक्रेता गरीब परिवारों से आती है और आर्थिक तंगी के चलते वे दोस्तो, रिश्तेदारों व साहूकारों से विभिन्न ब्याज दरों में ऋण लेते है।

शुरुआत से ही पुरुष समकक्षों के साथ कुछ महिला वैज्ञानिको को मत्स्यिकी विभाग के विभिन्न सूबे व केद्रीय अंनुसंधान केंन्द्रो में नियुक्त किया है। मत्स्यिकी में महिलाओं का सबसे ज्यादा योगदान विपणन 41.8 प्रतिशत है। इसके साथ ही कुल जनसंख्या जो कि मत्स्यिकी में संबधित है। उनमें विपणन में 73.6 प्रतिशत व प्रौधोगिकी में 75.7 प्रतिशत महिलाऐं है।

भारत में समुद्री क्षेत्रों में महिला मछुआरों की संख्या 11 लाख तक है। जो की 2500 तटीय गॉवों में बसे हुऐ है। सम्पूर्ण देशों में महिलाओं को कई प्रकार के कष्टों का सामना करना पडता है। जिसमें आर्थिक तंगी सबसे उपर है। कुछ महिलाऐं जो मत्स्य पालन में बढ चढ कर हिस्सा लेती हैं, उन्हें भी कई प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पडता है। उदाहरण के लिए रोजगार व वेतन की गांरटी न होना, लधु मत्स्य पालन में मनमाने नियम होना इत्यादि। महिला मछुवारों की समस्या यही तक सीमित नही है बल्कि मछली का विनाश शील स्वभाव, खराब तथा मंहगा परिवहन आदि भी मछली पालन में महिलाओं को बाधित करते है।

वर्तमान में तटीय मत्स्य पालन में महिलाओं की भूमिका तटीय जल कृषि में महिलाओं की भागीदारी इस समय काफी सीमित है। कुछ विशिष्ट गतिविधिया इस प्रकार से है:

1 झीगों का ज्वारनदमुख व पश्र जल से संग्रह करना (पश्चिम बंगाल, आंध्रा प्रदेश व केरल में देखा गया है)।
2 तालाब निमार्ण में श्रम।
3 सीमित छोटे तालाबों का प्रबंधन झीगां पालन में जैसे चिल्का झील में देखा गया है।
4 झीगों की तालाब में खेती के लिए कुटीर प्रदय की तैयारी।
5 बीज को रस्सी से बाधना मजल की खेती के लिए।
6 मोती के खेती के लिए न्यूक्लीयस का समाविष्ट ।
7 जाल बनाने व मछली पालन के जहाज का निर्माण ।

8 वाणिज्यिक शीम्प हैचरी में तकनीकी मदद।

कई सफल सहकारी समितियों में सर्वोच्च समिति जैसे NCDC, MATSYAFD व FISH COPFED ने मत्स्य पालन में महिलाओं से जुड़े मुद्दो का निवारण सफलता से किया हैं। रोजगार के अवसरों को बढाने के लिए ग्रामीण महिलाओं के लिए छोटे पैमाने पर जल कृषि इकाईयों का निमार्ण किया गया हैं। उदाहरण के लिए ग्रामीण महिलाए अपने घर के आँगन में तालाब का निमार्ण कर मत्स्य पालन व रसोई के कूड़े को पुनरावृति कर सकते है। साथ ही मत्स्य पालन में लघु पैमाने पर उत्पादन व विपणन संबंधी गतिविधियों में महिलाओं को शामिल किया जा सकता हैं। ज्यादातर स्थितियों में पारिवारिक सामाजिक व सामाजिक सहभागिता की कमी के कारण कई लोग सामुदायिक संगठनों का लाभ नहीं उठा पा रहे है। इस अध्ययन में यह बात उजागर हुई हैं कि औसतन 93 प्रतिशत महिला मत्स्य पालको की समस्याओं को दो श्रेणी में बाँटा जा सकता हैः घरेलू समस्या या सामाजिक समस्या से पीड़ित। इन सब समस्याओं के बावजूद महिलाओं की भागीदारी मात्स्यिकी में नकारा नही जा सकता है।

मत्स्य प्रसंस्करण में महिलाओं की सहभागिता

परिसंचरण टैंक की देखभाल करती हुयी महिला शोधकर्ता

अन्य

मछली अंकित सिक्के: एक विहंगम दृष्टि

रमेश सोमवंशी
भा.कृ.अनु.प—भारतीय पशु—चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, ए—336, राजेन्द्र नगर, बरेली

एक पुरानी कहावत है ''बाप बड़ा न भईय्या, सबसे बड़ा रूपैय्या''। इससे पैसे या रूपये का महत्व ज्ञात होता है। वर्तमान में रूपये का स्थान प्लास्टिक मनी और कैशलेस प्रणालियों ने ले लिया है। फिर भी हमारे जीवन में अभी भी नकद रूपयों व पैसों का बहुत महत्व है। नकदी हाथ में आने का अहसास व खुशी कुछ अलग ही होती है बजाय 'आन लाइन' भुगतान मिलने के। मुद्राओं का प्रचलन कई हजार वर्षों पूर्व प्रारंभ हुआ था। प्रारंभ में 'पंचमार्क' गढ़े विभिन्न धातुओं के सिक्के प्रारंभ हुये थे। बाद में स्वर्ण मुद्रायें प्रारंभ हुयी। चाँदी के सिक्के चले। कालांतर में ताँबे, पीतल, गिलेट तथा मिश्र धातुओं के सिक्के चले तथा ये अभी भी प्रचलित हैं। इन सिक्कों पर राजचिन्हों, राजा—महाराजाओं, महारानियों, राष्ट्राध्यक्षों, महापुरूषों, पशु—पक्षियों, शस्त्रों, पेड़—पौधों, भवनों, सूर्य, चंद्रमा, आदि विविध वस्तुओं का अंकन किया जाता है। वर्तमान में पारम्परिक सिक्कों के अतिरिक्त स्मरणीय सिक्कों का भी प्रचलन है। बाद के सिक्के विशेष अवसरों की यादगार में जारी किये जाते हैं। सिक्के हमें देश—विदेश के इतिहास, विभिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं, पशु—पक्षियों, महापुरूषों आदि सम्बन्धी ज्ञान देते हैं। इसी कारण संग्रहालयों में इनका प्रदर्शन किया जाता है। शौकीन लोग भी सिक्कों का संग्रह, अध्ययन, प्रदर्शन व व्यवसाय करते हैं। सिक्के इतिहास लेखन में सहायक होते हैं। पुराने तथा विरल सिक्के बहुत मूल्यवान होते हैं। बाजार में ऐसे नकली सिक्के भी प्रचलित हैं अतः सिक्का संग्रहकों को थोड़ी सावधानी बरतने की आवश्यकता है।

मछली : कुछ रोचक बातें

दुनिया भर में सिक्कों पर विभिन्न पशुओं के साथ—साथ जलचरों विशेषकर विभिन्न प्रजाति की मछलियों का भी अंकन किया जाता है। यहाँ तक कि कुछ टकसालों की पहचान हेतु मछली—चिन्ह का अंकन होता है। सिक्कों पर मछलियों के अंकन पर चर्चा प्रारंभ करने से पूर्व आइये, हम कुछ मछली या मत्स्य पर भी बात कर लें। हमने बचपन में एक गीत बहुत गाया और सुना है :

मछली जल की है रानी,
जीवन उसका है पानी,
हाथ लगाओ तो डर जायेगी,
बाहर निकालो तो मर जायेगी।

इस बाल गीत का आनंद कुछ और ही था। यह हमें मछली की प्रकृति का ज्ञान देता है। हम—आपने विशेषकर उत्तर भारत के लोगों ने बचपन में एक गीत को गा—गाकर यह खेल बहुत खेला है। यह है :

हरा समंदर गोपी चन्दर,
बोल मेरी मछली कितना पानी
इतना पानी ....,
इतना पानी ....।

हम जब कुछ बड़े हुये तो हमें बताया गया कि यदि आप किसी कार्य के लिये जा रहे हैं और कोई मछुवारा मछली लेकर जाता दिखे तो यह शुभ शकुन है। ऐसा गोस्वामी तुलसीदास ने श्रीरामचरित मानस ग्रंथ में अनेक स्थानों पर लिखा है। उत्तर प्रदेश सरकार के राज—चिन्ह में दो मछलियों का अंकन है। मछली के अधिक महत्व को देखते हुये केन्द्र सरकार ने इसके विकास पर बहुत अधिक ध्यान दिया है। भाकृपअ ने तो इस पर कई शोध संस्थान भी खोले हैं जिनमें भीमताल स्थित हमारा संस्थान भी एक है।

अपने मूल विषय पर आने से पूर्व हम थोड़ी बात मछली के ज्ञान—विज्ञान पर भी कर लें। मछली एक कशेरूकाधारी प्राणी है जो फायलम कार्डेटा का एक सदस्य है। कहते हैं कि इसकी 30,000 से अधिक प्रजातियाँ हैं। इसकी प्रारंभिक जबड़ाहीन लैम्प्रोस तथा हैग, मछलियों से कार्टीलेज युक्त शार्क, स्केट तथा रेस तथा प्रचुर मात्रा में विविध अस्थीय प्रजातियाँ हैं। अधिकांश मछलियाँ शीतरक्तीय होती हैं तथा मात्र एक प्रजाति ओयाह ऊष्णरक्तीय है। ये समुद्र के खारे पानी तथा ताजे जल में पायी जाती है। बंगाल में इन्हें जल तोरई भी कहा जाता है। मछलियाँ खाद्य या भोजन का महत्वपूर्ण स्रोत हैं। विश्व की बहुत बड़ी आबादी मछली आहार प्रेमी है। लाखों—करोड़ों लोगों को

मछली व्यवसाय से रोजगार मिलता है। मछुवारे बिना मछली के अपने जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। चूँकि मछलियाँ मच्छरों के लार्वा का भक्षण करती हैं अतः ये मलेरिया तथा अन्य वाहकजन्य रोगों के नियंत्रण में सहायक होती हैं। इनका प्रयोगशालीय पशुओं की तरह भी अनुसंधान कार्यों में प्रयोग किया जाता है। मछलियों के 'शुभ दर्शन' हेतु घरां में एक्वेरियम रखे जाते हैं जिनमें हम तरह–तरह की, विविध आकृतियों की, छोटी–बड़ी, रंग–बिरंगी, अति सुंदर मछलियों का निरंतर दर्शन करते रहते हैं। इनके तैरने, लघु जलवृक्षों में छिपने, विश्राम करने, आहार पाने के लिये शीघ्रता से आने व पानी के बुलबुलों को खाने आदि सुंदर दृश्य देखने में छोटे बच्चों को ही नहीं अपितु बड़ों को भी बहुत आनंद आता है। उसका वर्णन करना संभव नहीं है। यूरोपीय देशों के मछलीघरों के 'जलसंसार' में अद्भुत मछलियाँ रखी जाती हैं जिनमें विशालकाय व्हेल मछलियाँ भी होती है। रेन्बो मछलियों की देखकर बच्चे अंग्रेजी की निम्न राइम को दोहराते हैं :

''रेन्बो फिश
रेन्बो फिश
स्विमिंग इन द सी,
विल यू प्लीस शेयर
ए स्केल विद मी''

जैसा कि हम पूर्व में कह चुके हैं कि मछलियों के तरह–तरह के महत्व व प्रभाव को देखते हुये इन्हें प्राचीनकाल से ही सिक्कों पर स्थान मिला। ऐसा केवल एशिया महाद्वीप में ही नहीं है अपितु यूरोप, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया तथा दोनों अमरीकी महाद्वीपों में भी है। सिक्कों पर मछलियों के अंकन से हमें उनके महत्व, प्रजाति ज्ञान तथा उनके संरक्षण व विकास का ज्ञान मिलता है। आईये अब हम ऐसे ही कुछ सिक्कों की चर्चा करें।

भारतीय सिक्कों में मछलियों का अंकन

सिक्कों सम्बन्धित साहित्य/चित्रों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि मध्यकाल में मुगल बादशाह जहाँगीर ने सन् 1605–1627 के मध्य राशि मुद्रा के अर्न्तगत स्वर्ण मोहर में मछलियों का अंकन करवाया। इन सिक्कों में अंकित मछलियाँ एक–दूसरे के ऊपर–नीचे तथा इनके मुँह विपरीत दिशा में थे। अवध के राजचिन्ह में शल्कयुक्त मछलियों का अंकन था। कई नवाबों के रजत मुकुट में मछलियाँ गड़ी गयी थीं। अवध/शाहजानबाद (दिल्ली) के कई राजाओं/नवाबों, ने ताँबें के पैसे में विचित्र मछली या 'कैट फिश' का अंकन करवाया। ये शल्क रहित या सहित अंकित की गयीं थीं। ऐसे सिक्के गंगा/जमुना नदियों में पाये गये। ये ताँबें के सिक्के नजीबाबाद, मथुरा या अन्यत्र टकसालों में गढ़े जाते थे। वर्तमान काल में भारत सरकार ने सन् 1986 में मत्स्य–उद्योग पर 20 व 50 पैसों के सिक्के जारी किये जिनमें मछुवारे जाल से मछली पकड़ते हुए तथा नाव में सवार होकर जाल डालकर मछली पकड़ने का अंकन है। सन् 1993 में भारत सरकार ने जैव विविधता विषय पर दो रुपये का सिक्का जारी किया जिसमें सूर्य,

तालिका–1 मछली अंकित भारतीय सिक्के

क्रम संख्या	सिक्के	वर्णन
1		मुगल सम्राट जहाँगीर की राशि स्वर्ण मोहर–पाइसेस या मछली
2		अवध (उ.प्र.) ताँबें का पैसा–मछली

क्रम संख्या	सिक्के	वर्णन
3		नवाब नसीरूद्दीन हैदर (1827–1937) की स्वर्ण अशर्फी, ए.एच. 1203, लखनऊ, अवध–दो मछलियों का अंकन
4		**मत्स्य उद्योग** 20 पैसा, 1983–जाल से मछली पकड़ते मछुवारे
5		**मत्स्य उद्योग** 50 पैसे, 1986–जाल से मछली पकड़ते नौका सवार मछुवारे
6		जैव विविधता 2 रूपये, 1998–नदी में मछलियाँ

तलिका–2 मछली अंकित अवध के राजचिन्ह

क्रम संख्या	राजचिन्ह	वर्णन
1		अवध के नबाव मुहम्मद अली शाह (शासन सन् 1837–1842) का चाँदी का मुकुट–राजचिन्ह पर दो मछलियों का अंकन
2		उत्तर प्रदेश सरकार का राजचिन्ह या मुहर–दो मछलियों का अंकन

बादल, पर्वत, नदी के साथ–साथ जल में मछली का अंकन है। यदि आप इस विषय पर खोज करेंगे तो इस सम्बन्ध में और अधिक रूचिकर जानकारी जोड़ सकेंगे। उपर्युक्त उल्लेखित सिक्कों/राजचिन्हों के चित्र तालिका–1 व 2 में दिया गया है।

मछली अंकित विदेशी सिक्के

दुनिया भर के सभी महाद्वीपों के बहुत से देशों ने मछली अंकित सिक्के जारी किये हैं जिनकी गणना करना दुष्कर है। यहाँ ऐसे कुछ उदाहरण और चित्र तालिका–3 में प्रस्तुत हैं। उत्तरी अमेरिका के देश कनाडा ने मछलियों पर कई सिक्के जारी किये। इसके दस सेंट के सन् 1867–1967 के मध्य जारी सिक्के पर मैकरेल पेलागिक मछली तथा 25 सेंट के सन् 2013 में जारी सिक्के पर बेलुगा व्हेलों का अंकन है। इसी प्रकार से अमेरिकी प्रांत मिशीगन में 1837 के एक दृश्य में कांटे से जल में खड़े मछली पकड़ते व्यक्ति को चौथाई डॉलर के सिक्के (टोकन) पर अंकित किया गया है। इस सिक्के को 2016 में जारी किया गया। इसी प्रकार से ब्रिटिश शासित इस महाद्वीप के द्विपीय देश बरमूडा के सन् 1987 के सिक्के में ऐंजल फिश का अतिसुंदर अंकन है। इसी महाद्वीप के द्विपीय देश कामरोस ने 1992 में 5 फ्रैंक का एक सिक्का जारी किया जिसमें अभी भी पायी जाने वाली दुनिया की एक सर्वाधिक पुरानी मछली की प्रजाति सीलकैंथ अंकित है। यह सिक्का विश्व मत्स्यकी सम्मेलन के सुअवसर पर सन् 1992 में जारी किया गया था। कैरीबियाई देश बहामास के 10 सेंट के सिक्के पर बोन फिश तथा 1 सेंट के सिक्के पर स्टार फिश का सुंदर अंकन है। इन सिक्कों पर 1975 तथा 1996 के वर्षों का मुद्रण है। बारबाडोस के एक डालर पर उड़न मछली का सुंदर चित्रण है।

यूरोपीय देशों में मछली पालन व्यवसाय का बहुत अधिक सामाजिक व आर्थिक महत्व है। समुद्र से घिरे कई देशों में यह लोगों का मुख्य व प्रिय आहार है। आईसलैंड ने संभवतः मछली अंकित सर्वाधिक सिक्के विमोचित किये हैं। इसके 100 क्रोनर के सिक्के पर लैम्पफिश, 50 क्रोनर पर क्रैब या केकड़ा, 10 क्रोनर पर सिशामो मछलियाँ, 5 क्रोनर पर डाल्फिनें तथा 1 क्रोनर पर विख्यात कॉड मछली अंकित है। आयरलैंड के 10 फ्लोरिन पैंस पर सालमन तथा स्लोवेनिया के 1 टोलर सिक्के पर माँ सालमन मछली के साथ 2 शावक सालमन भी अंकित हैं। पोलैण्ड के 2 ज्लोटी सिक्के पर वेल्श कैटफिश मुद्रित है। क्रोशिया नाम के देश के 2 कूना के सिक्के पर टूना प्रजाति की मछली अंकित है। यूरोप के अन्य देशों ने भी मछली अंकित सिक्के जारी किये हैं जिन्हें यहाँ स्थानाभाव के कारण देना संभव नहीं है।

एशिया महाद्वीप के फिलीपान्इस, सिंगापुर, चीन, भारत, संयुक्त अरब अमीरात व ओमान आदि देशों ने मछली अंकित सिक्के जारी किये हैं। फिलीपाइन्स के 10 सेंटीमोस पर बौनी पिग्मी गोबी या पंडा पिग्मिया मछली का अंकन है। वहीं सिंगापुर के 50 सेंट पर टेरोइस वोलीटांस नाम मछली अंकित है जिसे दुनिया पर में कई नामों, यथा लायन, फायर, ड्रेगन, टर्की तथा स्कॉरपियन फिश आदि से जाना जाता है। चीन के 5 यूआन के सिक्के पर स्टरजियान मछली का अंकन है। संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) के 5 फिल के छोटे और बड़े सिक्कों पर स्पैनग्लेड इम्परर ब्रीम मछली का अंकन है। एक अन्य पश्चिमी एशियाई देश ओमान के चाँदी के रियाल सिक्के पर भी मछली का अंकन है।

कुछ अफ्रीकी देशों ने भी मछली अंकित सिक्के जारी किये हैं। मिस्र के ईसा पूर्व गादीर तृतीय के फीनिशियन प्यूनिक सिक्के पर फिनिशियन मछली का अंकन है। यह अत्यंत प्राचीन सिक्का है। यूगांड़ा के 200 सीलिंग के सिक्के पर चिचलिड मछली का अंकन है। वहीं मोजाम्बिक के 2 मेटाकेस पर सीलकैंथ नामक मछली अंकित है।

प्रस्तुत लेख में इस विषय का मात्र एक विहंगम वर्णन है। उपर्युक्त के अतिरिक्त अन्य अनेक देशों ने भी मछली अंकित सिक्के जारी किये। दुनिया के अमीर देशों जैसे कनाडा, जापान व अमेरिका में 100 या 200 डॉलर के सोने या चाँदी के सिक्के जारी किये। सिक्कों के अलावा कई देश टोकन भी जारी करते हैं जिन पर मछलियों का अंकन होता है। यह विषय बहुत रूचिकर है तथा मछलियों की विभिन्न प्रजातियों के अध्ययन को प्रेरित करता है। सुझाव है कि मत्स्य संस्थान ऐसे सिक्कों का संग्रह कर अपने संग्रहालय में प्रदर्शित कर सकते हैं। इससे दर्शकों की इस विषय में रूचि तथा अध्ययन हेतु प्रेरणा मिलेगी।

तलिका–3 विदेशी सिक्कों पर मछलियों का अंकन

महाद्वीप	सिक्के	वर्णन
उत्तरी अमरीकी सिक्के		**कनाडा** 10 सेंट (1867–1967)–मैकेरेल पेलागिक मछली 25 सेंट, 2013–बेलुगा व्हेलें
		यूएसए, मिशीगन, 1837–चौथाई डॉलर, 2016–कांटे से मछली पकडत़ा जल में खड़ा व्यक्ति
		बरमूडा 5 सेंट, 1987–एंजेल मछली
		कामरोस 5 फ्रैंक, 1992–विश्व मत्स्य सम्मेलन में संसार की सबसे पुरानी जीवित मछली प्रजाति सीलकैंथ मछली पर विश्व मत्स्य सम्मेलन में जारी किया गया संस्मरणार्थ सिक्का
		बहामास 10 सेंट, 1975–बोन फिश 1 सेंट, 1966–स्टार फिश
		बारबाडोस 1 डॉलर, 2007–2016–उड़न मछली
यूरोपीय सिक्के		**आईसलैंड** 100 क्रोनर–लैम्प फिष 50 क्रोनर–केकड़ा 10 क्रोनर–सिषामो 5 क्रोनर–डॉल्फिनें 1 क्रोनर–कॉड मछली

महाद्वीप	सिक्के	वर्णन
		आयरलैंड 10 फ्लोरिन पैंस, 1969 –सालमन मछली
		स्लोवेनिया 1 टोलर, 2001–माँ सालमन मछली के साथ दो षावक सालमनों के साथ
		पोलैंड 2 ज्लोटी, 1995–वैल्स कैटफिष
		क्रोशिया 2 कूना, 1995 व 2009–टूना मछली
एशियाई सिक्के		**फिलीपाइन्स** 10 सेंटीमोस, 1985–बौनी पिग्मी गोबीमैन या *(पंडाका पिग्मीया)* मछली
		सिंगापुर 50 सेंट (1969–1979) लायन, फायर, ड्रेगन, टर्की या स्कॉरपियन या *टेरोइस वॉलिटेन्स* मछली
		चीन 5 यूआन, 1999–स्टरजियान मछली

महाद्वीप	सिक्के	वर्णन
		संयुक्त अरब अमीरात 5 फिल्स (बड़ा और छोटा), 1988 तथा 1973–स्प्रैंगल्ड इम्परर, ब्रीम मछली *(लेथ्रीनस, नेबुलोसस)*
		ओमान 1 रजत रियाल, 1978–मछली
अफ्रीकी सिक्के		**मिस्र** गाडिर तृतीय (ई.पू.) का फीनेशियन प्यूनिक रजत सिक्का–फीनेशियन मछली
		युगांड़ा 200 शीलिंग्स, 2008–चिकलिड मछली
		मोंजाम्बिक 2 मेटीकेस, 2006–सीलकैंथ मछली

राष्ट्र-भाषा विकास की संभावनायें

मुरारी लाल सारस्वत
पशु–पोषण विभाग, भारतीय पशु–चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जत नगर, उत्तर प्रदेश

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने राष्ट्र और भाषा के प्रति नागरिकों की निष्ठा के लिए ठीक ही कहा है कि,

''जिसको न निज भाषा तथा निज राष्ट्र का अभिमान है, यह नर नही है, पशु निरा है और मृतक समान है''

भाषा अनुभूति सम्प्रेषण का सशक्त माध्यम है। भाषा द्वारा ही मनुष्य की समस्त उपलब्धियां, विज्ञान, कला, साहित्य, धर्म तथा संस्कृति आज तक सुरक्षित रही है। कोई भी देश सच्चे अर्थों में स्वतंत्र नही जब तक वह अपनी भाषा नही बोलता है। महात्मा गांधी ने एक बार कहा था कि अगर भारत में स्वराज अंग्रेजी बोलने वाले भारतीयों के लिए होने वाला है तो निश्चय ही राष्ट्र भाषा अंग्रेजी होगी, लेकिन अगर स्वराज करोड़ों भूखों मरने वालों, करोड़ो निरक्षरों, किसानों, मजदूरों व दलितों के लिए होने वाला है तो हिन्दी ही एक मात्र राष्ट्र भाषा हो सकती है। उन्होने सन् 1917 में गुजरात शिक्षा कान्फ्रेंस में हिन्दी को सार्वदेशिक भाषा बनाने पर जोर दिया। इसके लिए उन्होने अखिल भारतीय प्रयोग में आने वाली राजभाषा को निम्नलिखित कसौटी पर कसने की राय दी:

1. सरकारी कर्मचारी उसे आसानी से समझ सकें।
2. पूरे देश में उस भाषा के माध्यम से राजनैतिक, व्यापारिक, धार्मिक व वैज्ञानिक सम्प्रेषण सम्भव हो सके।
3. देश में उन भाषा को बोलने वालों की संख्या सबसे अधिक हो।
4. पूरे देशवासियों को उसे सीखने में सुविधा हो।
5. जिसका साहित्य अत्यन्त समृद्ध हो।

उपर्युक्त कसौटी पर रखकर घोषित किया गया कि हिन्दी ही वह भाषा है जो राष्ट्रभाषा बनने योग्य है। अतः स्वतंत्र भारत में हिन्दी को ही राजभाषा स्वीकार किया गया और संकल्प किया गया कि हिन्दी भाषा को प्रसार, वृद्धि, उसका विकास इस तरह किया जाय ताकि वह समग्र भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी पहलुओं को अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके। कुछ लोगो को शिकायत है कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित नही किया गया। उन्हे यह समझना चाहिए कि राष्ट्र के राजकाज की भाषा के रूप में हिन्दी स्वयं ही राष्ट्रभाषा पर आसीन हो गई है।

यह जानते हुए भी कि हिन्दी हमारी जन संपर्क की भाषा हो सकती है, इसके प्रसार –प्रचार की दिशा में बहुत कम कार्य हो पाया है। इसका मुख्य कारण हमारी हीन भावना रही है। शताब्दियों की दासता के कारण हमारे अन्दर स्वाभिमान की भावना मर सी गई है। भाषा के क्षेत्र में उतना नुकसान हमारे देश को मुस्लिम शासन के दौरान नही हुआ जितना कि अंग्रजी शासन के दिनों में। जहां मुसलमान शासकों ने फारसी, अरबी के शब्दों के साथ–साथ हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दों को लेकर उर्दू का विकास किया, जो हिन्दी के समान ही सरल और समझने योग्य है वही अंग्रेजी ज्ञान के वह पिछड़ा ही रहेगा। ऐसा इसलिए भी हुआ क्योंकि अंग्रेजी राज के समय अंग्रेजी न जानने वालों को न तो नौकरियों में लिया जाता था न ही उनका तथाकथित समाज में कोई स्थान था। इस प्रकार बलपूर्वक अंग्रेजी सीखने व उसमें रूचि लेने के लिए भारतीयों को बाध्य किया गया। सभी विषय अंग्रेजी में ही पड़ाये जाने लगे और विज्ञान, राजनीति, दर्शन, कानून, इतिहास आदि का ज्ञान अंग्रेजी के माध्यम से ही प्राप्त होने लगा।

यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर अंग्रेजी का बोलबाला रहा। हम इसी हीन भावना के कारण अपनी राष्ट्रभाषा विकसित नही कर पाये और यही कहते रहे कि हिन्दी इतनी समर्थ नही कि उसके माध्यम से राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विचार विनिमय किया जा सके। यह हीन भावना यहां तक बढ़ गई कि हिन्दी समाचार पत्र, हिन्दी पुस्तकों की अपेक्षा अंग्रेजी साहित्य पड़ना गर्व की बात माना जा रहा है। विज्ञान के क्षेत्र में भी यह तर्क प्रबल रूप से दिया जाता है कि शोध

कार्य लेखन के लिए हिन्दी समर्थ भाषा नही है, जबकि यह विचार एकदम धोखा है।

बड़े आश्चर्य की बात है कि जो भाषा देश के तीन चौथाई निवासियों द्वारा बोली व समझी जा सके वह विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम न बनाई जाए। सम्भवतः भारत में बहुत कम लोग जानते है कि जिस प्रकार आज हम विदेशी भाषा अंग्रेजी के प्रभाव से आक्रांत होकर स्वदेशी भाषा की उपेक्षा कर रहे है, उसी प्रकार किसी समय इंग्लैण्ड भी विदेशी भाषा फ्रेंच के प्रभाव से इतना अभिभूत था कि न केवल सरकारी काम फ्रैंच में होता था, बल्कि उच्च वर्ग के लोग अंग्रेजी में बात करना भी अपनी शान के खिलाफ समझते थे। जब फ्रैंच के स्थान पर अंग्रेजी लागू की गई तो उसके विरोध में ऐसे तर्क दिये गऐ जैसे आज हमारे यहां हिन्दी के विरोध में दिए जा रहे है। सत्तरहवीं सदी के आरम्भ तक इंग्लैण्ड में अंग्रेजी का विरोध शांत हो गया तथा आम धारणा बनी कि स्वदेशी भाषा को हर कीमत पर अपनाना है। जब उसे व्यावहारिक रूप दिया जाने लगा तो सबसे बड़ी कठिनाई शब्दावली की आई जैसी कि आज हमारे सामने विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी शब्दावली के तथाकथित अभाव को लेकर है। उस समय अंग्रेजी शब्द सम्पदा की दृष्टि से इतनी दरिद्र थी कि प्रशासन, कला, समाज, धर्म और दैनिक जीवन से सम्बन्धित सामान्य शब्द भी उसके पास अपने नही थे। इसके लिए अन्य भाषाओं को समाहित किया गया। प्रशासनिक शब्दावली के गवर्नमेंट, स्टेट, एम्पायार, रायलकोर्ट, पार्लियामेंट, असेम्बली, वार्डेन, मेयर, प्रिंस, ड्यूक, मिनिस्टर आदि न्यायालय और कानून संबधी जस्टिस, पिटीशन, क्राइम, बार, एडवोकेट, पिटीशन समन, वारन्ट, प्रापर्टी आदि तथा कला और साहित्य सम्बन्धी आर्ट, पेंटिंग, म्यूजिक, ब्यूटी, कलर, प्रोज, ट्रेजरी आदि यहां तक कि रहन–सहन के शब्द ड्रेस, फैशन, गारमेंट्स, बटन, बूट, बीफ, मटन, टोस्ट, क्रिम आदि अनेकों शब्द फ्रेंच से समाहित किये गये। आज क्या कोई कह सकता है कि यह शब्द अंग्रेजी के नही है। 'ए हिस्ट्री ऑफ दी इंग्लिश लेंग्वेज के लेखक अल्बर्ट सी. काफ के अनुसार अब तक लगभग दस हजार शब्द तो अकेली फ्रैंच से ही अंग्रेजी में अपना लिए गए। आगे चलकर विश्व की विभिन्न भाषाओं से भी हजारों शब्दों को ग्रहण किया गया। जिनमें जंगल, लूट, नियर (नियराई), डेकोइट (डकैत), लाइक, बाजार आदि अनेकों हिन्दी शब्द भी है। विज्ञान के क्षेत्र में लैटिन शब्दों का प्रयोग तो किसी से छिपा नही है? काफ साहब के अनुसार ''यह अत्युक्ति न होगी कि अंग्रेजी में इस समय लगभग पचास से अधिक भाषाओं से हजारों शब्द ग्रहण किये जा चुके है, जिनमें अधिकांश फ्रैंच, लैटिन, ग्रीक, इटेलियन और स्पेनिश से है। कहने का प्रयोजन यह है कि हमको भी विविध क्षेत्रों में चाहे वह कला हो, साहित्य, प्रशासन, न्याय या विज्ञान का शोध कार्य हो हिन्दी के प्रयोग के लिए हिन्दी को इसी प्रकार विशाल हृदय बनाना होगा। जिस प्रकार हमारे वेद, उपनिषद, गीता आदि का अनुवाद करते समय अन्य देशों ने अपनी भाषा में हमारी भाषा के शब्द ज्यों के त्यों लिये है। उसी प्रकार वैज्ञानिक शोध लेखन के लिए हम अन्य भाषाओं के शब्दों के मामलें में उदारवादी रूख अपनायें। जो लोग भाषा को शुद्धतता की बात करते हैं उन्हे उन लेखकों और साहित्यकारों से प्रेरणा लेनी चाहिए। जिन्होने उदार दृष्टिकोणों का परिचय देते हुए विदेशी शब्दों को ग्रहण करने का समर्थन किया है, आज अंग्रेजी के बटन , ग्लास, पैन आदि हिन्दी शब्द हो गये है। इसी प्रकार किताब, नीलामी, मुकदमा, फैसला आदि अरबी, फारसी के शब्द है, कलम, कागजात, चकबंदी आदि उर्दू फारसी के होते हुए भी हिन्दी के ही अंग बन गये है। हिन्दी भाषा की यह उदारता रही है कि दूसरी भाषाओं का विरोध नही करती है। अहिन्दी भाषी लोगों के लिये भी सहज और सरल है। फिर भी उसमें और अधिक बोधगम्यता, सम्प्रेणीयता, अभिर्व्यजना लानी होगी जो सरलीकरण से ही संभव हो जायेगा। हिन्दी में वैज्ञानिक शब्दावली समृद्ध करना भी आवश्यकता है। पर जब तक यह कष्ट साध्य कार्य पूरा न हो हमें हाथ पर हाथ रखकर बैठे नही रहना चाहिए वरन् हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग वैज्ञानिक शोध के क्षेत्र में आरम्भ कर देना चाहिए। क्या रूस, चीन, जापान, जर्मन आदि देशों ने विज्ञान में कम प्रगति की है? सभी जानते हैं उन देशों ने अपनी भाषा के माध्यम से ही विज्ञान के क्षेत्र में उत्कृष्ट स्थान पाया है और अपने देश की समस्याओं को हल करने की दिशा में शोध करके राष्ट्र सबल बनाया है। इसी तथ्य को स्वीकारते हुए कहना पड़ता है कि ''चरण चूम लेगी स्वयं ये सफलता जरा कदम आगे बढ़ा कर तो देखो''।

कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में तो

यह और भी आवश्यक है क्योंकि हम जिनके लिए शोध कार्य करते है उनमें से अधिकांश हिन्दी भाषी हैं, हिन्दी समझ सकते हैं या अन्य कोई भारतीय भाषी है, अंग्रेजी भाषी कदापि नहीं है। हर्ष की बात है कि इस क्षेत्र में कुछ प्रयास होन लगे है। विज्ञान की अनेक पुस्तके हिन्दी में अनुदित हुई है। मौलिक पुस्तक व लेख भी लिखे जा रहे है साथ ही साथ वैज्ञानिक शब्दकोष भी हिन्दी में प्रकाशित हो रहे है। आवश्यकता है तो पक्के इरादे की और अपने अन्दर की हीन भावना को निकालने की। जैसे ही हम वैज्ञानिक शोध का माध्यम हिन्दी करेंगें, देश किसानों, मजदूरों, पशुपालकों एवं कोटि–कोटि जनों के और अधिक समीप पहुंचेगें तथा देश की समस्याओं को गहराई से समझकर उनका निराकरण करने में सफल होगें। अंत में शोध कार्य में हिन्दी प्रयोग की संभावनाओं के बारे में अपने मत के समर्थन के लिए विनोबा भावे के शब्दों का उल्लेख करना चाहूँगा ''यदि मैने हिन्दी का सहारा न लिया होता तो कश्मीर से कन्याकुमारी और असम से लेकर केरल तक गांव–गांव जाकर भूदान, ग्रामदान का क्रांन्तिपूर्ण संदेश जनता तक न पहुंच पाता।'' हर्ष का विषय है कि भारत सरकार का केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली का प्रयोग हिन्दी को समृद्ध करने तथा केन्द्रीय कार्यालयों, संस्थानों व उपक्रमों में गठित हिंदी अनुभाग राजभाषा कार्यान्वयन की दिशा में प्रगति के पथ पर निरंतर अग्रसर है। हिन्दीतर क्षेत्रों में राजभाषा के प्रति आकर्षण भी इसके सुन्दर भविष्य को सुनिश्चित करता है।

कोटि कोटि कंठों की भाषा,
जनगण की मुखरित अभिलाषा।

हिन्दी है पहचान हमारी,
हिन्दी हम सबकी भाषा।।

– डॉ लक्ष्मीमल सिंघवी

मधु की गुणवत्ता प्रबन्धन प्रणाली

हरीश चन्द्र तिवारी
राजकीय मौन पालन केन्द्र, ज्योलिकोट

- अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में भारतीय शहद की माँग की अपार सम्भावनाऐं है। बागवानी, कृषि एवं वन क्षेत्रों में पुष्पीय विविधता के सन्दर्भ में उपलब्ध मधुमक्खियों की प्रजातियों से औद्यानिक एवं कृषि उत्पादन वृद्धि की काफी अपेक्षाऐं है। अर्न्तराष्ट्रीय मानकों की माँग के कारण शहद के प्राकृतिक गुणों सुगन्ध, स्वाद एवं रंग की यथास्थिति बनाये रखने के लिये मधु उत्पादन (Production), प्रसंस्करण (Processing), भण्डारण (storing), डिब्बा–बन्दी (Packaging), एवं देखभाल (Monitoring), में विशेष सावधानियों की आवश्यकता होती है। प्रदेश में खाद्य उत्पादों के अनुरूप गुणवत्ता के प्रति सामाजिक जागरूकता की कमी (Lack of social awareness) का दुष्प्रभाव शहद पर भी पड़ रहा है। शहद के लिऐ गुणवत्ता प्रबन्धन प्रणाली (Quality Management System for honey – QMS – H) को सुव्यवस्थित किये जाने के लिए निम्न उपाय किये जाने आवश्यक है –
- मधु उत्पादन के हर स्तर पर शहद की गुणवत्ता का आंकलन और स्वच्छता, स्थल, चयन, मधुमक्खी प्रबन्धन सहित क्षेत्र में मौनालय/वन क्षेत्रीय मधु उत्पादन का अनुसरण।
- उत्पादन पश्चात् प्रबन्धन (Post Harvasting Managment) के अन्तर्गत शहद निष्कासन, भण्डारण तथा परिवहन में सावधानी।
- शहद की प्राकृतिक गुणवत्ता को बनाये रखने के लिऐ प्रसंस्करण तथा पैकेजिंग के समय किसी भी प्रकार से अधिक गर्म करने/होने की प्रक्रिया से बचने की सावधानी (Temperature should be not to higher than 70°C)।
- प्रत्येक प्रक्रियाऐं हर स्तर पर तकनीकी रूप से प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा की जानी आवश्यक है।
- शहद की माँग एवं कीमत की दृष्टि से प्रतिर्स्पधा में बने रहने के लिये अर्न्तराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप – मौनपालक, मधु विक्रेता (मधु उद्योग) तथा राज्य एवं केन्द्र सरकार के स्तर से सभी सम्भव उपाय किये जाने आवश्यक है।
- यदि सभी यथा सम्भव प्रयास किये जाऐ तो कृषक/उद्यानपति, मौनपालक, पिछड़ा क्षेत्र, जनजाति क्षेत्र तथा प्रदेश की कृषि उत्पादकता लाभान्वित होगी।

मौनपालकों द्वारा मधुस्राव काल में मधुखण्ड का उपयोग नही करना (No use of super during honey how flow season by beekeepers)

- वर्तमान में 90 प्रतिशत से अधिक मौनपालक शिशुखण्ड़ से ब्रूड युक्त छत्तों से ही मधु उत्पादन/निष्कासन कर रहे है, फलस्वरूप फ्रेमों से लार्वा एवं नव भण्डारित पराग भी मधु में मिलकर मधु की गुणवत्ता को प्रभावित करता है, और अधिकांश मधु निष्कासन के समय ही दूषित हो जाता है।

उपाय

- मौनपालक प्रत्येक मौनवंशो में मधुखण्ड़ लगाये तथा मधु का निष्कासन केवल मधुखण्ड़ से ब्रूड रहित सील्ड़ फ्रेमों से ही करें तो मधु की गुणवत्ता को बनाया रखा जा सकता है।
- अपरिपक्व मधु का निष्कासन (Unmatured honey extraction)
- प्रत्येक पुष्पों का मधु स्त्राव काल सीमित अवधि के लिये ही होता है। मौनपालक अधिकाधिक मात्रा में मधु प्राप्ति के लिये अपरिपक्य तथा अनसिल्ड़ छत्तों से मधु का निष्कासन कर लेते है, क्योंकि परिपक्व मधु के निष्कासन में समय और श्रम दोनों अधिक

लगते है। फलस्वरूप अपरिपक्व मधु में नमी की मात्रा 24 प्रतिशत से अधिक रहती है, जो कि शहद की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। परिपक्व शहद में नमी की मात्रा 18–20 प्रतिशत तक ही होनी चाहिये।

उपाय

- शहद की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये आवश्यक है कि मौनपालक मधुखण्ड़ से लगभग 75 प्रतिशत से अधिक शील्ड़ फ्रेमों से ही शहद का निष्कासन करें।

लोहे के मधु निष्कासक एवं अन्य सहायक उपकरणों का उपयोग (Use of Iron made honey extractors and other supporting equipments)

- मौनपालकों द्वारा मधु निष्कासन हेतु प्रायः लोहे अथवा टिन से निर्मित मधु निष्कासन यंत्रो का ही प्रयोग किया जाता है, जिससे गुणवत्ता प्रभावित होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

उपाय

- मधु में किसी भी बाहरी धातु की उपस्थिति न हो इसके लिये उच्च कोटि के स्टैनलैस स्टील निर्मित अथवा फूड़ ग्रेड़ वाले उपकरणों का उपयोग अनिवार्य रूप से किया जाना आवश्यक है।

शहद भण्ड़ार हेतु फूड ग्रेड़ अथवा स्टील निर्मित कैन का उपयोग न किया जाना (No use of food grade cane for storing the honey after extraction)

- अधिकांश मौनपालक सामान्यतः मधु भण्डारण बाजार में उपलब्ध पुराने तेल/घी के खाली कनस्तरों में ही करते है। जो कि मधु की गुणवत्ता को प्रभावित करने में अहम भूमिका अदा करते है। कभी–कभी मधु में लैड की उपस्थिति इसी कारण से होती है।

उपाय

- भण्डारण के लिये स्टील अथवा फूड़ ग्रेड़ केन का उपयोग अनिवार्य रूप से किया जाना आवश्यक है। जो उत्पादक इस प्रकिया को नही अपनातें है उन्हें "Food Adulteration Act" खाद्‌य अपमिश्रण एक्ट के अन्तर्गत निरूद्ध किया जा सकता है।

विपणन हेतु पैकिंग एंव लेबलिंग (Packing, labeling and Waight)

- गुणवत्ता युक्त षहद के विपणन हेतु पैकिंग लेबलिंग एंव मात्रा का विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है। अधिकांश मौनपालक प्लास्टिक के खाली डिब्बों, शराब की खाली बोतलो में बिना लेबल एंव बिना निश्चत मात्रा के शहद की मार्केटिंग करते है,जो कि शहद की गुणवत्ता को प्रभावित करती है एंव मौनपालक को मधु का उचित मूल्य भी नही मिल पाता।

उपाय

- अतः विपणन हेतु काँच के चौकोर अथवा गोल आकार के आधा किलो एंव एक किलो क्षमता वाले जार में संस्था का लेबल लगाया जाना आवश्यक है। ताकि क्रेता शहद को भली प्रकार जांच परख कर उचित मूल्य पर क्रय कर सके
- मौनवंशो में अनावश्यक रूप से एलोपैथी दवाओं का उपयोग (Unwanted use of Allopathic Medicines in Bee hives)
- प्रायः मौनपालक मौनवंशो में लगने वाली बिमारियों/परजीवी/शत्रु के नियन्त्रण हेतु तकनीकी ज्ञान के अभाव अथवा बाजार में उपलब्ध किसी भी प्रकार की दवाओं का उपयोग किसी भी समय में करता रहता है। फलस्वरूप निष्कासित मधु में एण्टी बायोटिक दवाओं के अशं उपस्थित रहते है, जो कि मधु की गुणवत्ता को प्रभावित करते है।

उपाय

- मौनपालकों को चाहिये कि बिमारी/परजीवी/शत्रु के नियन्त्रण हेतु मौनवंशों में जैविक नियन्त्रण एवं सावधानियाँ अपनायें तथा आवश्यक होने पर ही दवाओं/रसायनों का प्रयोग करें। अन्तराष्ट्रीय स्तर पर मौनवंशो में एन्टीबायोटिक दवाओं का प्रयोग प्रतिबन्धित है।
- विभिन्न ऋतुओं में भिन्न–भिन्न प्रकार के पुष्पों से उत्पादित मधु को अलग–अलग भण्ड़ारित, पैकिंग, परिष्कृत कर भी मधु की गुणवत्ता को बनाया जा सकता है।

कसावा कटाई में मशीनीकरण की आवश्यकता

दीपक थोरात, बिक्रमज्योती, ए.पी. पंदिरवार एंव हिमांशु पाण्डेय
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल

टेपियो का एक स्टार्च है जो कसावा नाम के झाड़ीनुमा पौधे की जड़ों से प्राप्त होती है। कसावा स्वयं में स्वाद रहित होती है। यह सामान्यतः भोजन को गाढ़ा बनाने के काम आती है तथा पुडिंग में प्रयुक्त की जाती है। कसावा लगभग 101 देशों में उगाई जाती है, और यह अत्यंत उत्साह वर्धक तथ्य हैए कि विश्व की औसत उत्पादकता 10.76 टन प्रति हेक्टेयर के मुकाबले 27.92 टन प्रति हेक्टेयर की उत्पादकता के साथ भारत शीर्ष स्थान पर हैं। क्षेत्र के अनुसार भारत एशिया में चौथा एवं विश्व में 14 वे स्थान पर है। इसी प्रकार कसावा जड़ों के उत्पादन के मामले में हम एशिया में तीसरे तथा विश्व में सातवें स्थान पर हैं। कसावा भारत के 13 राज्यों में उगाया जाता हैं किन्तु प्रमुख उत्पादन दक्षिणी राज्यों केरल, तमिलनाडु व आंध्रप्रदेश से प्राप्त होता है। इन राज्यों में कुल उत्पादन का लगभग 90 प्रतिशत से अधिक औद्योगिक उपयोग में जाता हैं।

कसावा

कसावा की हाथों द्वारा कटाई

कसावा कटाई की पारम्परिक विधि

खेती की पारम्परिक विधि में परिपक्व होने पर तने को काट लिया जाता है तथा खेती को थोड़ा गीला कर लिया जाता है। एक सप्ताह पश्चात् विशेष चिमटे प्रकार के फावड़े/कुदाल का प्रयोग कर कुशल श्रमिकों द्वारा कसावा की जड़ों को खोदकर निकाल लिया जाता है।

कसावा की हाथों द्वारा कटाई

कसावा खेती की कुल श्रम उपयोगिता का 40 प्रतिशत केवल कटाई में लग जाता हैएजो यह दर्शाता है की कसावा की कटाई एक बहुत ही श्रम गहन प्रक्रिया है। मानव द्वारा कटाई में कसावा की खेती की लागत अधिक आती हैं। कसावा की खेती में श्रम लागत निम्नानुसार वितरित होती हैं।

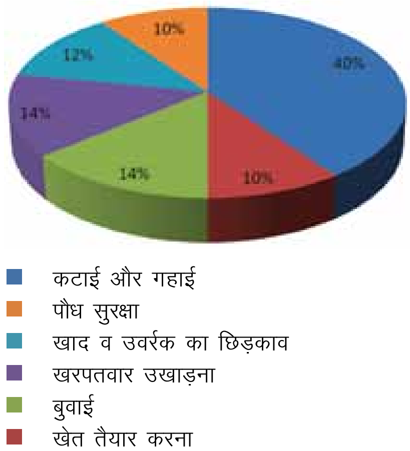

कसावा की कटाई का यान्त्रिकीकरण :

एक ओर जहां कृषि में श्रमिकों की मजदूरी में वृद्धि होती जा रही है, वहीं श्रमिक दक्षता, कार्य का निष्पादन तथा कार्य समय आदि की गुणवत्ता में गिरावट आ रही है जिसके परिणाम स्वरूप फसल का प्रबन्धन उचित तरीके से नहीं हो पा रहा है। खेती की लागत में बढ़ोतरी तथा किसानों को आय में कमी आ रही है। अतः कृशि में यांत्रिकीकरण से श्रमिकों पर निर्भरता एवं उत्पादन लागत में कमी के साथ ही उत्पादकता को स्थायी बनाए रखा जा सकता है। वर्तमान में श्रमिकों की अत्यधिक कमी को दूर करने के लिए कृषि मशीनरी एवं उपकरणों के अधिक उपयोग पर ध्यान दिया जा रहा है। ट्रैक्टर चालित उपकरणों का भाड़े पर लेकर प्रयोग करने का चलन बढ़ रहा है, क्योंकि किसान सभी प्रकार के महंगे उपकरण खरीदने मे सक्षम नही हैं। कसावा की बुवाई, रोपाई तथा कटाई सबंधी सफल यांत्रिकीकरण अत्यंत महत्वपूर्ण है। यांत्रिकीकरण की सहायता से कृषि प्रचालनों की समय बद्धता सुनिश्चित कर उत्पादकता को स्थायी बनाया जा सकता है। कसावा की खेती में आने वाली प्रमुख समस्याये इस प्रकार हैंय विशेष तौर पर बुवाई एवं कटाई के मौसम में समय पर श्रमिकों की उपलब्धता, विलम्ब से बुवाई, निराई–गुड़ाई तथा कटाई के कारण उत्पादन में हानि। यांत्रिकीकरण से कसावा की कटाई कम अवधि में ही पूरी की जा सकती है जो कि अत्यंत लाभदायक है।

ट्रेक्टर चालित कसावा कटाई यंत्र

कसावा के कंद को मिट्टी से उखाड़कर निकालने के लिए ट्रैक्टर.चालित कसावा खोदाई यंत्र उपलब्ध हैए किन्तु इसके तने की कटाई के लिये यांत्रिकीकरण की अभी आवश्कता हैं। ट्रैक्टर के सामने जोड़कर चलाए जाने वाले कसावा तने के कटाई यंत्र के सफलतापूर्वक विकसित किए जाने से ट्रैक्टर चालित कम्बाईन का भी विकास किया जा सकेगा जो कसावा की खेती करने वाले किसानों के लिए अत्यंत लाभप्रद सिद्ध होगा।

निष्कर्ष

घरेलु तथा औद्योगिक दोनो क्षेत्रों में कसावा की बढ़ती हुई उपयोगिता के फलस्वरूप हस्तचालित कटाई विधि व्यवहार्य नहीं रह गई है। कसावा के लिए उपयुक्त कटाई यंत्र विकसित न हो पाने के कई कारण है जैसे कि मिट्टी में परिपक्वता के दौरान कंद की लम्बाई, चौड़ाई, गोलाई आदि, मिट्टी की स्थिति एवं मशीन की उच्च भार वाही/खिंचवा क्षमता की आवश्यकता। कसावा कटाई यंत्र विकसित किए जाने हेतु अनेक प्रयास किए गए हैं किन्तु अनेक कारणों के फलस्वरूप इनमें सफलता प्राप्त नही हो सकी हैं। कसावा की सफलतापूर्ण कटाई के लिए उपयुक्त यंत्र की अत्यंत आवश्यकता है जोकि जड़ों के पास मिट्टी को ढीला करके न्यूनतम क्षति के साथ कंदो को मिट्टी से सफलतापूर्वक बाहर निकाल सके।

हिन्दी भाषा में क्रिया और उसके मुख्य भेद

अमित कुमार जोशी एवं अमित कुमार सक्सेना
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

भाषा वह सरलतम साधन है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने भावों को प्रकट करता है और दूसरों के भावों को समझता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज का एक सदस्य है। समाज के अन्य व्यक्तियों से उसका कई प्रकार से घनिष्ठ व्यावहारिक सम्बन्ध होता है। वह एक दूसरे से अपने भावों को प्रकट करके ही सुखी जीवन बिता सकता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य मननशील होता है। उसके मन में अनेक विचार या भाव उठते हैं, जिन्हे वह दूसरों के समक्ष रखना चाहता है और उनके विचारों को समझना चाहता है। विचारों और भावों के आदान प्रदान का सर्वोत्तम एवं सरलतम साधन भाषा ही है। भाषा का स्वरूप सदैव स्थिर नही रहता। समय की गति के साथ उसमें भी परिवर्तन होते रहते हैं। आज से एक सहस्र वर्ष पहले जो भाषा बोली जाती थी आज उसमें बहुत परिवर्तन हो चुके हैं। भाषा शास्त्री इसे भाषा विकास कहते हैं।

जिस शब्द से किसी कार्य का होना या करना पाया जाऐ, उसे क्रिया कहते हैं। जैसे–'जाता है, 'गया, है, 'था' आदि। क्रिया वाक्य में सबसे अधिक महत्वपूर्ण शब्द है। इसके बिना कोई भी वाक्य पूर्ण नही कहा जा सकता। इसलिए क्रिया का भाषा में महत्वपूर्ण स्थान है।

धातु : क्रिया के मूल रूप को घातु कहते हैं जैसे– जाता है, जाती है, जाते हो, गया, जायेगा आदि क्रियाओं का मूल रूप '**जा**' है, यही घातु है। एक धातु से अनेक क्रियाऐं बनती हैं जैसे– पढ़ से पढ़ा, पढ़ता, पढ़ती, पढेगा आदि। क्रिया के मूल रूप या धातु को बताने के लिए सभी धातुओं के साथ '**ना**' प्रत्यय लगा दिया जाता है। जैसे: जा–जाना, पढ़–पढ़ना, लिख–लिखना, सो–सोना आदि।

क्रिया के भेद: क्रियाऐं मुख्य रूप से दो प्रकार की होती हैं। 1. सकर्मक 2. अकर्मक

सकर्मक क्रिया: जो क्रिया वाक्य में कर्म–कारक की आकांक्षा रखती है उसे सकर्मक कहते हैं। जैसे– कृष्ण पुस्तक पढ़ता है। इस वाक्य में **पढ़ता है** क्रिया सकर्मक है, क्योंकि 'क्या पढ़ता है? इस प्रश्न से किसी पढ़ी जाने वाली वस्तु की आकांक्षा प्रतीत होती है, जिसका उत्तर **पुस्तक** कर्म द्वारा प्राप्त हो जाता है। इसी तरीके से रहीम आइसक्रीम खाता है, रानी पानी पीती है, दिनेश खाना पकाता है। इन वाक्यों में खाता, पीती, पकाता क्रियाऐं सकर्मक है।

अकर्मक क्रिया: जिस क्रिया के व्यापार का फल कर्त्ता पर ही पड़ता है, कर्म की आकांक्षा नही होती उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं। जेसे– भीखू सोता है। कुत्ता दौड़ता है। मोहन गिरता है। इन तीनों वाक्यों में क्रियाऐं अकर्मक हैं।

सकर्मक तथा अकर्मक क्रियाओं के विषय में निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है:

अ) कई बार सकर्मक क्रियाऐं भी अकर्मक की भांति प्रयुक्त की जाती हैं। ऐसी दशा में कर्म कहा तो नही जाता परन्तु वह समझ लिया जाता है यथा:–

रवि बोलता है।

हरीश समझता है।

वह भूलता है।

इन वाक्यों में 'बात' कर्म है जो कि कहा तो नही गया किन्तु समझा जा रहा है– रवि बोलता है। हरीश बात समझता है। वह बात भूलता है।

ब) यदि अकर्मक क्रिया से संज्ञा शब्द बनाकर अंत में वही क्रिया रख दें तो ऐसी क्रिया सकर्मक की भांति प्रयुक्त होती जैसे–

बच्चा खेलता है।

लड़के दौड़ते हैं।

इन वाक्यों में खेल–खेलना, दौड़–दौड़ना आदि क्रियाओं से बनी है और कर्म का कार्य कर रही है। अत: ये दोनों अकर्मक क्रियाऐं होते हुए भी सकर्मक क्रियाऐं बन गयी हैं।

स) कुछ क्रियाऐं अकर्मक भी होती हैं और सकर्मक भी जैसे– ललचाना, गिरना, संभलना आदि।

अकर्मक
ललचाना
गिरना

सकर्मक
मिठाई जी को ललचाती है।
मोहन पेड़ से गिरता है।

द) कुछ सकर्मक क्रियाओं के दो कर्म होते हें। ऐसी क्रियाओं को द्वि कर्मक कहा जाता है जैसे–दिखाना, सुनाना आदि।

द्विकर्मक क्रियाओं के दोनो कर्मों मे से व्यक्ति गोण कर्म और वस्तु प्रधान कर्म कहलाता है। प्रधान कर्म के साथ विभक्ति चिन्ह नही होता, किन्तु गौण कर्म के साथ '**को**' विभक्ति चिन्ह लगाया जाता है। जैसे– 'मॉ अपने बेटे को कहानी सुनाती है' यहां कहानी प्रधान कर्म है। उसके साथ बेटा गौण कर्म है; उसके साथ 'को' लगा है।

य) कुछ सकर्मक अथवा अकर्मक क्रियाऐं वाक्य की पूर्ति के लिए किसी अन्य शब्द की आकांक्षा रखती हैं और उस शब्द के बिना पूरी नही होतीं। ऐसी क्रियाऐं अपूर्ण क्रियाऐं कहलाती हैं और पूर्ण करने वोले शब्द पूरक कहलाते हैं जैसे–लोकेश खिलाड़ी है। राम ने सुग्रीव को राजा बनाया।

उपरोक्त वाक्यों में 'है' शब्द अकर्मक अपूर्ण क्रिया है जोकि **खिलाड़ी** शब्द द्वारा पूर्ण भाव को स्पष्ट करती है। यदि हम कहें कि– लोकेश है तो प्रश्न उठता है कि– वह क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर 'खिलाड़ी' शब्द से मिलता है। अतः अपूर्ण क्रिया है तथा खिलाड़ी उसका पूरक है।

दूसरे वाक्य में 'बनाया' क्रिया सकर्मक है। जिसका कर्म '**सुग्रीव को**' है। परन्तु 'राम ने सुग्रीव को बनाया' इतने शब्द बोलने पर भी आकांक्षा रहती है कि– 'क्या बनाया'? इसका उत्तर राजा शब्द देता है। अर्थात 'राजा' बनाया। इस प्रकार '**बनाया**' अपूर्ण क्रिया तथा 'राजा' उसका पूरक है।

अकर्मक क्रियाओं का पूरक कृतपूरक कहलाता है क्योंकि वह कर्ता से सम्बन्धित ही होता है। सकर्मक क्रिया का पूरक कर्मपूरक कहलाता है क्योंकि वह कर्म के अधूरेपन को पूर्ण करता है। इस दृष्टि से उपरोक्त वाक्यों में खिलाड़ी कृतपूरक तथा राजा कर्मपूरक है।

इस प्रकार हिन्दी भाषा में क्रिया का अपना अलग महत्व है। बिना क्रिया के वाक्य अपने में पूर्ण नही होता। आवश्यकता है हिन्दी में क्रिया के सही प्रयोग की। हिन्दी भाषा में क्रिया के सही प्रयोग से हिन्दी व्याकरणसम्मत होगी।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।।
विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।
सब देसन से लै करहू, भाषा माहि प्रचार।।

–भारतेन्दु हरीशचन्द्र

कविता

नदियाँ है अमृत की धारा

कृष्णा काला
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

उदगम यहाँ से भागीरथी का ।
अविरल जिस की धारा है।।
जाकर मिलती यह सागर में ।
जीवन हर एक सवारा हैं।।

स्वेताम्बर ओड़े खडा हिमालय ।
बर्फ पिधलता बनता पानी।।
कल कल करते पर्वतों के शिर्ष से।
बहता सुनाता पथ पथ की कहानी।।

पर्वतो ने हमें अडिगता सिखाई ।
नदियों ने सिखाया चलते रहना।।
मछलियों ने सिखाया हर परिस्थितियों में।
धैर्य बनाके कैसे रहना।।

सुन्दर यहाँ की आबो हवा है।
निश्छल है लोगों के मन ।।
स्वचछ यहाँ जल की एक एक बूदें।
समाता जिस में जलीय जीवन।।

सागर में जन्म हुआ मछलियों का।
फिर नदियों में रहने आई ।।
कठिन डगर पर इन नदियों की ।
हृदय में इसके जगह बनाई।।

वन हमें देते फल व औषधी ।
नदियाँ देती मीठा पानी ।।
रहते इन में असंख्य जीव है।
सबसे सुन्दर मछली रानी।।

कहे तुम संतरंगी इन्द्र धनुष हो।
तन पर बिखरे सोने का पानी।
कोई न जाने प्रकृति को तेरी।
सच में तुम हो जल की रानी।।

हवा में यहाँ के सुगन्ध फूलों की।
नदियों में बहती अमृत की धारा है।।
रहती इन में माहाशीर है।
फूलों को तितलियों का सहारा हे।।

उदगम यहा से भागीरथी का ।
अविरल जिस की धारा है।।
जाकर मिलती यह सागर में।
जीवन हर एक सवारा हैं।।

काँच के घर

प्रेरणा शर्मा
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

काँच के घरों में नन्ही मछलियाँ
अनेको प्रकार के भिन्न है रंग
मनोरंजन मात्र रहा इनका जीवन
तैरना यह चाहे लहरों के संग

देखों मछलियों को कभी ध्यान से
काँच के घर क्या खूब सजायें
आचूली भरजल मे तैरती रहती
जग के मन को बहुत सुहायें

तालाबों का जल या नदियों का पानी
तैरती खेलती यह लहरों के संग
काँच के घर तालाब बने अब
अभिशाप बना क्या इनका रंग

तलहटी में घरों के पत्थर बिछे हैं
पंप बनायें बुलबुले सारे
दुखी मन से तैरती रहती
सभी के मन को लगते प्यारे

काँच को छोड़ हर एक वस्तु
चीन से बनकर भारत में आये
स्वदेशी रह गयी मछली व पानी
भोजन तक इनका चीन बनाये

घरो–घरो में रखी मछलियाँ
परिवार में सबका भाग्य बड़ायें
स्वार्थी कितना मनुष्य हो गया
पिंजरे का दुख जग को कैसे बताये

मोल क्या है आजादी का
कैसे जग को व्यथा बताऊँ
काँच के घर बंधी का जीवन
तालाबों नदियो मे तैरना चाहूँ

संरक्षण

ज्योति पाण्डे
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

बहती नदियाँ या राष्ट्रीय उद्यान हो
प्राणियों का संरक्षण होता रोज
भोजन मात्र नहीं जीव का जीवन
मनुष्य बदले कब अपनी सोच

कितनी सुन्दर धरा हमारी
वन उपवन बहती नदियाँ सारी
अनेको जीव व मछली रहती
मनुष्य प्रकृति से डर है कहती

धूप एक सी एक सा पानी
उर्जा सभी को या प्यास बुझाए
प्रकृति जीव–जीव की समझा
मनुष्य की प्रकृति समझ न पाए

जीवन उपजा सागरों के जल में
जीव धरा में फिर रहनें आया
एक ही वृक्ष के सभी बीज तो
मनुष्य प्रकृति को क्यों भिन्न बनाया

खारा जल या मिठा पानी
संसार असंख्य जीवों का बसता
जब तक मनुष्य आखों से ओझल
हर एक जीव जीवन भर हसता

जंगलों में वृक्ष या नदियों में पानी
पक्षियो का घर या रहती मछली रानी
उड़े अम्बर पर या नदियों में घूमे
बिना मनुष्य हस्तक्षेप सब झूमे

नदियो की धारा अविरल बहती
अनेको प्रकार की मछली रहती
कैसा समय इस धरा में आया
संरक्षण इनका जल में पाया

कार्टून

परवीन पुत्र
कृषि अनुसंधान भवन–II, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

तुम्हें इस तरह आने का ज़रूरत नहीं था। तुम्हारा असली जात प्रमाणपत्र ही इंटरव्यू बोर्ड के लिए काफ़ी था।
Pravin P.

मुसकुराओ!
बेटा, हिलो मत, वह हमारा तस्वीर खींच रहा है।

साहब, उसको मछली का व्यवहार अध्ययन के लिए भेजा था, लेकिन वह कह रहा है कि मछली उस के सात ठीक से व्यवहार नही कर रहा है।
Ravin.P.

RESEARCH LAB
Ravin.P.
युरेखा ! मेरा पहला टेस्ट-ट्यूब झींगा !

जब से यह *मेजर* बने तब से केवल *मेजर कार्प* ही खाता है।

तुमहारा भविष्य बहुत खराब लगता है।
FINISTRY
Pravin. P.

रिपोर्ट, रिपोर्ट, रिपोर्ट, वार्षिक रिपोर्ट, अर्ध वार्षिक रिपोर्ट, मासिक रिपोर्ट, साप्ताहिक रिपोर्ट, और अब मेरे साहब को दैनिक रिपोर्ट चाहिए।
Pravin. P.

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
भीमताल 263136, नैनीताल, उत्तराखण्ड, भारत
E-mail: dcfrin@gmail.com, director.dcfr@icar.gov.in,
Website: www.dcfr.res.in